॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ ऋग्वेद संहिता ॥

॥ ऋग्वेद॥

॥अथ तृतीय मण्डलं॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १ 7

सूक्त २ 15

सूक्त ३ 20

सूक्त ४ 24

सूक्त ५ 28

सूक्त ६ 32

सूक्त ७ 36

सूक्त ८ 40

सूक्त ९ 44

सूक्त १० 47

सूक्त ११ 50

सूक्त १२ 53

सूक्त १३ 56

सूक्त १४ 59

सूक्त १५ 62

सूक्त १६ 65

सूक्त १७ 67

सूक्त १८ 69

सूक्त १९ 71

सूक्त २०..... 73
सूक्त २१..... 75
सूक्त २२..... 77
सूक्त २३..... 79
सूक्त २४ 81
सूक्त २५ 83
सूक्त २६ 85
सूक्त २७ 89
सूक्त २८ 94
सूक्त २९ 96
सूक्त ३०..... 102
सूक्त ३१..... 110
सूक्त ३२..... 118
सूक्त ३३..... 124
सूक्त ३४ 129
सूक्त ३५ 133
सूक्त ३६ 137
सूक्त ३७ 141
सूक्त ३८..... 145
सूक्त ३९..... 149

सूक्त ४०..... 152
सूक्त ४१..... 155
सूक्त ४२ 158
सूक्त ४३ 161
सूक्त ४४ 164
सूक्त ४५..... 166
सूक्त ४६..... 168
सूक्त ४७..... 170
सूक्त ४८ 172
सूक्त ४९ 174
सूक्त ५० 176
सूक्त ५१..... 179
सूक्त ५२ 183
सूक्त ५३ 186
सूक्त ५४ 194
सूक्त ५५..... 201
सूक्त ५६..... 209
सूक्त ५७..... 212
सूक्त ५८ 215
सूक्त ५९ 219

सूक्त ६० 222
सूक्त ६१..... 225
सूक्त ६२ 228

सूक्त १

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि । छंद – त्रिष्टुप

सोमस्य मा तवसं वक्ष्यग्ने वह्निं चकर्थ विदथे यजध्यै ।
देवाँ अच्छा दीद्यद्युङ्क्ष्वे अद्रिं शमाये अग्ने तन्वं जुषस्व ॥१॥

हे अग्निदेव ! आपने यज्ञ में यज्ञादि कार्य के लिए हमें सोमरस का वाहक बनाया है, अतएव हमें समुचित बल भी प्रदान करें । हे अग्निदेव ! हम तेजस्विता पूर्वक, देव शक्तियों के लिए सोमरस निकालने के कार्य में, कूटने वाले पाषाण को नियोजित करके आपकी स्तुतियाँ करते हैं। आप शरीर को पुष्ट करने के लिए इसे ग्रहण करें॥१॥

प्राञ्चं यज्ञं चकृम वर्धतां गीः समिद्भिरग्निं नमसा दुवस्यन् ।
दिवः शशासुर्विदथा कवीनां गृत्साय चित्तवसे गातुमीषुः ॥२॥

हे अग्निदेव ! समिधाओं और हव्यादि द्वारा आपको पुष्ट करते हुए हमने भली प्रकार यज्ञ सम्पन्न किया हैं । हमारी वाणी द्वारा स्तुतियों के प्रभाव का संवर्द्धन हो । देवों ने हम स्तोताओं को यज्ञादि कर्म सिखाया है। अत: हम स्तोता अग्निदेव की स्तुति करने की इच्छा करते हैं॥२॥

मयो दधे मेधिरः पूतदक्षो दिवः सुबन्धुर्जनुषा पृथिव्याः ।
अविन्दन्नु दर्शतमप्स्वन्तर्देवासो अग्निमपसि स्वसृणाम् ॥३॥

ये अग्निदेव मेधावी, विशुद्ध, बल-सम्पन्न और जन्म से ही उत्कृष्ट बन्धुत्व भाव से युक्त हैं। ये द्युलोक और पृथ्वी लोक में सर्वत्र सुख स्थापित करते हैं । प्रवमान धाराओं के जल में गुप्त रूप से स्थित दर्शनीय अग्निदेव को देवों ने यज्ञार्थ खोज निकाला॥३॥

अवर्धयन्त्सुभगं सप्त यह्वीः श्वेतं जज्ञानमरुषं महित्वा ।
शिशुं न जातमभ्यारुरश्वा देवासो अग्निं जनिमन्वपुष्यन् ॥४॥

शुभ्र धन-सम्पदा से युक्त, उत्पन्न अग्नि रूपी ऊर्जा को प्रवाहशील महान् नदियों ने प्रवर्धित किया। जैसे घोड़ी नवजात शिशु को विकसित करती है, उसी प्रकार अग्नि के उत्पन्न होने के बाद देवों ने उसे विकसित-संवर्धित किया॥४॥

शुक्रेभिरङ्गैः रज आततन्वान्क्रतुं पुनानः कविभिः पवित्रैः ।
शोचिर्वसानः पर्यायुरपां श्रियो मिमीते बृहतीरनूनाः ॥५॥

शुभ्रवर्ण तेज के द्वारा अन्तरिक्ष को व्याप्त करके ये अग्निदेव यज्ञ-कर्म सम्पादक यजमान को पवित्र और स्तुत्य तेजों से परिशुद्ध करते हैं। प्रदीप्त ज्वाला रूप आच्छादन को ओढ़कर ये अग्निदेव स्तोताओं को विपुल अन्न और पर्याप्त ऐश्वर्य-सम्पदा से समृद्धि प्रदान करते हैं॥५॥

वव्राजा सीमनदतीरदब्धा दिवो यह्वीरवसाना अनग्नाः ।
सना अत्र युवतयः सयोनीरेकं गर्भं दधिरे सप्त वाणीः ॥६॥

स्वयं नष्ट न होने वाले तथा (जल को हानि न पहुँचाने वाले ये अग्निदेव सब ओर विचरण करते हैं । वस्त्रों से आच्छादित न होने पर भी नग्न न रहने वाली सनातन काल से तरुण, एक ही दिव्य स्रोत से उत्पन्न प्रवहमान जलधाराएँ एक ही गर्भ (अग्नि) को धारण करती हैं॥६॥

स्तीर्णा अस्य संहतो विश्वरूपा घृतस्य योनौ स्रवथे मधूनाम् ।
अस्थुरत्र धेनवः पिन्वमाना मही दस्मस्य मातरा समीची ॥७॥

इस (अग्नि) की नाना रूपों वाली संगठित किरणें जब फैलती हैं, तब पोषक रस के उत्पत्ति स्थान से मधुर वर्षा होती है। सबको तृप्ति देने वाली किरणें यहाँ विद्यमान रहती हैं। इस अग्नि के माता-पिता पृथ्वी और अंतरिक्ष हैं॥७॥

बभ्राणः सूनो सहसो व्यद्यौद्दधानः शुक्रा रभसा वपूंषि ।
श्चोतन्ति धारा मधुनो घृतस्य वृषा यत्र वावृधे काव्येन ॥८॥

हे बल के पुत्र अग्निदेव ! सबके द्वारा धारण किये जाने योग्य आप उज्ज्वल और वेगवान् किरणों द्वारा प्रकाशमान हों। जिस समय स्तोतागण स्तोत्रों से आपको प्रवर्धित करते हैं, उस समय वे मधुर घृत धारायें सिंचित करती हैं अथवा पुष्टिकारक जल धाराएँ बरसती हैं॥८॥

पितुश्चिदूधर्जनुषा विवेद व्यस्य धारा असृजद्वि धेनाः ।
गुहा चरन्तं सखिभिः शिवेभिर्दिवो यह्वीभिर्न गुहा बभूव ॥९॥

अग्निदेव ने जन्म से ही अपने पिता (अन्तरिक्ष) के निचले स्तर जल प्रदेश को ज्ञान लिया। अन्तरिक्ष की जलधारा ने बिजली को उत्पन्न किया। अग्निदेव अपने कल्याणकर मित्रों और द्युलोक की जलराशि के साथ गुह्य रूप में विचरते हैं । (गुह्य रूप में स्थित) उस अग्नि को कोई भी प्राप्त नहीं कर सका॥९॥

पितुश्च गर्भं जनितुश्च बभ्रे पूर्वीरेको अधयत्पीप्यानाः ।
वृष्णे सपत्नी शुचये सबन्धू उभे अस्मै मनुष्ये नि पाहि ॥१०॥

ये अग्निदेव पिता (आकाश) और माता (पृथ्वी) के गर्भ को पुष्ट करते हैं । एक मात्र अग्निदेव अभिवद्भुित ओषधि का भक्षण करते हैं। अभीष्ट वर्षा करने वाले ये अग्निदेव पत्नी सहित याजक के पवित्रकर्ता बन्धु सदृश हैं। हे अग्निदेव ! द्यावा-पृथिवी में हम यजमानों को रक्षित करें॥१०॥

उरौ महाँ अनिबाधे ववर्धापो अग्निं यशसः सं हि पूर्वीः ।
ऋतस्य योनावशयद्दमूना जामीनामग्निरपसि स्वसृणाम् ॥११॥

महान् अग्निदेव अबाध और विस्तीर्ण पृथ्वी में प्रवर्धित होते हैं। वहाँ बहुत अन्नवर्द्धक जल समूह अग्नि को संवर्धित करते हैं। जल के उत्पत्ति स्थान में स्थित अनिदेव परस्पर बहिन रूप नदियों के जल में शान्तिपूर्वक शयन करते हैं॥११॥

अक्रो न बभ्रिः समिथे महीनां दिदृक्षेयः सूनवे भाऋजीकः ।
उदुस्रिया जनिता यो जजानापां गर्भो नृतमो यह्वो अग्निः ॥१२॥

ये अग्निदेव सबके पिता रूप जल के गर्भ में गुह्य-स्थित, मनुष्यों के हितकारी, संग्राम में युद्ध कुशल, अपनी सेना के पोषक, सर्व दर्शनीय तथा अपने तेज से दीप्तिमान् हैं। उन्होंने अपने पुत्र रूप यजमान के लिए पोषण की क्षमता उत्पन्न कीं॥१२॥

अपां गर्भं दर्शतमोषधीनां वना जजान सुभगा विरूपम् ।
देवासश्चिन्मनसा सं हि जग्मुः पनिष्ठं जातं तवसं दुवस्यन् ॥१३॥

उत्तम ऐश्वर्ययुक्त अरणी ने दर्शनीय, विशिष्ट रूपवान् तथा जलों और ओषधियों के गर्भभूत अग्निदेव को उत्पन्न किया है । सम्पूर्ण देवगण भी उस स्तुत्य, बलशाली और नवजात अग्निदेव के पास स्तुतियाँ करते हुए पहुँचे। उन्होंने अग्नि की सम्यक् सेवा की॥१३॥

बृहन्त इद्भानवो भाऋजीकमग्निं सचन्त विद्युतो न शुक्राः ।
गुहेव वृद्धं सदसि स्वे अन्तरपार ऊर्वे अमृतं दुहानाः ॥१४॥

विद्युत् की भाँति अत्यन्त कान्तिमान् महान् सूर्यदेव की किरणे अगाध समुद्र के बीच अमृत रूप जल का दोहन करती हैं। वे किरणें गुहा के समान अपने सदन अन्तरिक्ष में बढ़ती हुई, प्रभायुक्त अग्नि का आश्रय प्राप्त करती हैं॥१४॥

ईळे च त्वा यजमानो हविर्भिरीळे सखित्वं सुमतिं निकामः ।
देवैरवो मिमीहि सं जरित्रे रक्षा च नो दम्येभिरनीकैः ॥१५॥

हे अग्ने ! हम यजमान हव्यादि द्वारा आपकी सम्यक् स्तुति करते हैं। हम उत्तम बुद्ध की कामना करते हुए आपसे मित्रता के लिए प्रार्थना

करते हैं। देवों के साथ आप, हम स्तुति करने वालों की रक्षा करें और दुर्दम्यों से हमारी रक्षा करें॥१५॥

उपक्षेतारस्तव सुप्रणीतेऽग्ने विश्वानि धन्या दधानाः ।
सुरेतसा श्रवसा तुञ्जमाना अभि ष्याम पृतनायूँरदेवान् ॥१६॥

हे उत्तम नियामक देव अग्ने ! आपके आश्रय में रहने वाले हम सम्पूर्ण धनों को धारण करते हुए, आपके अनुग्रह से पुष्ट (समृद्ध होते रहें । हम उत्तम पुष्टिदायक अन्नों से युक्त होकर देव विरोधी शत्रुओं को पराजित कर सकें॥१६॥

आ देवानामभवः केतुरग्ने मन्द्रो विश्वानि काव्यानि विद्वान् ।
प्रति मर्ताँ अवासयो दमूना अनु देवान्रथिरो यासि साधन् ॥१७॥

हे अग्निदेव ! आप देव कार्यों के प्रतीक रूप में अत्यन्त मनोहर दिखाई देते हैं। आप सम्पूर्ण स्तोत्रों के ज्ञाता हैं । आप मनुष्यों को उनके अपने घरों में आश्रय देने वाले हैं। उत्तम रथों से गमन करने वाले आप देवों के कार्य में उनका अनुगमन करते हैं॥१७॥

नि दुरोणे अमृतो मर्त्यानां राजा ससाद विदथानि साधन् ।
घृतप्रतीक उर्विया व्यद्यौदग्निर्विश्वानि काव्यानि विद्वान् ॥१८॥

अविनाशी और दीप्तिमान् अग्निदेव यज्ञ के साधन रूप में प्रयुक्त होते हैं और मनुष्यों के घरों में अधिष्ठित होते हैं । ये सम्पूर्ण स्तोत्रों के ज्ञाता हैं। धृत द्वारा प्रदीप्त काया से अग्निदेव विशेष प्रकाशित होते हैं॥१८॥

आ नो गहि सख्येभिः शिवेभिर्महान्महीभिरूतिभिः सरण्यन् ।

अस्मे रयिं बहुलं संतरुत्रं सुवाचं भागं यशसं कृधी नः ॥१९॥

सर्वत्र विचरणशील हे महान् अग्ने ! आप अपनी मंगलमयी मैत्री और महती रक्षण-सामर्थ्यों के साथ हमारे पास आयें और हमें उपद्रवरहित, उत्तम स्तुति के योग्य, यशस्वी धन विपुल मात्रा में प्रदान करें॥१९॥

एता ते अग्ने जनिमा सनानि प्र पूर्व्याय नूतनानि वोचम् ।
महान्ति वृष्णे सवना कृतेमा जन्मञ्जन्मन्निहितो जातवेदाः ॥२०॥

हे अग्ने ! पुरातन पुरुष रूप में, सनातन और नूतन स्तोत्रों से आपकी स्तुति की जाती है। सभी जन्म लेने वाले प्राणियों में सन्निहित हे शक्तिशाली अग्निदेव ! हमने आपके निमित्त महान् यज्ञों को सम्पन्न किया है॥२०॥

जन्मञ्जन्मन्निहितो जातवेदा विश्वामित्रेभिरिध्यते अजस्रः ।
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम ॥२१॥

सम्पूर्ण प्राणियों में निहित, सर्वभूत-ज्ञाता अग्निदेव, विश्वामित्र वंशजों द्वारा सर्वदा प्रदीप्त होते रहे हैं। हम उस यजनीय अग्नि के कल्याणकारी अनुग्रहों के अनुगत बने रहें॥२१॥

इमं यज्ञं सहसावन्त्वं नो देवत्रा धेहि सुक्रतो रराणः ।
प्र यंसि होतर्बृहतीरिषो नोऽग्ने महि द्रविणमा यजस्व ॥२२॥

हैं बलवान् और उत्तमकर्मा अग्निदेव ! आप हमारे हव्यादि से हर्षित होकर हमारे यज्ञ को सब देवों तक पहुँचायें । हे देवों के आह्वाता

अग्निदेव ! आप हमें विपुल अन्नादि प्रदान करें । हमें प्रभूत धनों से युक्त करें॥२२॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥२३॥

हे अग्निदेव ! आप यज्ञादि कार्य के लिए अनेक सत्कर्मों के लिए और गौओं के पोषण आदि के लिए उत्तम भूमि हमें प्रदान करें । हमारे पुत्र वंश की वृद्धि करने वाले हों । आपकी वह सुमति हमें भी प्राप्त हो॥२३॥

ऋग्वेद - तृतीय मंडल

सूक्त २

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – वैश्वानरोऽग्नि: । छंद – जगती

वैश्वानराय धिषणामृतावृधे घृतं न पूतमग्नये जनामसि ।
द्विता होतारं मनुषश्च वाघतो धिया रथं न कुलिशः समृण्वति ॥१॥

ऋत की वृद्धि करने वाले वैश्वानर अग्निदेव के लिए हमें घृतवत् पवित्र स्तुतियाँ करते हैं। मनुष्य और त्विग्गण देवों के आवाहन कर्ता दोनों रूपों वाले (गार्हपत्य और आहवनीय) अग्नि को अपनी बुद्धि के अनुसार उसी प्रकार सँवारते हैं, जैसे कारीगर रथ को सँवारते हैं॥१॥

स रोचयज्जनुषा रोदसी उभे स मात्रोरभवत्पुत्र ईड्यः ।
हव्यवाळग्निरजरश्चनोहितो दूळभो विशामतिथिर्विभावसुः ॥२॥

वे अग्निदेव जन्म के साथ ही द्यावा-पृथिवीं को प्रकाशित करते हैं। वे अग्निदेव पिता और माता रूप द्यावा-पृथिवीं के स्तुति योग्य पुत्र हैं। वे अग्निदेव हव्यवाहक, अजर, अन्न-धन से पूर्ण, अटल, प्रभापुञ्ज और मनुष्यों में अतिथि के सदृश पूजनीय हैं॥२॥

क्रत्वा दक्षस्य तरुषो विधर्मणि देवासो अग्निं जनयन्त चित्तिभिः ।

रुरुचानं भानुना ज्योतिषा महामत्यं न वाजं सनिष्यन्नुप ब्रुवे ॥३॥

बलसम्पन्न और कर्मकुशल देव पुरुष यज्ञ में कर्म और ज्ञान के प्रभाव से अग्निदेव को उत्पन्न करते हैं। जैसे भार वहन करने वाले अश्व की स्तुति होती है, वैसे ही हम अन्नों की कामना से तेजस्वी, महान् अग्निदेव की स्तुति करते हैं॥३॥

आ मन्द्रस्य सनिष्यन्तो वरेण्यं वृणीमहे अह्वयं वाजमृग्मियम् ।
रातिं भृगूणामुशिजं कविक्रतुमग्निं राजन्तं दिव्येन शोचिषा ॥४॥

स्तुति-योग्य, वरणीय, उज्ज्वल और प्रशंसनीय अन्नों की अभिलाषा से, भृगु-वंशजों के ऐश्वर्य-दाता, अभीष्ट प्रदान करने वाले, प्रज्ञावान् दिव्य तेजों से प्रकाशमान अग्निदेव का हम वरण करते हैं॥४॥

अग्निं सुम्नाय दधिरे पुरो जना वाजश्रवसमिह वृक्तबर्हिषः ।
यतस्रुचः सुरुचं विश्वदेव्यं रुद्रं यज्ञानां साधदिष्टिमपसाम् ॥५॥

यजमान अपने सुख के लिए कुश के आसन बिछाकर, सुचाओं को हाथ में लेकर बैठते हैं । वे अन्न और बल से युक्त, उत्तम, प्रकाशमान, सम्पूर्ण देवों के हितकारी, ताप-नाशक, यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों के इष्ट-साधक अग्निदेव को सबसे आगे स्थापित करते हैं॥५॥

पावकशोचे तव हि क्षयं परि होतर्यज्ञेषु वृक्तबर्हिषो नरः ।
अग्ने दुव इच्छमानास आप्यमुपासते द्रविणं धेहि तेभ्यः ॥६॥

हे पवित्र, दीप्ति-सम्पन्न, होता अग्निदेव ! आपकी परिचर्या की कामना करने वाले यजमान पुरुष श्रेष्ठ यज्ञ स्थान में कुश के आसन बिछाकर स्तुति आदि कर्म करते हैं। उन्हें आप धन प्रदान करें॥६॥

आ रोदसी अपृणदा स्वर्महज्जातं यदेनमपसो अधारयन् ।
सो अध्वराय परि णीयते कविरत्यो न वाजसातये चनोहितः ॥७॥

नवजात अग्नि को यजमानों ने धारण किया, तब अग्नि ने अपने तेजोयुक्त प्रकाश को द्यावा-पृथिवीं और विस्तृत अन्तरिक्ष में संव्याप्त किया। वे अन्न प्रदाता और मेधावी निदेव अन्न प्राप्ति की कामना से यज्ञ के लिए सज्जित अश्व के सदृश चारों ओर से लाये जाते हैं॥७॥

नमस्यत हव्यदातिं स्वध्वरं दुवस्यत दम्यं जातवेदसम् ।
रथीर्ऋतस्य बृहतो विचर्षणिरग्निर्देवानामभवत्पुरोहितः ॥८॥

हे ऋत्विज्ञो ! यह रथी (गतिमान्) और विराट् यज्ञ के द्रष्टा अग्निदेव सब देवों में अग्रणी रूप में स्थापित हुए हैं। ऐसे हव्यभक्षक, उत्तम यज्ञ-संपादक, (दोषों का) दमन करने वाले जातवेद को नमन करते हुए उनकी सेवा करो॥८॥

तिस्रो यह्वस्य समिधः परिज्मनोऽग्नेरपुनन्नृशिजो अमृत्यवः ।
तासामेकामदधुर्मर्त्ये भुजमु लोकमु द्वे उप जामिमीयतुः ॥९॥

(हित की) कामना करने वाले अमर देवों ने सर्वत्र संव्याप्त होने वाले अग्निदेव के लिए तीन महान् समिधाओं को पवित्र किया। उन (अग्निदेव का) रक्षण करने वाली तीन (समिधाओं) में से एक को

मृत्युलोक में, शेष दो को उनसे सम्बन्धित दो लोकों (अन्तरिक्ष और द्युलोक) में स्थापित किया॥९॥

विशां कविं विश्पतिं मानुषीरिषः सं सीमकृण्वन्त्स्वधितिं न तेजसे ।
स उद्वतो निवतो याति वेविषत्स गर्भमेषु भुवनेषु दीधरत् ॥१०॥

अन्न की अभिलाषा मानवी प्रजाओं ने अपने पालक मेधावी अग्निदेव को तेजस्वी शस्त्र की भाँति संस्कृत किया। वे अग्निदेव उच्च और निम्न प्रदेशों को व्याप्त करते हुए गमन करते हैं। उन्होंने सम्पूर्ण लोकों में गर्भधारण करवाया (लोकों में उत्पादक क्षमता का विकास किया)॥१०॥

स जिन्वते जठरेषु प्रजज्ञिवान्वृषा चित्रेषु नानदन्न सिंहः ।
वैश्वानरः पृथुपाजा अमर्त्यो वसु रत्ना दयमानो वि दाशुषे ॥११॥

वे वैश्वानर अग्निदेव, जो अत्यन्त बलशाली और अमरणशील हैं, जो यजमान को उत्तम धन और रत्नों को देने वाले हैं, जो अत्यन्त ज्ञान-सम्पन्न और अभीष्टवर्षी हैं, वे मनुष्यों के जठर में प्रवर्धित होते हैं, तो सिंह के सदृश विचित्र गर्जनाएँ करते हैं॥११॥

वैश्वानरः प्रत्नथा नाकमारुहद्दिवस्पृष्ठं भन्दमानः सुमन्मभिः ।
स पूर्ववज्जनयञ्जन्तवे धनं समानमज्मं पर्येति जागृविः ॥१२॥

उत्तम स्तोत्रों से स्तुत्य ये वैश्वानर अग्निदेव अन्तरिक्ष में होते हुए द्युलोक के पृष्ठ पर आरूढ़ होते हैं। पूर्वकाल के सदृश वे प्राणियों के लिए धारण-योग्य पदार्थों को उत्पन्न करते हैं। वे सर्वदा जाग्रत् रहकर सनातन (सुनियोजित) मार्ग से परिभ्रमण करते रहते हैं॥१२॥

ऋतावानं यज्ञियं विप्रमुक्थ्यमा यं दधे मातरिश्वा दिवि क्षयम् ।
तं चित्रयामं हरिकेशमीमहे सुदीतिमग्निं सुविताय नव्यसे ॥१३॥

उन यज्ञपालक, यजनीय, मेधावीं और स्तुत्य द्युलोक-निवासक अग्निदेव को (धरती पर) वायु देव ने धारण किया। विविध मार्गगामी, दीप्तिमान् ज्वाला-युक्त, उत्तम रश्मि-युक्त उन अग्निदेव से हम नवीन और श्रेष्ठ साधनों की याचना करते हैं॥१३॥

शुचिं न यामन्निषिरं स्वर्दृशं केतुं दिवो रोचनस्थामुषर्बुधम् ।
अग्निं मूर्धानं दिवो अप्रतिष्कुतं तमीमहे नमसा वाजिनं बृहत् ॥१४॥

अत्यन्त शुद्ध, यज्ञ में गमनशील, सर्वद्रष्टा, आकाश में केतुरूप गतिवाले, सर्वदा देदीप्यमान, उषाकाल में चैतन्य रहने वाले, अन्नवान् और महान् उन अग्निदेव की हम नमनपूर्वक प्रार्थना करते हैं॥१४॥

मन्द्रं होतारं शुचिमद्वयाविनं दमूनसमुक्थ्यं विश्वचर्षणिम् ।
रथं न चित्रं वपुषाय दर्शतं मनुर्हितं सदमिद्राय ईमहे ॥१५॥

हर्ष प्रदायक, देव-आह्वाता (होता), सर्वदा शुद्ध अकुटिल, शत्रु दमनकारी, स्तुत्य, विश्वद्रष्टा, रथ के सदृश विलक्षण शोभा वाले, दर्शनीय शरीर वाले, मनुष्यों का हित करने वाले उन अग्निदेव से हम ऐश्वर्य की याचना करते हैं॥१५॥

सूक्त ३

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – वैश्वानरोऽग्नि: । छंद – जगती

वैश्वानराय पृथुपाजसे विपो रत्ना विधन्त धरुणेषु गातवे ।
अग्निर्हि देवाँ अमृतो दुवस्यत्यथा धर्माणि सनता न दूदुषत् ॥१॥

ज्ञानी स्तोतागण सन्मार्ग पर अनुगमन के लिए यज्ञों में व्यापक बल संयुक्त वैश्वानर अग्निदेव की सेवा करते हैं। अमर अग्निदेव हव्यादि पहुँचाकर देवों की सेवा करते हैं । अतएव यह सनातन (यज्ञीय) धर्म कभी प्रदूषण पैदा नहीं करता॥१॥

अन्तर्दूतो रोदसी दस्म ईयते होता निषत्तो मनुषः पुरोहितः ।
क्षयं बृहन्तं परि भूषति द्युभिर्देवेभिरग्निरिषितो धियावसुः ॥२॥

सुन्दर अग्निदेव, होता तथा दूत के रूप में द्युलोक एवं पृथ्वी लोक में संचरित होते हैं । देवों द्वारा प्रेरित ज्ञान-सम्पन्न ये अग्निदेव मनुष्यों के बीच पुरोहित रूप में अधिष्ठित होकर अपने तेजों से महान् यज्ञ गृह को सुशोभित करते हैं॥२॥

केतुं यज्ञानां विदथस्य साधनं विप्रासो अग्निं महयन्त चित्तिभिः ।

अपांसि यस्मिन्नधि संदधुर्गिरस्तस्मिन्त्सुम्नानि यजमान आ चके ॥३॥

मेधावीजन यज्ञों के केतु (विज्ञापक) और साधन रूपी अग्नि का पूजन अपने ज्ञान एवं कर्म आदि से करते। हैं ।जिस अग्नि में स्तोताजन अपने कर्मों को अर्पित करते हैं, उसी अग्नि से यजमान सुखादि की कामना करता है॥३॥

पिता यज्ञानामसुरो विपश्चितां विमानमग्निर्वयुनं च वाघताम् ।
आ विवेश रोदसी भूरिवर्पसा पुरुप्रियो भन्दते धामभिः कविः ॥४॥

वे अग्निदेव यज्ञों के पोषणकर्ता पिता रूप हैं । वे स्तोताओं के प्राण-दाता और विजों के हव्यादि वाहक हैं। वे अग्निदेव विविध रूपों में द्यावा-पृथिवीं में प्रविष्ट होते हैं। बहुतों के प्रिय और मेधावी वे अग्निदेव अपने तेज़ से प्रदीप्त होते हैं॥४॥

चन्द्रमग्निं चन्द्ररथं हरिव्रतं वैश्वानरमप्सुषदं स्वर्विदम् ।
विगाहं तूर्णिं तविषीभिरावृतं भूर्णिं देवास इह सुश्रियं दधुः ॥५॥

चन्द्र की तरह (आनंदित करने वाले) अग्निदेव, तेजस्वी रथ वाले, शीघ्र कर्म करने वाले, जलों में निवास करने वाले और सर्वज्ञाता हैं। उन सर्वत्र व्याप्त होने वाले, शीघ्र गमनकारी, अनेक बलों से युक्त, भरण-पोषण कर्ता और उत्तम सुषमा युक्त वैश्वानर अग्निदेव को देवों ने इस लोक में स्थापित किया॥५॥

अग्निर्देवेभिर्मनुषश्च जन्तुभिस्तन्वानो यज्ञं पुरुपेशसं धिया ।
रथीरन्तरीयते साधदिष्टिभिर्जीरो दमूना अभिशस्तिचातनः ॥६॥

यज्ञ के साधन रूप अग्निदेव कर्म कुशल ऋत्विजों द्वारा संचालित यजमानों के यज्ञ को सम्पादित करते हैं । सर्वत्र गतिमान् , शीघ्रगामी, दानशील, शत्रुनाशक अग्निदे द्यावा-पृथिवी के मध्य गमन करते हैं॥६॥

अग्ने जरस्व स्वपत्य आयुन्यूर्जा पिन्वस्व समिषो दिदीहि नः ।
वयांसि जिन्व बृहतश्च जागृव उशिग्देवानामसि सुक्रतुर्विपाम् ॥७॥

हम दीर्घ आयु और उत्तम पुत्रादि की प्राप्ति के लिए अग्निदेव की स्तुति करते हैं। हे अग्निदेव ! आप हमें बल से पूर्ण करें । हमें अन्न आदि प्रदान करें । हे चैतन्य अग्निदेव ! आप महान् यजमान को पूर्णायु से युक्त करें, क्योंकि आप उत्तम कर्म करने वाले तथा सत्पुरुषों एवं देवों के प्रिय हैं॥७॥

विश्पतिं यह्वमतिथिं नरः सदा यन्तारं धीनामुशिजं च वाघताम् ।
अध्वराणां चेतनं जातवेदसं प्र शंसन्ति नमसा जूतिभिर्वृधे ॥८॥

मनुष्य अपनी समृद्धि के लिए पालक रूप, महान्, अतिथि के सदृश पूजनीय, बुद्धि के प्रेरक, ऋत्विजों के प्रिय, यज्ञों के प्राण-स्वरूप, जातवेदा अग्निदेव को नमनपूर्वक पूजन करते हैं॥८॥

विभावा देवः सुरणः परि क्षितीरग्निर्बभूव शवसा सुमद्रथः ।
तस्य व्रतानि भूरिपोषिणो वयमुप भूषेम दम आ सुवृक्तिभिः ॥९॥

स्तुत्य, उत्तम रथी, दीप्तिमान्, दिव्यगुण सम्पन्न अग्निदेव अपने बल से सम्पूर्ण प्रजाओं को व्याप्त करते हैं। हम घरों में स्थित होकर अनेकों

के पोषक अग्निदेव के सम्पूर्ण कर्मों को अपने उत्तम स्तोत्रों से विभूषित करते हैं।॥९॥

वैश्वानर तव धामान्या चके येभिः स्वर्विदभवो विचक्षण ।
जात आपृणो भुवनानि रोदसी अग्ने ता विश्वा परिभूरसि त्मना ॥१०॥

हे दूरदर्शी वैश्वानर अग्निदेव ! आप जिन तेजों के द्वारा सर्वज्ञाता हुए, उनकी हम स्तुति करते हैं। हे अग्निदेव ! आपने उत्पन्न होकर ही द्यावा-पृथिवीं और सम्पूर्ण लोकों को प्रकाश से पूर्ण किया है । आप अपनी शक्ति से सम्पूर्ण जनों को घेर लेने में समर्थ हैं॥१०॥

वैश्वानरस्य दंसनाभ्यो बृहदरिणादेकः स्वपस्यया कविः ।
उभा पितरा महयन्नजायताग्निर्द्यावापृथिवी भूरिरेतसा ॥११॥

वैश्वानर अग्निदेव के उत्तम कर्म से यजमानों को महान् ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है । उत्तम यज्ञादि कर्म की इच्छा से वे एकमात्र मेधावी अग्निदेव यजमानों को धनादि दान कर देते हैं । वे अग्निदेव अपने प्रचुर बल से दोनों माता-पिता रूप द्यावा-पृथिवी को प्रतिष्ठा प्रदान करते हुए उत्पन्न हुए॥११॥

सूक्त ४

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – आप्रीसूक्तं । छंद – त्रिष्टुप

समित्समित्सुमना बोध्यस्मे शुचाशुचा सुमतिं रासि वस्वः ।
आ देव देवान्यजथाय वक्षि सखा सखीन्त्सुमना यक्ष्यग्ने ॥१॥

समिधाओं से भली प्रकार प्रदीप्त हे अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ मन से हमें चैतन्य करें । अतिशय पवित्र तेज से युक्त होकर हमें उल्लसित मन से धनादि प्रदान करें । हे अग्निदेव ! आप देवों को यज्ञ के लिए बुलाकर लायें । आप देवों के सखा रूप हैं। आप प्रसन्न मन से मित्र देवों का यजन करें॥१॥

यं देवासस्त्रिरहन्नायजन्ते दिवेदिवे वरुणो मित्रो अग्निः ।
सेमं यज्ञं मधुमन्तं कृधी नस्तनूनपाद्घृतयोनिं विधन्तम् ॥२॥

वरुण, मित्र, अग्नि आदि देव जिस तनूनपात् यज्ञदेव की नित्यप्रति दिन में तीन बार पूजा करते हैं, वे देव घृत के आधार पर पुष्ट होने वाले, देवों को तुष्ट करने वाले इस यज्ञ को मधुरता से परिपूर्ण करें॥२॥

प्र दीधितिर्विश्ववारा जिगाति होतारमिळः प्रथमं यजध्यै ।

अच्छा नमोभिर्वृषभं वन्दध्यै स देवान्यक्षदिषितो यजीयान् ॥३॥

हमारी स्तुतियाँ सर्वप्रथम वरणीय होता अग्निदेव के पास गमन करें। वन्दना करने के लिए हम उन बलशाली अग्निदेव के पास स्तुतियों के साथ गमन करें । वे हमारे द्वारा प्रेरित होकर पूजनीय देवों को यजन करें॥३॥

ऊर्ध्वो वां गातुरध्वरे अकार्यूर्ध्वा शोचींषि प्रस्थिता रजांसि ।
दिवो वा नाभा न्यसादि होता स्तृणीमहि देवव्यचा वि बर्हिः ॥४॥

दिव्य नाभि (यज्ञ कुण्ड) के मध्य होता (अग्नि) स्थापित है। हम देव से युक्त (अग्नि अथवा मंत्र के साथ) कुशों को (प्रज्वलन के लिए फैलाते हैं । तुम दोनों की ज्वालाएँ अन्तरिक्ष में बहुत ऊपर तक पहुँच गयी हैं । यज्ञ में हमने ऊर्ध्वगति देने वाले मार्ग का ही आश्रय लिया है॥४॥

सप्त होत्राणि मनसा वृणाना इन्वन्तो विश्वं प्रति यन्नृतेन ।
नृपेशसो विदथेषु प्र जाता अभीमं यज्ञं वि चरन्त पूर्वीः ॥५॥

यज्ञ से समस्त जगत् को पुष्ट करने वाले देवगण, स्वयं मन से इच्छा करते हुए, सप्त होता युक्त यज्ञ की ओर गमन करते हैं। यज्ञों में मनुष्य सदृश रूप वाले बहुत से देवगण प्रकट होकर यज्ञ के चारों ओर विचरण करते हैं॥५॥

आ भन्दमाने उषसा उपाके उत स्मयेते तन्वा विरूपे ।
यथा नो मित्रो वरुणो जुजोषदिन्द्रो मरुत्वाँ उत वा महोभिः ॥६॥

स्तुति किये जाने योग्य, भिन्न रूप वाली होकर भी समीप रहने वाली उषा और रात्रि प्रकाशित शरीरों से आगमन करें । मित्र, वरुण और मरुतों से युक्त इन्द्रदेव जिस रूप से हम पर अनुग्रह करते हैं, उसी रूप को वे दोनों भी तेज से युक्त होकर धारण करे॥६॥

दैव्या होतारा प्रथमा न्यृञ्जे सप्त पृक्षासः स्वधया मदन्ति ।
ऋतं शंसन्त ऋतमित्त आहुरनु व्रतं व्रतपा दीध्यानाः ॥७॥

दिव्य और प्रधान अग्नि रूप दोनों होताओं को हम तृप्त करते हैं। अन्नवान् और यज्ञ की इच्छावाले सात ऋत्विज् भी इन दोनों को हविष्यान्न से हर्षित करते हैं। वे व्रतपालक और तेजस्वी ऋत्विग्गण "यज्ञादि व्रतों का अनुगमन ही सत्य है"-ऐसा कहते हैं॥७॥

आ भारती भारतीभिः सजोषा इळा देवैर्मनुष्येभिरग्निः ।
सरस्वती सारस्वतेभिरर्वाक्तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तु ॥८॥

भरण करने वाली (सूर्य की) शक्ति के साथ भारती देवी हमारे यज्ञ में आयें। मनुष्य जनों (यज्ञादि कर्मकर्ता) के साथ इला देवी भी इस दिव्य अग्नि के पास आयें । सारस्वत वाक् शक्ति के साथ सरस्वती देवी भी आयें । ये तीनों देवियाँ आकर इन कुश के आसनों पर अधिष्ठित हों॥८॥

तन्नस्तुरीपमध पोषयित्नु देव त्वष्टर्वि रराणः स्यस्व ।
यतो वीरः कर्मण्यः सुदक्षो युक्तग्रावा जायते देवकामः ॥९॥

हे त्वष्टादेव ! आप उल्लसित मन से हमें बल और पुष्टि युक्त वह वीर्य प्रदान करें, जिससे हमें वीर, कर्मट, कौशल युक्त, सोम को सिद्ध करने वाला और देवत्व प्राप्ति की कामना वाला पुत्र उत्पन्न हो॥९॥

वनस्पतेऽव सृजोप देवानग्निर्हविः शमिता सूदयाति ।
सेदु होता सत्यतरो यजाति यथा देवानां जनिमानि वेद ॥१०॥

हे वनों के स्वामी ! आप देवों को हमारे पास लायें। पाप-नाशक अग्निदेव हमारी हवियों को देवों तक पहुँचायें । वह सत्यव्रती अग्निदेवों के आह्वाता हैं, क्योंकि वे ही देवों के सभी कर्मों को जानते हैं॥१०॥

आ याह्यग्ने समिधानो अर्वाङिन्द्रेण देवैः सरथं तुरेभिः ।
बर्हिर्न आस्तामदितिः सुपुत्रा स्वाहा देवा अमृता मादयन्ताम् ॥११॥

हे अग्निदेव ! आप भली प्रकार समिधाओं से युक्त होकर इन्द्रदेव और शीघ्र गमनकारी देवों के साथ एक रथ पर बैठकर हमारी ओर आगमन करें । उत्तम पुत्रों वाली अदिति हमारे कुशों पर बैठे। उत्तम आहुतियों से अमर देवगण तृप्त हों॥११॥

सूक्त ५

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि। छंद – त्रिष्टुप

प्रत्यग्निरुषसश्चेकितानोऽबोधि विप्रः पदवीः कवीनाम् ।
पृथुपाजा देवयद्भिः समिद्धोऽप द्वारा तमसो वह्निरावः ॥१॥

अग्निदेव उषा को जानते हैं ।ये मेधावी अग्निदेव क्रान्तदर्शी ज्ञानियों के मार्ग पर जाने के लिए चैतन्य होते हैं। अत्यन्त तेजस्वी ये देव देवत्व की अभिलाषा वाले व्यक्तियों द्वारा प्रदीप्त होकर अन्धकार से मुक्ति दिलाते हैं॥१॥

प्रेद्वग्निर्वावृधे स्तोमेभिर्गीर्भिः स्तोतृणां नमस्य उक्थैः ।
पूर्वीर्ऋतस्य संदृशश्चकानः सं दूतो अद्यौदुषसो विरोके ॥२॥

ये पूज्य अग्निदेव स्तोताओं की वाणी, मंत्रों और स्तोत्रों से प्रवृद्ध होते हैं। देवों के दूतरूप अग्निदेव अनेक यज्ञों में दीप्तिमान् होने की इच्छा से चैतन्य होकर उषाकाल में विशेष प्रकाशमान होते हैं॥२॥

अधाय्यग्निर्मानुषीषु विक्ष्वपां गर्भो मित्र ऋतेन साधन् ।
आ हर्यतो यजतः सान्वस्थादभूदु विप्रो हव्यो मतीनाम् ॥३॥

यजमानों के मित्ररूप अग्निदेव यज्ञ से उनके अभीष्ट को सिद्ध करने वाले हैं। जलों के गर्भ में रहने वाले अग्निदेव मनुष्यों के बीच स्थापित किये जाते हैं । इष्ट और पूज्य अग्निदेव उच्च स्थान पर स्थित होते हैं । वे मेधावी अग्निदेव स्तुतियों और हव्यादि द्वारा यजन के योग्य हैं॥३॥

मित्रो अग्निर्भवति यत्समिद्धो मित्रो होता वरुणो जातवेदाः ।
मित्रो अध्वर्युरिषिरो दमूना मित्रः सिन्धूनामुत पर्वतानाम् ॥४॥

ये अग्निदेव समिधाओं से जाग्रत् होते हैं, उस समय वे मित्र होते हैं। वे ही मित्र, होता और सर्वभूत ज्ञाता वरुण हैं । वे ही मित्र,दानशील अध्वर्यु और प्रेरक वायु स्वरूप हैं। वे ही नदियों और पर्वतों के भी मित्र होते हैं॥४॥

पाति प्रियं रिपो अग्रं पदं वेः पाति यह्वश्चरणं सूर्यस्य ।
पाति नाभा सप्तशीर्षाणमग्निः पाति देवानामुपमादमृष्वः ॥५॥

ये सुशोभित अग्निदेव विस्तृत पृथ्वी के प्रीतिकर और श्रेष्ठ स्थान की रक्षा करते हैं। महान् सूर्यदेव के परिभ्रमण स्थान की रक्षा करते हैं । अन्तरिक्ष के मध्य मरुद्गणों की रक्षा करते हैं और देवों को प्रमुदित करने वाले यज्ञादि कर्मों की रक्षा करते हैं॥५॥

ऋभुश्चक्र ईड्यं चारु नाम विश्वानि देवो वयुनानि विद्वान् ।
ससस्य चर्म घृतवत्पदं वेस्तदिदग्नी रक्षत्यप्रयुच्छन् ॥६॥

अग्निदेव के प्रसुप्त रहने पर भी उनका रूप तेजस्वी होता है । वे सम्पूर्ण महान् कार्यो के ज्ञाता, दीप्तिमान् अग्निदेव प्रशंसनीय और

सुन्दर जल को उत्पन्न करते हैं तथा तत्परतापूर्वक उसकी रक्षा करते हैं॥६॥

आ योनिमग्निर्घृतवन्तमस्थात्पृथुप्रगाणमुशन्तमुशानः ।
दीद्यानः शुचिर्ऋष्वः पावकः पुनःपुनर्मातरा नव्यसी कः ॥७॥

तेजस्वी और स्तुत्य ये अग्निदेव स्वेच्छा से अपने प्रिय गर्भस्थान में अधिष्ठित होते हैं । ये दीप्तिमान् , शुद्ध, महान् और पवित्र अग्निदेव अपने माता-पिता अर्थात् पृथ्वी और द्युलोक को बार-बार नवीनता प्रदान करते हैं॥७॥

सद्यो जात ओषधीभिर्ववक्षे यदी वर्धन्ति प्रस्वो घृतेन ।
आप इव प्रवता शुम्भमाना उरुष्यदग्निः पित्रोरुपस्थे ॥८॥

जन्म के साथ ही ये अग्निदेव जब ओषधियों द्वारा धारण किये जाते हैं, तब मार्ग में प्रवाहित जल के समान शुभ ओषधियाँ जल से पोषित होकर फलदायक होती हैं । ये अग्निदेव अपने माता-पिता पृथ्वी और द्यु के मध्य बढ़ते हुए हमारी रक्षा करें॥८॥

उदु ष्टुतः समिधा यह्वो अद्यौद्वर्ष्मन्दिवो अधि नाभा पृथिव्याः ।
मित्रो अग्निरीड्यो मातरिश्वा दूतो वक्षद्यजथाय देवान् ॥९॥

हमारे द्वारा स्तुत होकर प्रवृद्ध हुए ये अग्निदेव पृथ्वी में प्रतिष्ठित होकर द्युलोक तक प्रकाशित हुए हैं। वे अग्निदेव सबके मित्र स्वरूप, सबके द्वारा स्तुत्य और अरणियों से उत्पन्न होने वाले हैं। वे अग्निदेव देवों के दूत रूप में प्रतिष्ठित होकर हमारे यज्ञ हेतु देवताओं को भली प्रकार बुलाएँ॥९॥

उदस्तम्भीत्समिधा नाकमृष्वोऽग्निर्भवन्नुत्तमो रोचनानाम् ।
यदी भृगुभ्यः परि मातरिश्वा गुहा सन्तं हव्यवाहं समीधे ॥१०॥

जब मातरिश्वा ने भृगुओं के लिए गुहा स्थित हव्य-वाहक अग्नि को प्रज्वलित किया था, तब तेजस्वियों में । शिरोमणि और महान् उन अग्निदेव ने अपने दिव्य तेज से सूर्य को भी स्तंभित कर दिया॥१०॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥११॥

हे अग्निदेव ! आप स्तोताओं के लिए श्रेष्ठ रहने वाली, अनेक कर्मों में प्रयुक्त होने वाली, गौओं को पुष्ट करने वाली भूमि प्रदान करें, पुत्र-पौत्रादि से वंश-वृद्धि होती रहे तथा आपकी उत्तम बुद्धि का लाभ हमें प्राप्त हो॥११॥

सूक्त ६

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

प्र कारवो मनना वच्यमाना देवद्रीचीं नयत देवयन्तः ।
दक्षिणावाड्वाजिनी प्राच्येति हविर्भरन्त्यग्नये घृताची ॥१॥

हे स्तोताओ ! आप मंत्र युक्त स्तोत्रों के साथ ही देवयजन में प्रयुक्त होने वाली सुवा को ले आयें । अन्न से पूर्ण सुवा को दक्षिण दिशा से लाकर पूर्व दिशा में हवि और घृत से परिपूर्ण कर अग्नि की ओर लाया जाता है॥१॥

आ रोदसी अपृणा जायमान उत प्र रिक्था अध नु प्रयज्यो ।
दिवश्चिदग्ने महिना पृथिव्या वच्यन्तां ते वह्नयः सप्तजिह्वाः ॥२॥

हे अग्निदेव ! जन्म के साथ ही आप द्युलोक एवं पृथ्वी को पूर्ण करते हैं । हे यजन योग्य अग्निदेव ! अपनी महिमा से ही आप द्यावा-पृथिवी और अन्तरिक्ष से भी श्रेष्ठ हो गये हैं। आपकी अंश रूप सप्त ज्वालाओं से युक्त किरणें स्तुत्य हों॥२॥

द्यौश्च त्वा पृथिवी यज्ञियासो नि होतारं सादयन्ते दमाय ।

यदी विशो मानुषीर्देवयन्तीः प्रयस्वतीरीळते शुक्रमर्चिः ॥३॥

हे होता अग्निदेव ! जिस समय देवत्व की अभिलाषा द्वारा हविष्यान्न से युक्त होकर प्रजाजन तेजस्वी ज्वालाओं की स्तुति करते हैं, उस समय द्युलोक, पृथिवी और यजनीय देवगण यज्ञादि की सफलता के लिए आपकी स्थापना करते हैं॥३॥

महान्त्सधस्थे ध्रुव आ निषत्तोऽन्तर्द्यावा माहिने हर्यमाणः ।
आस्क्रे सपत्नी अजरे अमृक्ते सबर्दुघे उरुगायस्य धेनू ॥४॥

याजकों के प्रिय महान् अग्निदेव, तेजस्वितापूर्वक द्यावा-पृथिवीं के बीच अपने महिमामय स्थान पर अविचल रूप में स्थित हैं। सपत्नी की भाँति परस्पर जुड़ी हुई अजर-अमृत उत्पादक द्यावा-पृथिवी श्रेष्ठ अग्निदेव की दुधारूगौओं के समान हैं॥४॥

व्रता ते अग्ने महतो महानि तव क्रत्वा रोदसी आ ततन्थ ।
त्वं दूतो अभवो जायमानस्त्वं नेता वृषभ चर्षणीनाम् ॥५॥

हे अग्निदेव ! आप सर्वश्रेष्ठ हैं । आपके कर्म महान् हैं । आपने यज्ञादि कर्मों से द्यावा-पृथिवी को विस्तारित किया है। आप देवों के दूत रूप में प्रतिष्ठित हैं । हे बलशाली अग्निदेव ! आप जन्म से ही याजकों के नेता हैं॥५॥

ऋतस्य वा केशिना योग्याभिर्घृतस्नुवा रोहिता धुरि धिष्व ।
अथा वह देवान्देव विश्वान्त्स्वध्वरा कृणुहि जातवेदः ॥६॥

हे दीप्तिमान् अग्निदेव ! प्रशस्त केश वाले, लगाम वाले, तेजोमय रोहित वर्ण वाले अपने अश्वों को यज्ञ की धुरी से जोड़ें । तदनन्तर सम्पूर्ण देवों को बुला लायें । हे सर्वभूत ज्ञाता अग्निदेव ! उन देवों को हमारे उत्तम यज्ञ से युक्त करें॥६॥

दिवश्चिदा ते रुचयन्त रोका उषो विभातीरनु भासि पूर्वीः ।
अपो यदग्न उशधग्वनेषु होतुर्मन्द्रस्य पनयन्त देवाः ॥७॥

हे अग्निदेव ! जब आप वनों में जल का शोषण करते हैं, उस समय आपकी दीप्ति सूर्य से भी अधिक तेज़ होती है । आप कान्तिमती पुरातन उषा के पीछे प्रतिभाषित होते हैं। विद्वान् स्तोतागण प्रमुदित मन से होतारूप आपकी स्तुति करते हैं॥७॥

उरौ वा ये अन्तरिक्षे मदन्ति दिवो वा ये रोचने सन्ति देवाः ।
ऊमा वा ये सुहवासो यजत्रा आयेमिरे रथ्यो अग्ने अश्वाः ॥८॥

जो देवगण अन्तरिक्ष में हर्षपूर्वक रहते हैं, जो दीप्तिमान् द्युलोक में रहते हैं और जो 'ऊम' संज्ञक यजनीय पितर हैं, वे सभी यहाँ सम्मानपूर्वक आवाहित होते हैं । हे अग्निदेव ! आप अश्वों से युक्त रथ से उन्हें लाएँ॥८॥

ऐभिरग्ने सरथं याह्यर्वाङ्नानारथं वा विभवो ह्यश्वाः ।
पत्नीवतस्त्रिंशतं त्रींश्च देवाननुष्वधमा वह मादयस्व ॥९॥

हे अग्निदेव ! आप उन सभी देवों के साथ एक ही रथ पर अथवा विविध रथों से हमारे पास आयें। आपके अश्व, वहन करने में समर्थ

हैं, तैतीस देवों को उनकी पत्नियों सहित सोमपान के लिए लाएँ और सोमपान से उन्हें प्रमुदित करें॥९॥

स होता यस्य रोदसी चिदुर्वी यज्ञंयज्ञमभि वृधे गृणीतः ।
प्राची अध्वरेव तस्थतुः सुमेके ऋतावरी ऋतजातस्य सत्ये ॥१०॥

अत्यन्त विस्तृत द्यावा-पृथिवी प्रत्येक यज्ञ में जिसकी वृद्धि के लिए स्तुतियाँ करती हैं, वे ही देवों के आवाहनकर्ता अग्निदेव हैं । सुन्दर रूपवती, परिपूर्ण जलवती, सत्यवती द्यावा-पृथिवी यज्ञ के समान ऋत से उत्पन्न उस अग्नि के अनुकूल होकर स्थित है॥१०॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥११॥

हे अग्निदेव ! आप हम स्तोताओं के लिए सर्वदा श्रेष्ठ रहने वाली, अनेक कर्मों में प्रयुक्त होने वाली, गौओं को पुष्ट करने वाली भूमि प्रदान करें । हमारे पुत्र-पौत्रादि से वंश वृद्धि होती रहे । हे अग्निदेव ! आपकी उत्तम बुद्धि का अनुग्रह हमें प्राप्त हो॥११॥

सूक्त ७

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्रः ।
देवता – अग्निः । छंद – त्रिष्टुप

प्र य आरुः शितिपृष्ठस्य धासेरा मातरा विविशुः सप्त वाणीः ।
परिक्षिता पितरा सं चरेते प्र सस्राते दीर्घमायुः प्रयक्षे ॥१॥

पृष्ठ भाग जिनका नीलवर्ण हैं-ऐसे सर्वधारक अग्निदेव की ज्वालाएँ उन्नत उठती हैं, वे मातृ-पितृ रूपा द्यावा-पृथिवी में एवं प्रवहमान सप्त धाराओं में भी प्रविष्ट होती हैं । सर्वत्र व्यापक इन अग्निदेव के साथ द्यावा-पृथिवी भी संचरित होती है। वे दोनों अग्निदेव को दीर्घायु भी प्रदान करते हैं॥१॥

दिवक्षसो धेनवो वृष्णो अश्वा देवीरा तस्थौ मधुमद्वहन्तीः ।
ऋतस्य त्वा सदसि क्षेमयन्तं पर्येका चरति वर्तनिं गौः ॥२॥

द्युलोक में संव्याप्त बलशाली अग्नि के अश्व (गतिशील किरणे) धेनु (पोषण करने वाली) भी हैं। वे अग्निदेव (प्रकृति के) मधुर प्रवाहों में भी स्थिर रहते हैं । हे अग्निदेव ! आप यज्ञ गृह में रहकर अपनी ज्वालाओं को विस्तारित करते हैं। एक गौ (पृथ्वी अथवा वाणी) आपकी परिचर्या करती हैं॥२॥

आ सीमरोहत्सुयमा भवन्तीः पतिश्चिकित्वान्रयिविद्रयीणाम् ।
प्र नीलपृष्ठो अतसस्य धासेस्ता अवासयत्पुरुधप्रतीकः ॥३॥

धनों में उत्कृष्टतम धन-सम्पन्न, ज्ञान-सम्पन्न, अधीश्वर अग्निदेव सुनियोजित अश्वों (समिधाओं) पर आरूढ़ होते हैं। नीले पृष्ठ वाले, विविध प्रतीकों के रूप में अग्निदेव ने इन समिधाओं को सतत प्रयोग के लिए अपने पास रख लिया॥३॥

महि त्वाष्ट्रमूर्जयन्तीरजुर्यं स्तभूयमानं वहतो वहन्ति ।
व्यङ्गेभिर्दिद्युतानः सधस्थ एकामिव रोदसी आ विवेश ॥४॥

बलवती और प्रवाहित धारायें उन महान् त्वष्टा पुत्र अजर, सर्वभूत धारक अग्निदेव को धारण करती हैं । जैसे पुरुष पत्नी के पास जाता है, वैसे अग्निदेव प्रज्वलित होकर अत्यन्त दीप्तिमान् अंगों को पाकर द्यावा-पृथिवीं में व्याप्त होते हैं॥४॥

जानन्ति वृष्णो अरुषस्य शेवमुत ब्रध्नस्य शासने रणन्ति ।
दिवोरुचः सुरुचो रोचमाना इळा येषां गण्या माहिना गीः ॥५॥

उन बलशाली और अहिंसक अग्निदेव के आश्रयरूप सुख को लोग जानते हैं और उनके संरक्षण में आनन्द पूर्वक रहते हैं। जिन अग्निदेव के लिए स्तोताओं की स्तुति रूप वाणी प्रवाहित होती है, वे अग्निदेव आकाश को दीप्तिमान् कर स्वयं भी उत्तम दीप्ति से सुशोभित होते हैं॥५॥

उतो पितृभ्यां प्रविदानु घोषं महो महद्भ्यामनयन्त शूषम् ।

उक्षा ह यत्र परि धानमक्तोरनु स्वं धाम जरितुर्ववक्ष ॥६॥

स्तोताओं ने उत्कृष्टतम पितृ-मातृ रूपा द्यावा-पृथिवी में संव्याप्त अग्निदेव को जानकर, उच्च उद्घोषों युक्त स्तुतियों द्वारा सुख को प्राप्त किया । जल सिंचनशील अग्निदेव रात्रि में आच्छादित अपने तेज को स्तोताओं के निमित्त प्रेरित करते हैं॥६॥

अध्वर्युभिः पञ्चभिः सप्त विप्राः प्रियं रक्षन्ते निहितं पदं वेः ।
प्राञ्चो मदन्त्युक्षणो अजुर्या देवा देवानामनु हि व्रता गुः ॥७॥

पाँच अध्वर्युओं के साथ सात होतागण कान्तियुक्त अग्निदेव के प्रिय स्थान (यज्ञों की रक्षा करते हैं। जो ऋत्विज् पूर्व की ओर मुख करके सोमपान आदि के निमित्त अथक श्रम करते हैं और देवों के व्रतों का अनुगमन करते हैं, उनसे देवगण अतिशय प्रसन्न होते हैं॥७॥

दैव्या होतारा प्रथमा न्यृञ्जे सप्त पृक्षासः स्वधया मदन्ति ।
ऋतं शंसन्त ऋतमित्त आहुरनु व्रतं व्रतपा दीध्यानाः ॥८॥

हम दिव्य और प्रधान अग्निरूप दोनों होताओं को तृप्त करते हैं । अन्नवान् यज्ञ की इच्छा वाले सात ऋत्विज् भी इन दोनों को हविष्यान्न से हर्षित करते हैं । वे व्रतपालक और तेजस्वी अंत्वग्गण "यज्ञादि व्रतों का अनुगमन ही सत्य है" ऐसा कहते हैं॥८॥

वृषायन्ते महे अत्याय पूर्वीर्वृष्णे चित्राय रश्मयः सुयामाः ।
देव होतर्मन्द्रतरश्चिकित्वान्महो देवान्रोदसी एह वक्षि ॥९॥

हे दीप्तिमान् देवों का आवाहन करने वाले अग्निदेव ! आप सब पर प्रकाश से आच्छादित होने वाले, महान् विलक्षण वर्ण वाले और बलवान् हैं । आपकी विविध सुविस्तृत, सर्वत्र गमनशील रश्मियाँ आपको बलशाली बनाती हैं । आप आह्लादक एवं ज्ञानवान् महान् देवों को और द्यावा-पृथिवी को यहाँ ले आएँ॥९॥

पृक्षप्रयजो द्रविणः सुवाचः सुकेतव उषसो रेवदूषुः ।
उतो चिदग्ने महिना पृथिव्याः कृतं चिदेनः सं महे दशस्य ॥१०॥

ये सर्वत्र गमनशील, उत्तम धनवती, उत्तम वाणियों से स्तुत होने वाली, उत्तम किरणों वाली देवी उषा हमें धन से युक्त करती हुई प्रकाशित होती हैं । हे अग्निदेव ! आप अपनी व्यापक महिमा से यजमान के पापों को विनष्ट करें॥१०॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥११॥

हे अग्निदेव ! आप हम स्तोताओं के लिए सर्वदा श्रेष्ठ रहने वाली, अनेक कर्मों में प्रयुक्त होने वाली, गौओं को पुष्ट करने वाली भूमि प्रदान करें। हमारे पुत्र-पौत्रादि से वंश वृद्धि होती रहे । हे अग्निदेव ! आपकी उत्तम बुद्धि से हमें अनुग्रह की प्राप्ति हो॥११॥

सूक्त ८

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – यूप: , ६-१० यूपा, ८ विश्वेदेवा, ११ वश्चन: । छंद – त्रिष्टुप, ३, ७, अनुष्टुप

अञ्जन्ति त्वामध्वरे देवयन्तो वनस्पते मधुना दैव्येन ।
यदूर्ध्वस्तिष्ठा द्रविणेह धत्ताद्यद्वा क्षयो मातुरस्या उपस्थे ॥१॥

हे वनस्पति देव ! देवत्व के अभिलाषी ऋत्विग्गण यज्ञ में आपको दिव्य मधु से (यज्ञीय प्रयोग द्वारा) सिञ्चित करते हैं। आप चाहे उन्नत अवस्था में या पृथ्वी की गोद में पड़े हों; हमें धन प्रदान करें॥१॥

समिद्धस्य श्रयमाणः पुरस्ताद्ब्रह्म वन्वानो अजरं सुवीरम् ।
आरे अस्मदमतिं बाधमान उच्छ्रयस्व महते सौभगाय ॥२॥

प्रज्वलित (अग्नि) होने के पूर्व से ही विद्यमान, ब्रह्मवर्चस् प्रदान करने वाले हे अजर श्रेष्ठ वीर (वनस्पति देव) !आप दूर तक हमारी कुबुद्धि को नष्ट करते हुए हमें सौभाग्य प्रदान करने के लिए उच्च पद पर स्थित हों॥२॥

उच्छ्रयस्व वनस्पते वर्ष्मन्पृथिव्या अधि ।

सुमिती मीयमानो वर्चो धा यज्ञवाहसे ॥३॥

हे वनस्पति देव ! आप पृथ्वी के ऊपर यज्ञ-गृह में उन्नत स्थान पर स्थित होंअपने उत्कृष्ट परिमाण से युक्त हों, यज्ञ का निर्वाह करने वालों को वर्चस् धारण करायें॥३॥

युवा सुवासाः परिवीत आगात्स उ श्रेयान्भवति जायमानः ।
तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः ॥४॥

उत्तम वस्त्रों से लपेटे हुए ये तरुण (वनस्पतिदेव-पुष्ट पौधे) आ गये हैं। ये जन्म से ही उत्तम होते हैं ।देवत्व की कामना वाले मेधावी, अध्ययनशील, दूरदर्शी, विवेकवान् पुरुष मनोयोगपूर्वक इनकी उन्नति करते हैं॥४॥

जातो जायते सुदिनत्वे अह्नां समर्य आ विदथे वर्धमानः ।
पुनन्ति धीरा अपसो मनीषा देवया विप्र उदियर्ति वाचम् ॥५॥

उत्पन्न हुए ये (पादप) मनुष्यों से युक्त इस यज्ञ में वृद्धि पाते हुए दिनों को सुन्दर बनाते हैं । यज्ञ कर्म करने वाले धीर-मनीषी उन्हें पवित्र (दोष मुक्त) बनाते हैं ।देव आराधक विप्र सुन्दर स्तुतियों का पाठ करते हैं॥५॥

यान्वो नरो देवयन्तो निमिम्युर्वनस्पते स्वधितिर्वा ततक्ष ।
ते देवासः स्वरवस्तस्थिवांसः प्रजावदस्मे दिधिषन्तु रत्नम् ॥६॥

हे वनस्पते ! देव कर्म में प्रवृत्त मनुष्यों ने (हवन सामग्री का रूप देने के लिए) आपमें से जिनको (कूटने के लिए) अवट में डाला अथवा

(विभाजित करने के लिए धारदार शस्त्र से काटा है; वे आप सूर्यदेव की भाँति तेजस्वी, दिव्य गुण सम्पन्न (यज्ञ) के साथ स्थित होकर, इस याजक को श्रेष्ठ प्रजाओं से युक्त रत्नादि प्रदान करें॥६॥

ये वृक्णासो अधि क्षमि निमितासो यतस्रुचः ।
ते नो व्यन्तु वार्यं देवत्रा क्षेत्रसाधसः ॥७॥

कुठार से काटे गये (अथवा) ऋत्विजों द्वारा (अवट में) नीचे डाले गये, यज्ञ को सिद्ध करने वाले वे (वनस्पति के अंश) में वरणीय विभूतियाँ प्रदान करें॥७॥

आदित्या रुद्रा वसवः सुनीथा द्यावाक्षामा पृथिवी अन्तरिक्षम् ।
सजोषसो यज्ञमवन्तु देवा ऊर्ध्वं कृण्वन्त्वध्वरस्य केतुम् ॥८॥

उत्तम प्रेरक आदित्यगण, रुद्रगण, वसुदेव, विस्तीर्ण द्यावा-पृथिवीं तथा अन्तरिक्ष और परस्पर प्रेम-भाव संयुक्त देवगण, हमारे यज्ञ की रक्षा करें और यज्ञ के केतु (धूम्र) को उन्नत करें॥८॥

हंसा इव श्रेणिशो यतानाः शुक्रा वसानाः स्वरवो न आगुः ।
उन्नीयमानाः कविभिः पुरस्ताद्देवा देवानामपि यन्ति पाथः ॥९॥

(यज्ञ के संयोग से ऊर्जा रूप में विकसित) सूर्य की तरह शुभ तेज़ युक्त, ऊर्ध्वगति पाते हुए ये (वनस्पति अंश) हमें पंक्तिबद्ध हंसों की तरह दिखाई देते हैं ।ये विद्वानों से भी पहले देवमार्ग से द्युलोक की प्राप्ति करते हैं॥९॥

शृङ्गाणीवेच्छृङ्गिणां सं ददृश्रे चषालवन्तः स्वरवः पृथिव्याम् ।

वाघद्भिर्वा विहवे श्रोषमाणा अस्माँ अवन्तु पृतनाज्येषु ॥१०॥

ये चमकदार वनस्पति खण्ड (यूप रूप में) चषाल के साथ पृथ्वी में स्थापित होकर, पशुओं के सींग की भाँति दिखाई देते हैं। यज्ञ में स्तोताओं की स्तुतियाँ सुनकर, वे सब युद्ध में हमारे रक्षक सिद्ध हों॥१०॥

वनस्पते शतवल्शो वि रोह सहस्रवल्शा वि वयं रुहेम ।
यं त्वामयं स्वधितिस्तेजमानः प्रणिनाय महते सौभगाय ॥११॥

हे वनस्पते ! इस अत्यन्त तीक्ष्ण फरसे ने तुम्हें महान् सौभाग्य के लिए (यज्ञीय प्रयोजन के लिए) विनिर्मित किया है । (यज्ञ के प्रभाव से) आप सैकड़ों शाखाओं से युक्त होकर वर्द्धमान हों और हम भी सहस्रों शाखाओं से युक्त होकर वृद्धि करने वाले हों॥११॥

सूक्त ९

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – बृहती, ९ त्रिष्टुप

सखायस्त्वा ववृमहे देवं मर्तास ऊतये ।
अपां नपातं सुभगं सुदीदितिं सुप्रतूर्तिमनेहसम् ॥१॥

हे श्रेष्ठकर्मा, उत्तम ऐश्वर्य युक्त, निष्पाप, पापनाशक, पानी को नीचे न गिरने देने वाले अग्निदेव ! अपने संरक्षण के लिये हम मनुष्यगण मित्र भाव से आपका वरण करते हैं॥१॥

कायमानो वना त्वं यन्मातृरजगन्नपः ।
न तत्ते अग्ने प्रमृषे निवर्तनं यद्दूरे सन्निहाभवः ॥२॥

हे अग्ने ! आप वनों (समूहों) को आकार देने वाले हैं। आप मातृ रूप जलों के पास (शान्त होकर) जाते हैं । आपका निवृत्त होना हम सहन न करें। आप दूर होकर भी हमारे निकट प्रकट होते हैं॥२॥

अति तृष्टं ववक्षिथाथैव सुमना असि ।
प्रप्रान्ये यन्ति पर्यन्य आसते येषां सख्ये असि श्रितः ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप स्तोताओं की स्तुति सुनकर उन्हें अभीष्ट फल प्रदान करने में अत्यधिक समर्थ हैं । साथ ही आप सदैव प्रसन्न रहते हैं। आप जिन ऋत्विजों के साथ मित्र भाव में स्थित होते हैं, उनमें कुछ (अध्वर्यु आदि) यज्ञादि कर्म में प्रवृत्त होते हैं और शेष चारों ओर बैठकर स्तुति-आदि कर्म करते हैं॥३॥

ईयिवांसमति स्रिधः शश्वतीरति सश्चतः ।
अन्वीमविन्दन्निचिरासो अद्रुहोऽप्सु सिंहमिव श्रितम् ॥४॥

शत्रु सेनाओं के पराभवकारी और जल में छिपे हुए सिंह के समान पराक्रमी, उन अग्निदेव को द्रोह न करने वाले (स्नेह करने वाले) अविनाशी देवों ने प्राप्त किया॥४॥

ससृवांसमिव त्मनाग्निमित्था तिरोहितम् ।
ऐनं नयन्मातरिश्वा परावतो देवेभ्यो मथितं परि ॥५॥

जैसे स्वेच्छाचारी पुत्र को पिता बलात् खींच ले आते हैं, वैसे ही स्वेच्छा से गुह्य (छिपे हुए) अग्नि को मातरिश्वा वायु भलीप्रकार मंथन कर दूरस्थ प्रदेशों से देवों के लिए ले आयें॥५॥

तं त्वा मर्ता अगृभ्णत देवेभ्यो हव्यवाहन ।
विश्वान्यद्यज्ञाँ अभिपासि मानुष तव क्रत्वा यविष्ठ्य ॥६॥

हे मनुष्यों के हितकारी और सर्वदा तरुण अग्निदेव ! आप अपने पराक्रम पूर्ण कर्तृत्वों से सम्पूर्ण यज्ञों के पालनकर्ता हैं । हे हव्यादि वहनकर्ता अग्निदेव ! मनुष्यों ने आपको देवों के लिए ग्रहण किया है ।६॥

तद्भद्रं तव दंसना पाकाय चिच्छदयति ।
त्वां यदग्ने पशवः समासते समिद्धमपिशर्वरे ॥७॥

हे अग्निदेव ! जब रात्रि में आप प्रज्वलित होते हैं, तो पशु भी आकर आपके समीप बैठते हैं । आपका यह कल्याणकारी कर्म बालवत् अज्ञानी को भी पूजादि के लिए प्रेरित करता है॥७॥

आ जुहोता स्वध्वरं शीरं पावकशोचिषम् ।
आशुं दूतमजिरं प्रत्नमीड्यं श्रुष्टी देवं सपर्यत ॥८॥

हे ऋत्विजो ! पवित्र दीप्तिमान् काष्ठों में सोये हुए, उत्तम यज्ञ-सम्पादक अग्निदेव की हव्यादि द्वारा परिचर्या करें । उन सर्वत्र व्याप्त, दूत-रूप, शीघ्र गमनशील, चिरपुरातन, बहुस्तुत, दीप्तिमान् अग्निदेव का शीघ्र पूजन करें।॥८॥

त्रीणि शता त्री सहस्राण्यग्निं त्रिंशच्च देवा नव चासपर्यन् ।
औक्षन्घृतैरस्तृणन्बर्हिरस्मा आदिद्धोतारं न्यसादयन्त ॥९॥

तीन हजार तीन सौ उन्तालीस देवों ने अग्निदेव की पूजा की है, उन्हें घृत से सिञ्चित किया है और उनके लिए कुश का आसन बिछाया है । फिर उन सबने उन्हें होता रूप में वरण कर, उस पर विराजित किया है॥९॥

सूक्त १०

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – उषणिक

त्वामग्ने मनीषिणः सम्राजं चर्षणीनाम् ।
देवं मर्तास इन्धते समध्वरे ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप प्रजाओं के अधीश्वर और दीप्तिमान् हैं। आपको मेधावीजन यज्ञ में सम्यक् रूप से प्रदीप्त करते हैं॥१॥

त्वां यज्ञेष्वृत्विजमग्ने होतारमीळते ।
गोपा ऋतस्य दीदिहि स्वे दमे ॥२॥

हे अग्निदेव ! आप होतारूप और ऋत्विजरूप हैं । यज्ञों में आपकी स्तुति की जाती है । यज्ञ के रक्षकरूप में आप अपने यज्ञ-गृह में प्रदीप्त हों॥२॥

स घा यस्ते ददाशति समिधा जातवेदसे ।
सो अग्ने धत्ते सुवीर्यं स पुष्यति ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप सर्वभूत ज्ञाता हैं । जो यजमान आपके निमित्त समिधायें देता है, वह सुनिश्चित ही उत्तम पराक्रमी पुत्र को प्राप्त करता है और पशु आदि ऐश्वर्य से समृद्ध होता हैं॥३॥

स केतुरध्वराणामग्निर्देवेभिरा गमत् ।
अञ्जानः सप्त होतृभिर्हविष्मते ॥४॥

यज्ञों में केतुस्वरूप गतिवाले अग्निदेव, सात होताओं द्वारा घृताभिषिक्त होकर हवि-दाता यजमानों के पास देवों के साथ पधारें॥४॥

प्र होत्रे पूर्व्यं वचोऽग्नये भरता बृहत् ।
विपां ज्योतींषि बिभ्रते न वेधसे ॥५॥

है ऋत्विजो ! आप, मेधावानों में तेजों के धारण-कर्ता, जन-जन के विधाता, देवों के आह्वाता अग्निदेव के लिए महान् और पुरातन स्तोत्रों का उच्चारण करें॥५॥

अग्निं वर्धन्तु नो गिरो यतो जायत उक्थ्यः ।
महे वाजाय द्रविणाय दर्शतः ॥६॥

महान् अन्न और धन की प्राप्ति के लिए ये अग्निदेव प्रज्वलित होकर दर्शनीय होते हैं। जिन स्तुतिवचनों से वे प्रशंसित होते हैं, हमारे वे वचन उन अग्निदेव को प्रवर्धित करें॥६॥

अग्ने यजिष्ठो अध्वरे देवान्देवयते यज ।
होता मन्द्रो वि राजस्यति स्रिधः ॥७॥

यज्ञ में पूजनीय, देवों को बुलाने वाले, शत्रुजयी हे अग्निदेव ! आप याजकों एवं देवों के (कल्याण) हेतु यज्ञ प्रक्रिया सम्पन्न करते हुए सुशोभित होते हैं॥७॥

स नः पावक दीदिहि द्युमदस्मे सुवीर्यम् ।
भवा स्तोतृभ्यो अन्तमः स्वस्तये ॥८॥

हे पावन बनाने वाले अग्निदेव ! आप हमें दीप्तिमान् एवं उत्तम तेजोयुक्त ऐश्वर्य प्रदान करें और स्तोताओं के कल्याण के लिए उनके पास जायें॥८॥

तं त्वा विप्रा विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते ।
हव्यवाहममर्त्यं सहोवृधम् ॥९॥

हे अग्निदेव ! आप हविवाहक, अमरणशील, मंथनरूप बल से संवर्धित होते हैं। प्रबुद्ध, मेधावी, स्तोताजन आपको सम्यक् रूप से प्रदीप्त करते हैं॥९॥

सूक्त ११

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – गायत्री

अग्निर्होता पुरोहितोऽध्वरस्य विचर्षणिः ।
स वेद यज्ञमानुषक् ॥१॥

वे अग्निदेव सब यज्ञादि कर्मों के होता, पुरोहित तथा यज्ञ के विशेष द्रष्टा हैं । वे अनवरत चलने वाले यज्ञादि कर्मों के ज्ञाता हैं॥१॥

स हव्यवाळमर्त्य उशिग्दूतश्चनोहितः ।
अग्निर्धिया समृण्वति ॥२॥

हव्यवाहक, अविनाशी, हव्यादि की कामना वाले, देवों के दूत रूप, अन्नों से सबका हित करने वाले वे अग्निदेव विचार शक्ति (मेधा) से सम्पन्न हैं॥२॥

अग्निर्धिया स चेतति केतुर्यज्ञस्य पूर्व्यः ।
अर्थं ह्यस्य तरणि ॥३॥

यज्ञ के केतु रूप, निदेशक, पुरातन वे अग्निदेव अपनी बुद्धि से सबकुछ जानने वाले हैं । इनके द्वारा दिया गया धन ही तारने वाला होता है॥३॥

अग्निं सूनुं सनश्रुतं सहसो जातवेदसम् ।
वह्निं देवा अकृण्वत ॥४॥

बल के पुत्र रूप, सनातन काल से प्रसिद्ध जातवेदा अग्नि को देवों ने हविवाहक बनाया हैं॥४॥

अदाभ्यः पुरएता विशामग्निर्मानुषीणाम् ।
तूर्णी रथः सदा नवः ॥५॥

मानवों के मार्गदर्शक होने से अग्रणी, तत्काल क्रियाशील, रथ के समान गतिशील, चिरयुवा ये अग्निदेव सर्वथा अदम्य हैं॥५॥

साह्वान्विश्वा अभियुजः क्रतुर्देवानाममृक्तः ।
अग्निस्तुविश्रवस्तमः ॥६॥

आक्रामक, शत्रु सेनाओं को परास्त करने वाले, दिव्य गुणों के संवर्धक हे अग्निदेव ! आध प्रचुर अन्न (पोषण) प्रदान करने वाले हैं॥६॥

अभि प्रयांसि वाहसा दाश्वाँ अश्नोति मर्त्यः ।
क्षयं पावकशोचिषः ॥७॥

हविदाता मनुष्य हविवाहक अग्निदेव से, सब प्रकार के अन्नों (पोषण) तथा पावन प्रकाश से युक्त उत्तम आवास की प्राप्ति करते हैं॥७॥

परि विश्वानि सुधिताग्नेरश्याम मन्मभिः ।
विप्रासो जातवेदसः ॥८॥

सर्वभूतज्ञाता (सर्वज्ञ) और मेधावी अग्निदेव से हम उत्तम स्तोत्रों द्वारा सम्पूर्ण वाञ्छित ऐश्वर्य सब ओर से प्राप्त करें॥८॥

अग्ने विश्वानि वार्या वाजेषु सनिषामहे ।
त्वे देवास एरिरे ॥९॥

हे अग्निदेव ! देवों ने आपसे प्रेरणा प्राप्त की, हम भी आपसे प्रेरित होकर वरणीय धन सम्पदा प्राप्त करें॥९॥

सूक्त १२

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इंद्राग्नि: । छंद – गायत्री

इन्द्राग्नी आ गतं सुतं गीर्भिर्नभो वरेण्यम् ।
अस्य पातं धियेषिता ॥१॥

हे इन्द्र एवं अग्निदेव ! हमारी स्तुतियों से प्रभावित (संस्कारित), आकाश से आया हुआ यह श्रेष्ठ सोमरस है। हमारे भक्तिभाव को स्वीकार कर आप इस सोमरस का पान करें॥१॥

इन्द्राग्नी जरितुः सचा यज्ञो जिगाति चेतनः ।
अया पातमिमं सुतम् ॥२॥

हे इन्द्राग्ने ! आप स्तुति करने वालों के सहायक बने । स्तुतियों द्वारा बुलाये गये आप स्फूर्तिदाता एवं यज्ञ के साधनभूत सोमरस का पान करें॥२॥

इन्द्रमग्निं कविच्छदा यज्ञस्य जूत्या वृणे ।
ता सोमस्येह तृम्पताम् ॥३॥

यज्ञीय प्रेरणा से स्तुति करने वालों के लिये योग्य फलदाता इन्द्र और अग्निदेव की हम पूजा करते हैं। वे दोनों इस यज्ञ में सोमरस पान से संतुष्ट हों॥३॥

तोशा वृत्रहणा हुवे सजित्वानापराजिता ।
इन्द्राग्नी वाजसातमा ॥४॥

दुष्ट-दुराचारियों, शत्रुओं का हनन कर हमेशा युद्ध में विजय प्राप्त करने वाले, अपराजेय, साधकों को अपार वैभव प्रदान करने वाले, इन्द्र और अग्निदेव की हम वन्दना करते हैं॥४॥

प्र वामर्चन्त्युक्थिनो नीथाविदो जरितारः ।
इन्द्राग्नी इष आ वृणे ॥५॥

हे इन्द्र और अग्निदेव ! वेदपाठी आपकी प्रार्थना करते हैं, सामवेद गायक आपका गुणगान करते हैं, अन्न (पोषण) प्राप्ति हेतु हम भी आपकी स्तुति करते हैं॥५॥

इन्द्राग्नी नवतिं पुरो दासपत्नीरधूनुतम् ।
साकमेकेन कर्मणा ॥६॥

हे इन्द्राग्ने ! आप दोनों ने संयुक्त होकर रिपुओं के नब्बे नगरों और उनकी विभूतियों को एक बार के आक्रमण से, एक ही समय में कम्पित कर दिया॥६॥

इन्द्राग्नी अपसस्पर्युप प्र यन्ति धीतयः ।
ऋतस्य पथ्या अनु ॥७॥

हे इन्द्र और अग्ने ! श्रेष्ठ कर्म करने वाले लोग सदैव सत्य मार्ग का अनुगमन करते हुए आगे बढ़ते हैं॥७॥

इन्द्राग्नी तविषाणि वां सधस्थानि प्रयांसि च ।
युवोरप्तूर्यं हितम् ॥८॥

हे इन्द्राग्ने ! आपके बल और अन्न संयुक्त रूप से रहते हैं । आपका बल शुभ कर्मों की ओर प्रेरित करने वाला है॥८॥

इन्द्राग्नी रोचना दिवः परि वाजेषु भूषथः ।
तद्वां चेति प्र वीर्यम् ॥९॥

हे इन्द्र और अग्निदेव ! दिव्यगुणों से आलोकित, आप संघर्षों में सफल होने पर शोभायमान होते हैं। यह आपके शौर्य की पहचान हैं॥९॥

सूक्त १३

ऋषि – ऋषभो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – अनुष्टुप

प्र वो देवायाग्नये बर्हिष्ठमर्चास्मै ।
गमद्देवेभिरा स नो यजिष्ठो बर्हिरा सदत् ॥१॥

हे स्तोताओ ! आप इन अग्निदेव के निमित्त उत्तम स्तुति करें, जिससे वे देवों के साथ हमारे पास आये और यजनीय वे अग्निदेव हमारे इस यज्ञ में कुशों पर विराजें॥१॥

ऋतावा यस्य रोदसी दक्षं सचन्त ऊतयः ।
हविष्मन्तस्तमीळते तं सनिष्यन्तोऽवसे ॥२॥

द्यावा-पृथिवी जिन अग्निदेव के वशीभूत हैं । रक्षक देवगण भी जिन अग्निदेव के बल से पोषित होते हैं, धनाभिलाषी, सत्यवान्, हविदाता यजमान अपने संरक्षण के लिए उन अग्निदेव की स्तुति करते हैं॥२॥

स यन्ता विप्र एषां स यज्ञानामथा हि षः ।
अग्निं तं वो दुवस्यत दाता यो वनिता मघम् ॥३॥

वे मेधावान् अग्निदेव यजमानों के नियन्ता हैं । वे यज्ञों के भी नियन्ता हैं । ऐश्वर्यदाता वे अग्निदेव धन देने वाले हैं। अतएव हे ऋत्विजो आप उन अग्निदेव की परिचर्या करें॥३॥

स नः शर्माणि वीतयेऽग्निर्यच्छतु शंतमा ।
यतो नः प्रुष्णवद्वसु दिवि क्षितिभ्यो अप्स्वा ॥४॥

वे अग्निदेव हमारे रक्षण के लिए उपयोग और शांतिदायी आवास प्रदान करें। जहाँ (रहकर) द्युलोक, अंतरिक्ष एवं पृथ्वी में संव्याप्त पुष्टिप्रद वैभव हमें प्राप्त हो॥४॥

दीदिवांसमपूर्व्यं वस्वीभिरस्य धीतिभिः ।
ऋक्काणो अग्निमिन्धते होतारं विश्पतिं विशाम् ॥५॥

स्तोतागण उन देदीप्यमान, प्रतिक्षण नवीन, देवों का आवाहन करने वाले, प्रजापालक अग्निदेव को श्रेष्ठ स्तुतियों द्वारा प्रदीप्त करते हैं॥५॥

उत नो ब्रह्मन्नविष उक्थेषु देवहूतमः ।
शं नः शोचा मरुद्वृधोऽग्ने सहस्रसातमः ॥६॥

हे अग्निदेव ! स्तुतियों के समय आप हमारी रक्षा करें । हे देवों के आह्वाता ! आप मन्त्रोच्चारण में हमारी रक्षा करें । सहस्रों धनों के दाता आप, मरुद्गणों द्वारा वर्द्धित होते हैं। आप हमारे सुखों में वृद्धि करें॥६॥

नू नो रास्व सहस्रवत्तोकवत्पुष्टिमद्वसु ।
द्युमदग्ने सुवीर्यं वर्षिष्ठमनुपक्षितम् ॥७॥

हे अग्ने ! आप हमें पुत्र-पौत्रादि सहित पुष्टिकारक, दीप्तिमान् तेजस्वी, उत्कृष्टतम, अक्षय तथा सहस्र संख्यक धन प्रदान करें॥७॥

सूक्त १४

ऋषि – ऋषभो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

आ होता मन्द्रो विदथान्यस्थात्सत्यो यज्वा कवितमः स वेधाः ।
विद्युद्रथः सहसस्पुत्रो अग्निः शोचिष्केशः पृथिव्यां पाजो अश्रेत् ॥१॥

देवों के आह्वानकर्ता, सुखकारक, सत्यपालक, मेधावियों में श्रेष्ठ, यज्ञकारी, विधाता वे अग्निदेव हमारे यज्ञ में अधिष्ठित हों । वे प्रकाशित रथ-युक्त, ज्योतित केशों वाले, बल के पुत्र अग्निदेव इस पृथ्वी पर अपनी प्रभा को प्रकट करते हैं॥१॥

अयामि ते नमउक्तिं जुषस्व ऋतावस्तुभ्यं चेतते सहस्वः ।
विद्वाँ आ वक्षि विदुषो नि षत्सि मध्य आ बर्हिरूतये यजत्र ॥२॥

हे यज्ञ-सम्पादक अग्निदेव ! हम नमस्कारपूर्वक आपकी स्तुति करते हैं । हे बलवान् और ज्ञानवान् देव ! निवेदित स्तुतियों को आप स्वीकार करें। आप विद्वान् हैं, अतएव विद्वान् देवगणों को अपने साथ ले आयें । हमारे संरक्षण के लिए आप यज्ञ-गृह के मध्य में बिछे कुश के आसन पर विराजमान हों॥२॥

द्रवतां त उषसा वाजयन्ती अग्ने वातस्य पथ्याभिरच्छ ।
यत्सीमञ्जन्ति पूर्व्यं हविर्भिरा वन्धुरेव तस्थतुर्दुरोणे ॥३॥

हे अग्निदेव ! अन्नवती उषा और रात्रि, आपके निमित्त गमन करती हैं। आप वायु मार्ग से आगमन करें । पुरातन जत्विग्गणे आपको हव्यादि द्वारा सिञ्चित करते हैं। एक ही जुए में जुड़ी हुई (परस्पर संयुक्त) उषा और रात्रि हमारे घर में स्थित हों॥३॥

मित्रश्च तुभ्यं वरुणः सहस्वोऽग्ने विश्वे मरुतः सुम्नमर्चन् ।
यच्छोचिषा सहसस्पुत्र तिष्ठा अभि क्षितीः प्रथयन्त्सूर्यो नॄन् ॥४॥

हे बल सम्पन्न अग्निदेव ! मित्र, वरुण और सम्पूर्ण मरुद्गण आपके निमित्त स्तुतियाँ करते हैं । हे बल के पुत्र अग्निदेव ! आप सूर्य की तरह मनुष्यों को श्रेष्ठ पथ दिखाने वाली रश्मियों को विस्तारित कर, अपनी तेजस्विता से स्थित हों॥४॥

वयं ते अद्य ररिमा हि काममुत्तानहस्ता नमसोपसद्य ।
यजिष्ठेन मनसा यक्षि देवानस्रेधता मन्मना विप्रो अग्ने ॥५॥

हे अग्निदेव ! हम कामना युक्त याजक ऊँचे हाथ करके आपको हव्यादि अर्पित करते हैं। हे मेधावान् अग्निदेव ! हमारे व्यादि से सन्तुष्ट होकर आप अपने श्रेष्ठ मन से स्तोत्रों द्वारा देवों का यजन करें॥५॥

त्वद्धि पुत्र सहसो वि पूर्वीर्देवस्य यन्त्यूतयो वि वाजाः ।
त्वं देहि सहस्रिणं रयिं नोऽद्रोघेण वचसा सत्यमग्ने ॥६॥

हे बल के पुत्र अग्ने ! आपकी सनातन रक्षक किरणें देवों की ओर गमन करती हैं और उन्हें अन्नादि भी प्रदान करती हैं । हे अग्निदेव ! आप हमें द्रोहरहित, तेजोमय सहस्रों प्रकार के अक्षय धन प्रदान करें॥६॥

तुभ्यं दक्ष कविक्रतो यानीमा देव मर्तासो अध्वरे अकर्म ।
त्वं विश्वस्य सुरथस्य बोधि सर्वं तदग्ने अमृत स्वदेह ॥७॥

हे बलवान्, मेधावान्, दीप्तिमान् अग्निदेव ! हम मनुष्य यज्ञ में आपके निमित्त हव्यादि कर्मों को निवेदित करते हैं । हे अविनाशी अग्निदेव ! यज्ञ में निवेदित इन हवियों का आरः आस्वादन करें । उत्तम रथ वाले आप यजमानों की रक्षा के निमित्त चैतन्य हों॥७॥

सूक्त १५

ऋषि – कात्य उत्कील:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

वि पाजसा पृथुना शोशुचानो बाधस्व द्विषो रक्षसो अमीवाः ।
सुशर्मणो बृहतः शर्मणि स्यामग्नेरहं सुहवस्य प्रणीतौ ॥१॥

हे अग्ने ! आप अपने वर्द्धमान बल तथा तेजस्विता से, द्वेष करने वाले शत्रुवृत्ति तथा राक्षसी वृत्तिवालों को बाधित करें। हे श्रेष्ठ, सुखदायी, महान्, सुविख्यात अग्निदेव ! हम आपके आश्रय में रहना चाहते हैं॥१॥

त्वं नो अस्या उषसो व्युष्टौ त्वं सूर उदिते बोधि गोपाः ।
जन्मेव नित्यं तनयं जुषस्व स्तोमं मे अग्ने तन्वा सुजात ॥२॥

हे अग्निदेव !आप उषा के प्रकट होने तथा सूर्य के उदित होने पर हमारे संरक्षण के लिए चैतन्य हों ।स्वयमेव उत्पन्न होने वाले आप हमारे स्तोत्रों को उसी प्रकार ग्रहण करें, जैसे पिता अपने नवजात पुत्र को ग्रहण करता है॥२॥

त्वं नृचक्षा वृषभानु पूर्वीः कृष्णास्वग्ने अरुषो वि भाहि ।
वसो नेषि च पर्षि चात्यंहः कृधी नो राय उशिजो यविष्ठ ॥३॥

हे बलशाली अग्निदेव ! आप मनुष्यों के समस्त कर्मों के ज्ञाता हैं। आप अँधेरी रातों में भी बहुत अधिक दीप्तिमान् होते हैं। आपकी ज्वालाएँ विस्तृत होती हैं। हे आश्रयदाता अग्निदेव ! आप हमें दुःख और पापों से पार करें । हे अति युवा अग्निदेव ! हमें ऐश्वर्य-सम्पन्न बनायें॥३॥

अषाळ्हो अग्ने वृषभो दिदीहि पुरो विश्वाः सौभगा संजिगीवान् ।
यज्ञस्य नेता प्रथमस्य पायोर्जातवेदो बृहतः सुप्रणीते ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप अपराजेय और बलशाली हैं । आप शत्रुओं के नगरों और धनों को जीतकर अपनी दीप्तियों से सर्वत्र व्याप्त हों । हे उत्तम प्रेरक और सर्व भूतज्ञाता अग्निदेव ! आप महान् आश्रयदाता और यज्ञ के प्रथम सम्पादन-कर्ता हैं॥४॥

अच्छिद्रा शर्म जरितः पुरूणि देवाँ अच्छा दीद्यानः सुमेधाः ।
रथो न सस्निरभि वक्षि वाजमग्ने त्वं रोदसी नः सुमेके ॥५॥

हे स्तुत्य अग्निदेव ! आप उत्तम, मेधावान् और अपने तेज से दीप्तिमान् हैं । देवों के निमित्त आप सम्पूर्ण सुखकर कर्मों को भली प्रकार सम्पादित करें। आप रथ के सदृश वेगपूर्वक गमन कर, देवों के निमित्त हव्यादि वहन करें और सम्पूर्ण द्यावा-पृथिवी को प्रकाशित करें॥५॥

प्र पीपय वृषभ जिन्व वाजानग्ने त्वं रोदसी नः सुदोघे ।
देवेभिर्देव सुरुचा रुचानो मा नो मर्तस्य दुर्मतिः परि ष्ठात् ॥६॥

हे अभीष्ट वर्षा में समर्थ अग्निदेव ! आप हमें पूर्णता प्रदान करें और विविध अन्नों से पुष्ट करें । उत्तम दीप्तियों से दीप्तिमान् होकर, आप देवों के साथ द्यावा-पृथिवी को उत्तम दोहन योग्य बनायें । अन्यान्य मनुष्यों की दुर्बुद्धि हमारे निकट भी न आये (दुर्बुद्धिग्रस्त होकर हम प्रकृति का स्वार्थ पूर्ण दोहन न करने लगे)॥६॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥७॥

हे अग्निदेव ! हम स्तोताओं के निमित्त श्रेष्ठ रहने वाली, अनेक कर्मों में उपयोगी तथा गौओं को पुष्ट करने वाली भूमि प्रदान करें, हमारे पुत्र-पौत्रादि वंश-वृद्धि में सक्षम हों तथा आपकी उत्तम बुद्ध हमें भी प्राप्त हो॥७॥

सूक्त १६

ऋषि – कात्य उत्कील:
देवता – अग्नि: । छंद – प्रगाथ

अयमग्निः सुवीर्यस्येशे महः सौभगस्य ।
राय ईशे स्वपत्यस्य गोमत ईशे वृत्रहथानाम् ॥१॥

ये अग्निदेव पुरुषार्थ एवं महान् सौभाग्य के स्वामी हैं। ये धनैश्वर्य तथा सुसंतति के स्वामी (देने वाले हैं। गौ (पोषक किरणों, इन्द्रियों अथवा गौ आदि) तथा वृत्र (वृत्रासुर अथवा पुरुषार्थ को आच्छादित कर लेने वाली दुष्प्रवृत्तियों) को नष्ट करने वालों के भी स्वामी हैं॥१॥

इमं नरो मरुतः सश्चता वृधं यस्मिन्नायः शेवृधासः ।
अभि ये सन्ति पृतनासु दूढ्यो विश्वाहा शत्रुमादभुः ॥२॥

हे मरुद्गणो ! आप संग्रामों में पराजित न होकर सदा से शत्रुओं के संहारकर्ता हैं। आप मनुष्यों को बढ़ाने वाले इन अग्निदेव की परिचर्या करें, जिनके चारों ओर सुखवर्द्धक धन-ऐश्वर्य विद्यमान हैं॥२॥

स त्वं नो रायः शिशीहि मीढ्वो अग्ने सुवीर्यस्य ।
तुविद्युम्न वर्षिष्ठस्य प्रजावतोऽनमीवस्य शुष्मिणः ॥३॥

हे प्रचुर धन-सम्पन्न, सुखवर्धक अग्निदेव ! आप हमें धन से समृद्ध करें । श्रेष्ठ सन्तानों सहित आरोग्यप्रद, बलिष्ठ और तेजस्वी अन्नों से पुष्ट करें ।३॥

चक्रिर्यो विश्वा भुवनाभि सासहिश्चक्रिर्देवेष्वा दुवः ।
आ देवेषु यतत आ सुवीर्य आ शंस उत नृणाम् ॥४॥

ये अग्निदेव जगत् के कर्म-संपादक हैं और सम्पूर्ण लोकों में संव्याप्त हैं । वे कर्म-कुशल अग्निदेव हव्यादि वहन कर, देवों के पास गमन करते हैं और देवों को यज्ञ में ले आते हैं। वे मनुष्यों से प्रशंसित होकर उन्हें उत्तम पराक्रम से युक्त करते हैं॥४॥

मा नो अग्नेऽमतये मावीरतायै रीरधः ।
मागोतायै सहसस्पुत्र मा निदेऽप द्वेषांस्या कृधि ॥५॥

हे बल के पुत्र अग्निदेव ! आप हमें दुर्बुद्धि के अधिकार में मत सौपें । हमें वीर पुत्रों से रहित न करें, गों आदि पशुओं से विहीन न करें तथा निन्दनीय न होने दें साथ ही आप हमारे प्रति द्वेष-भाव से मुक्त रहें॥५॥

शग्धि वाजस्य सुभग प्रजावतोऽग्ने बृहतो अध्वरे ।
सं राया भूयसा सृज मयोभुना तुविद्युम्न यशस्वता ॥६॥

हे उत्तम धन-सम्पन्न अग्निदेव ! हम यज्ञ में विपुल सन्तानों से युक्त अन्नादि धन के अधिपति हों । हे महान् धन से युक्त अग्निदेव ! आप हमें सुखकर-यशवर्द्धक प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें॥६॥

सूक्त १७

ऋषि – कतो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

समिध्यमानः प्रथमानु धर्मा समक्तुभिरज्यते विश्ववारः ।
शोचिष्केशो घृतनिर्णिक्पावकः सुयज्ञो अग्निर्यजथाय देवान् ॥१॥

वे अग्निदेव धर्म-धारक, ज्वाला रूप केश वाले, सबके द्वारा वरणीय, समिधाओं से प्रज्वलित, घृत से प्रदीप्त, पवित्रकर्ता और उत्तम यज्ञों के सम्पादक हैं । वे यज्ञ के प्रारम्भ में प्रज्वलित होकर देव-यजन के निमित्त घृतादि से भली प्रकार सिञ्चित होते हैं॥१॥

यथायजो होत्रमग्ने पृथिव्या यथा दिवो जातवेदश्चिकित्वान् ।
एवानेन हविषा यक्षि देवान्मनुष्वद्यज्ञं प्र तिरेममद्य ॥२॥

हे अग्निदेव ! आपने जैसे पृथ्वी को हव्य प्रदान किया, जैसे आकाश को हव्य प्रदान किया; उसी प्रकार हे सब भूतों के ज्ञाता-ज्ञानवान् अग्निदेव ! हमारे इस हवि-द्रव्य द्वारा सम्पूर्ण देवों को यजन करें। मनु के यज्ञ के समान हमारे यज्ञ को भी पूर्ण करें॥२॥

त्रीण्यायूंषि तव जातवेदस्तिस्र आजानीरुषसस्ते अग्ने ।

ताभिर्देवानामवो यक्षि विद्वानथा भव यजमानाय शं योः ॥३॥

हे जातवेदा अग्निदेव ! आपके तीन प्रकार के अन्न (आज्य, ओषधि और सोम) हैं । (एकाह, अहीन और सत्र नामक) तीन उषाएँ आपकी माताएँ हैं। आप उनके द्वारा देवों का यजन करें । सबैको जानने वाले आप, यजमान के लिए सुख और कल्याण देने वाले हों॥३॥

अग्निं सुदीतिं सुदृशं गृणन्तो नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः ।
त्वां दूतमरतिं हव्यवाहं देवा अकृण्वन्नमृतस्य नाभिम् ॥४॥

हे सर्वज्ञाता अग्निदेव ! आप उत्तम दीप्तिमान, उत्तम दर्शनीय और स्तवनीय हैं । हम नमस्कारपूर्वक आपका स्तवन करते हैं । हे गमनशील ज्वाला युक्त और हव्यवाहक अग्निदेव ! देवों ने आपको दूत रूप में प्रतिष्ठित किया है और अमृत का केन्द्र मानकर आपका आस्वादन किया है॥४॥

यस्त्वद्धोता पूर्वो अग्ने यजीयान्द्विता च सत्ता स्वधया च शम्भुः ।
तस्यानु धर्म प्र यजा चिकित्वोऽथा नो धा अध्वरं देववीतौ ॥५॥

हे अग्निदेव ! पहले जो होता उत्तम और मध्यम दो स्थानों पर स्वधा के साथ बैठकर सुखी हुए, उनके धर्म का अनुगमन करते हुए आप यजन करें । तदनन्तर हमारे इस यज्ञ को देवों की प्रसन्नता के निमित्त धारण करें॥५॥

सूक्त १८

ऋषि – कतो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

भवा नो अग्ने सुमना उपेतौ सखेव सख्ये पितरेव साधुः ।
पुरुद्रुहो हि क्षितयो जनानां प्रति प्रतीचीर्दहतादरातीः ॥१॥

हे अग्निदेव ! जिस प्रकार मित्र के प्रति मित्र और अपने पुत्र के प्रति माता-पिता हितैषी होते हैं, उसी प्रकार आप प्रसन्नता के साथ हमारे लिए अनुकूल और हितैषी बनें । इस लोक में मनुष्यों के प्रति मनुष्य अत्यन्त द्रोही हैं, अतएव हमारे विरुद्ध आचरण करने वाले शत्रुओं के प्रतिकूल होकर उन्हें भस्म कर दें॥१॥

तपो ष्वग्ने अन्तराँ अमित्रान्तपा शंसमररुषः परस्य ।
तपो वसो चिकितानो अचित्तान्वि ते तिष्ठन्तामजरा अयासः ॥२॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे समीपस्थ शत्रुओं को भली प्रकार संतप्त करें । हव्यादि न देने वाले और दूसरों की निन्दा करने वालों को संतप्त करें । हे आश्रयदाता और विद्वान् अग्निदेव ! आप चंचल चित्त वालों को संतप्त करें । आपकी अजर किरणें अबाध गति से विकीर्ण हों॥२॥

इध्मेनाग्न इच्छमानो घृतेन जुहोमि हव्यं तरसे बलाय ।
यावदीशे ब्रह्मणा वन्दमान इमां धियं शतसेयाय देवीम् ॥३॥

हे अग्निदेव ! हम श्रेष्ठ कामनाओं सहित आपके वेग और बल के लिए समिधा एवं घृत्त के साथ हविष्यान्न प्रदान करते हैं। स्तोत्रों से आप की स्तुति करते हुए हम धन पर प्रभुत्व पायें। आप हमारे लिए अक्षय धन प्रदान करने के निमित्त हमारी स्तुति को दिव्य बनायें॥३॥

उच्छोचिषा सहसस्पुत्र स्तुतो बृहद्वयः शशमानेषु धेहि ।
रेवदग्ने विश्वामित्रेषु शं योर्मर्मृज्मा ते तन्वं भूरि कृत्वः ॥४॥

बल के पुत्र है अग्निदेव ! आप अपने तेज से दीप्तिमान् हों । आप प्रशंसक विश्वामित्र के वंशजों (विश्व में समस्त मानवों के प्रति मित्रभाव रखने वाले) द्वारा स्तुति किये जाने पर अपार धन-धान्य प्रदान करें। उन्हें आरोग्य और निर्भयता प्रदान करें। यज्ञादि कर्म कर्ता हे अग्निदेव ! हम आपके शरीर को पुनः-पुनः शोधन करते हैं॥४॥

कृधि रत्नं सुसनितर्धनानां स घेदग्ने भवसि यत्समिद्धः ।
स्तोतुर्दुरोणे सुभगस्य रेवत्सृप्रा करस्ना दधिषे वपूंषि ॥५॥

उत्तम दानशील हे अग्निदेव ! आप हमें श्रेष्ठतम धन प्रदान करें। आप भली प्रकार प्रदीप्त होकर याजकों को धन प्रदान करते हैं। समृद्धिशाली स्तोताओं को अपार धन-वैभव प्रदान करने के लिए आप अपने रूपवान् तेजस्वी हाथों (किरणों) को विस्तृत करें॥५॥

सूक्त १९

ऋषि – गाथी कौशिक:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

अग्निं होतारं प्र वृणे मियेधे गृत्सं कविं विश्वविदममूरम् ।
स नो यक्षद्देवताता यजीयान्त्राये वाजाय वनते मघानि ॥१॥

स्तुतिपूर्वक देवताओं का आवाहन करने वाले मेधावान् , ज्ञानवान् अग्निदेव को हम यज्ञ में विशेष रूप से वरण करते हैं। वे पूज्य अग्निदेव हमारे निमित्त देवों का यजन करें । हमें विपुल धन-धान्य प्रदान करने के लिए हमारी हवियों को स्वीकार करें॥१॥

प्र ते अग्ने हविष्मतीमियर्म्यच्छा सुद्युम्नां रातिनीं घृताचीम् ।
प्रदक्षिणिद्देवतातिमुराणः सं रातिभिर्वसुभिर्यज्ञमश्रेत् ॥२॥

हे अग्निदेव ! हम घृत आदि हव्य पदार्थों से परिपूर्ण पात्र को नित्य आपकी ओर प्रेरित करते हैं। देवताओं का आवाहन करने वाले आप, हमारे वैभव को बढ़ाने की कामना से यज्ञ स्थल पर भलीप्रकार उपस्थित हों॥२॥

स तेजीयसा मनसा त्वोत उत शिक्ष स्वपत्यस्य शिक्षोः ।

अग्ने रायो नृतमस्य प्रभूतौ भूयाम ते सुष्टुतयश्च वस्वः ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप जिसकी रक्षा करते हैं, उसका मन अत्यन्त तेजस्वी होता है । आप उसे उत्तम धन, सन्तान प्रदान करें। धन-प्रदाता, उत्तम प्रेरक हे अग्ने ! हम आपके विपुल ऐश्वर्य के संरक्षण में निवास करें और आपकी स्तुतियाँ करते हुए धन के स्वामी बनें॥३॥

भूरीणि हि त्वे दधिरे अनीकाग्ने देवस्य यज्यवो जनासः ।
स आ वह देवतातिं यविष्ठ शर्धो यदद्य दिव्यं यजासि ॥४॥

हे अग्निदेव देवों की पूजा-यज्ञादि करने वाले मनुष्यों ने आपमें प्रचुर मात्रा में दीप्ति उत्पन्न की है ।सर्वदा तरुण रहने वाले आप यज्ञ में देवों के दिव्य तेज की पूजा करते हैं, अतएव हमारे इस यज्ञ में उन्हें साथ लेकर आयें॥४॥

यत्त्वा होतारमनजन्मियेधे निषादयन्तो यजथाय देवाः ।
स त्वं नो अग्नेऽवितेह बोध्यधि श्रवांसि धेहि नस्तनूषु ॥५॥

देवताओं का आवाहन करने वाले हे अग्निदेव ! यज्ञ के लिए बैठे हुए दीप्तिमान् त्वगण आपको प्रतिष्ठित कर घृतादि द्वारा सिंचित करते हैं । आप हमारे यज्ञ में चैतन्य होकर हमें संरक्षण प्रदान करें। हमारे पुत्रों को आप प्रचुर मात्रा में धन-धान्य प्रदान करें॥५॥

सूक्त २०

ऋषि – गाथी कौशिक:
देवता – अग्नि:, १, ५ विश्वे देवा: । छंद – त्रिष्टुप

अग्निमुषसमश्विना दधिक्रां व्युष्टिषु हवते वह्निरुक्थैः ।
सुज्योतिषो नः शृण्वन्तु देवाः सजोषसो अध्वरं वावशानाः ॥१॥

यज्ञ में समर्पित आहुतियों को धारण करने वाले अग्निदेव, उषा, अश्विनीकुमार और दधिक्रा आदि देवों को हम स्तुति वचनों द्वारा बुलाते हैं। उत्तम दीप्तिमान् तथा प्रेम और सहकार पूर्वक रहने वाले देवगण, इस यज्ञ की सफलता की कामना करते हुए हमारी स्तुतियों का श्रवण करें॥१॥

अग्ने त्री ते वाजिना त्री षधस्था तिस्रस्ते जिह्वा ऋतजात पूर्वीः ।
तिस्र उ ते तन्वो देववातास्ताभिर्नः पाहि गिरो अप्रयुच्छन् ॥२॥

हे अग्निदेव !आपके (घृत, ओषधि और सोम) तीन प्रकार के अन्न हैं और तीन प्रकार के (पृथ्वी, अंतरिक्ष और द्यु) निवास हैं । हे यज्ञ से उत्पन्न अग्निदेव ! आपकी पुरातन तीन जिह्वायें (गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि) हैं । आपके तीन शरीर (पवमान, पावक और शुचि)

देवों द्वारा चाहने योग्य हैं । आप प्रमादरहित होकर अपने शरीरों द्वारा हमारे स्तोत्रों की रक्षा करें॥२॥

अग्ने भूरीणि तव जातवेदो देव स्वधावोऽमृतस्य नाम ।
याश्च माया मायिनां विश्वमिन्व त्वे पूर्वीः संदधुः पृष्टबन्धो ॥३॥

दीप्तिमान्, ज्ञानवान्, ऐश्वर्यवान् और अविनाशी हे अग्निदेव ! देवताओं ने आपको अनेक विभूतियों से सम्पन्न बनाया है। आप जगत् को तृप्ति प्रदान करने वाले और वांछित फल दाता हैं । हे अग्निदेव ! आप मायावियों की सम्पूर्ण पुरातन मायाओं को भली-भाँति जानते हुए उन्हें धारण करते हैं॥३॥

अग्निर्नेता भग इव क्षितीनां दैवीनां देव ऋतुपा ऋतावा ।
स वृत्रहा सनयो विश्ववेदाः पर्षद्विश्वाति दुरिता गृणन्तम् ॥४॥

ऋतुओं का संचालन करने वाले ऐश्वर्यवान् सूर्यदेव के सदृश ये अग्निदेव मनुष्यों और देवताओं का नेतृत्व करते हैं। वे यज्ञादि सत्कर्म करने वाले, वृत्र का नाश करने वाले, सनातन, सर्वज्ञ और दीप्तिमान् हैं । वे अग्निदेव हम स्तोताओं को सम्पूर्ण पापों से मुक्त करें॥४॥

दधिक्रामग्निमुषसं च देवीं बृहस्पतिं सवितारं च देवम् ।
अश्विना मित्रावरुणा भगं च वसून्रुद्राँ आदित्याँ इह हुवे ॥५॥

हम दधिक्रा, अग्नि, दीप्तिमान् उषा, बृहस्पति, सवितादेव, दोनों अश्विनीकुमार, मित्र, वरुण, भगदेव, वसुओं, रुद्रों और आदित्यों से इस यज्ञ में उपस्थित होने की प्रार्थना करते हैं॥५॥

सूक्त २१

ऋषि – गाथी कौशिक:
देवता – अग्नि: । छंद – १ त्रिष्टुप, २-३ अनुष्टुप, ४ विराड् रूपा, ५ सतोवृहती

इमं नो यज्ञममृतेषु धेहीमा हव्या जातवेदो जुषस्व ।
स्तोकानामग्ने मेदसो घृतस्य होतः प्राशान प्रथमो निषद्य ॥१॥

हे सर्वभूत ज्ञाता अग्निदेव ! हमारे इस यज्ञ को अमर देवों के पास समर्पित करें । हमारे द्वारा समर्पित इन हवि पदार्थों का सेवन करें। देवताओं का आवाहन करने वाले हे अग्निदेव ! आप यज्ञ में बैठकर सर्वप्रथम हवि और घृत के अंशों का भक्षण करें॥१॥

घृतवन्तः पावक ते स्तोकाः श्वोतन्ति मेदसः ।
स्वधर्मन्देववीतये श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम् ॥२॥

पवित्रता प्रदान करने वाले हे अग्निदेव ! इस यज्ञ में घृत से युक्त हविष्यान्न, आपके और देवों के सेवन के लिए अर्पित किया जा रहा है। अतएव हमें आप श्रेष्ठ और उपयोगी धन प्रदान करें॥२॥

तुभ्यं स्तोका घृतश्चुतोऽग्ने विप्राय सन्त्य ।

ऋषिः श्रेष्ठः समिध्यसे यज्ञस्य प्राविता भव ॥३॥

ऋत्विजों द्वारा सेवित, मेधावान् हे अग्निदेव ! आपके लिए टपकती हुई घृत की बूंदें अर्पित हैं । श्रेष्ठ क्रान्तदर्शी आप घृतादि द्वारा भली प्रकार प्रज्वलित होते हैं। आप हमारे इस यज्ञ को सम्पन्न करने वाले हों॥३॥

तुभ्यं श्चोतन्त्यध्रिगो शचीवः स्तोकासो अग्ने मेदसो घृतस्य ।
कविशस्तो बृहता भानुनागा हव्या जुषस्व मेधिर ॥४॥

हे सतत गमनशील और सामर्थ्यवान् अग्निदेव ! आपके निमित्त हविर्भाग और घृत की बूंदें अर्पित होती हैं । हे मेधावान् अग्निदेव ! आप मेधावियों द्वारा प्रशंसित होकर, अपने विस्तृत तेजों के साथ हमारे लिए अनुकूल हों और हमारे हव्यादि को ग्रहण करें॥४॥

ओजिष्ठं ते मध्यतो मेद उद्भृतं प्र ते वयं ददामहे ।
श्चोतन्ति ते वसो स्तोका अधि त्वचि प्रति तान्देवशो विहि ॥५॥

हे अग्निदेव ! हम सब घृतादि युक्त श्रेष्ठ हव्य, आपके लिए प्रदान करते हैं। हे आश्रयदाता अग्निदेव ! आपकी ज्वालाओं के मध्य घृत की अजस्र धारा समर्पित की जा रही है॥५॥

सूक्त २२

ऋषि – गाथी कौशिक:
देवता – अग्नि:, ४ पुरीष्या अग्न्य:। छंद – त्रिष्टुप , ४ अनुष्टुप

अयं सो अग्निर्यस्मिन्त्सोममिन्द्रः सुतं दधे जठरे वावशानः ।
सहस्रिणं वाजमत्यं न सप्तिं ससवान्त्सन्त्स्तूयसे जातवेदः ॥१॥

सोम की अभिलाषा करने वाले इन्द्रदेव ने जिस जठर में अभिषुत सोम को धारण किया था, वे यही जातवेदो अग्निदेव ही हैं । हे जातवेदा अग्निदेव ! विविध रूपों में अश्व के सदृश वेगवान् हविष्यान्न का आप सेवन करते हैं और सबके द्वारा की गई स्तुतियों का श्रवण करते हैं॥१॥

अग्ने यत्ते दिवि वर्चः पृथिव्यां यदोषधीष्वप्स्वा यजत्र ।
येनान्तरिक्षमुर्वाततन्थ त्वेषः स भानुरर्णवो नृचक्षाः ॥२॥

हे यज्ञाग्ने ! आपके जिस तेज ने स्वर्गलोक को, पृथ्वी पर तेजरूप से ओषधियों को और जल में विद्युत् रूप से अतिव्यापक अन्तरिक्ष लोक को संव्याप्त किया है; हे सर्वत्र गतिमान्, जगत् प्रकाशक ! आपका वह दिव्य तेज मनुष्यों के सभी अच्छे-बुरे कर्मों को देखने वाला है॥२॥

अग्ने दिवो अर्णमच्छा जिगास्यच्छा देवाँ ऊचिषे धिष्ण्या ये ।
या रोचने परस्तात्सूर्यस्य याश्चावस्तादुपतिष्ठन्त आपः ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप दिव्य लोक के अमृतरूपी जल को उत्तम रीति से धारण करते हैं। बुद्धि के प्रेरक जो प्राण स्वरूप देव हैं; उनके समक्ष भी आप गतिशील होते हैं। प्रकाशमान सूर्यमण्डल में स्थित, सूर्य से आगे (परे) जो जल है तथा जो जल इसके नीचे है, समस्त जल में आप विराजमान हों॥३॥

पुरीष्यासो अग्नयः प्रावणेभिः सजोषसः ।
जुषन्तां यज्ञमद्रुहोऽनमीवा इषो महीः ॥४॥

प्रजापालक, समान विचारशीलों में प्रीतियुक्त, द्रोह भावना से रहित, ये अग्नियाँ इस यज्ञ में आरोग्यप्रद वनौषधियों से युक्त हविष्य को पर्याप्त मात्रा में ग्रहण करें॥४॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥५॥

हे अग्निदेव ! आप यज्ञादि कार्य के लिए, अनेक सत्कर्मों के लिए और गौओं के पोषण आदि के लिए हमें उत्तम भूमि प्रदान करें । हमारे पुत्र वंश की वृद्धि करने वाले हों । आपकी वह सुमति हमें भी प्राप्त हो॥५॥

सूक्त २३

ऋषि – देवश्रवा देववातश्च भारतौ
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप, ३ सतोवृहती

निर्मथितः सुधित आ सधस्थे युवा कविरध्वरस्य प्रणेता ।
जूर्यत्स्वग्निरजरो वनेष्वत्रा दधे अमृतं जातवेदाः ॥१॥

मंथन द्वारा प्रकट यजमान के घर स्थापित वे अग्निदेव सर्वदा युवा, यज्ञ के प्रणेता, मेधावान् और सर्वज्ञ हैं। वे महान् वन-क्षेत्र को जलाने पर भी स्वयं अजर हैं । वे अग्निदेव ही यज्ञ में अमृत को धारण करने वाले हैं॥१॥

अमन्थिष्टां भारता रेवदग्निं देवश्रवा देववातः सुदक्षम् ।
अग्ने वि पश्य बृहताभि रायेषां नो नेता भवतादनु द्यून् ॥२॥

भरत के पुत्र देवश्रवा और देववात, इन दोनों ने उत्तम सामर्थ्यशाली और विपुल धन-संयुक्त अग्नि को मन्थन द्वारा उत्पन्न किया है । हे अग्निदेव ! आप हमारी ओर कृपा दृष्टि कर, हमें प्रभूत धन एवं प्रतिदिन विपुल अन्नादि प्राप्त कराने वाले हों॥२॥

दश क्षिपः पूर्व्यं सीमजीजनन्त्सुजातं मातृषु प्रियम् ।

अग्निं स्तुहि दैववातं देवश्रवो यो जनानामसद्वशी ॥३॥

दस अँगुलियों ने (मन्थन द्वारा चिर पुरातन उस अग्नि को उत्पन्न किया । हे देवश्रवा ! अरणि रूप माताओं द्वारा उत्तम प्रकार से प्रकट होने वाले, देववात द्वारा मथित, सबके प्रिय इन अग्निदेव की स्तुति करें । वे स्तोताजनों के वशीभूत होते हैं॥३॥

नि त्वा दधे वर आ पृथिव्या इळायास्पदे सुदिनत्वे अह्नाम् ।
दृषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीहि ॥४॥

हे अग्निदेव ! हम इळा रूपिणी (अन्नवती) पृथ्वी के उत्कृष्ट स्थान में, उत्तम दिन के श्रेष्ठतम समय में, आपको विशेष रूप से स्थापित करते हैं । आप दृषद्वती (राजपूताना क्षेत्र में प्रवाहित घग्घर नदी), आपया (कुरुक्षेत्र में स्थित नदी) और सरस्वती के तटों पर रहने वाले मनुष्यों के गृह में धन से युक्त होकर दीप्तिमान् हों॥४॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध ।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥५॥

हे अग्निदेव ! हमें स्तोताओं के निमित्त शाश्वत, श्रेष्ठ, अनेक कार्यों के लिए उपयोगी और गौओं को पुष्टि प्रदान करने वाली भूमि प्रदान करें । हे अग्निदेव ! हमारे पुत्र-पौत्र वंश विस्तार में सक्षम हों । हमें आपकी उत्तम बुद्धि की अनुकूलता का अनुग्रह प्राप्त हो॥५॥

सूक्त २४

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – गायत्री, अनुष्टुप

अग्ने सहस्व पृतना अभिमातीरपास्य ।
दुष्टरस्तरन्नरातीर्वर्चो धा यज्ञवाहसे ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप शत्रु सेनाओं को पराजित करें; विघ्नकर्ताओं को दूर हटायें । शत्रुओं द्वारा अपराजेय आप अपने शत्रुओं को जीतकर यज्ञकर्ता यजमान को प्रचुर अन्न प्रदान करें ।१॥

अग्न इळा समिध्यसे वीतिहोत्रो अमर्त्यः ।
जुषस्व सू नो अध्वरम् ॥२॥

हे अग्निदेव ! आप यज्ञों से प्रीति रखने वाले और अविनाशी हैं। आप उत्तर वेदी में प्रज्वलित होते हैं । आप हमारे यज्ञ को भली-भाँति ग्रहण करें॥२॥

अग्ने द्युम्नेन जागृवे सहसः सूनवाहुत ।
एदं बर्हिः सदो मम ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप तेज से सर्वदा चैतन्यवान् हैं । आप बल के पुत्र हैं। आप आदरपूर्वक आमंत्रित किये जाते हैं। आप हमारे यज्ञ में उपस्थित होकर कुश के आसन पर अधिष्ठित हों॥३॥

अग्ने विश्वेभिरग्निभिर्देवेभिर्महया गिरः ।
यज्ञेषु य उ चायवः ॥४॥

हे अग्निदेव ! यज्ञ में जो याजक आपके निमित्त स्तुतियाँ करते हैं, उनकी स्तुतियों को सम्पूर्ण तेजस्वी ज्वालाओं से अधिकाधिक महत्ता प्रदान करें॥४॥

अग्ने दा दाशुषे रयिं वीरवन्तं परीणसम् ।
शिशीहि नः सूनुमतः ॥५॥

हे अग्निदेव ! आप हविदाता को वीर पुत्रों से युक्त पर्याप्त धन प्रदान करें । हम पुत्र-पौत्र वाले हों । आप हमें तेजवान् बनायें11५॥

सूक्त २५

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि:, अग्निन्द्रौ । छंद – विराट

अग्ने दिवः सूनुरसि प्रचेतास्तना पृथिव्या उत विश्ववेदाः ।
ऋधग्देवाँ इह यजा चिकित्वः ॥१॥

सर्वज्ञाता, प्रबुद्ध, आकाश-पुत्र हे अग्निदेव ! आप पृथ्वी के विस्तारक हैं । हे ज्ञान-समृद्ध अग्निदेव ! आप इस यज्ञ में पृथक्-पृथक् देवों के निमित्त यज्ञ कार्य सम्पन्न करें॥१॥

अग्निः सनोति वीर्याणि विद्वान्त्सनोति वाजममृताय भूषन् ।
स नो देवाँ एह वहा पुरुक्षो ॥२॥

विद्वान् अग्निदेव उपासकों की क्षमताओं में वृद्धि करते हैं। वे अग्निदेव अपने को विभूषित (प्रज्वलित) करके, अमर देवों को हविष्यान्न प्रदान करते हैं । विविध प्रकार के वैभव से सम्पन्न हे अग्निदेव ! आप हमारे निमित्त देवों को इस यज्ञ में ले आयें॥२॥

अग्निर्द्यावापृथिवी विश्वजन्ये आ भाति देवी अमृते अमूरः ।
क्षयन्वाजैः पुरुश्चन्द्रो नमोभिः ॥३॥

ज्ञान-सम्पन्न, सबके आश्रय स्थल, अत्यन्त तेजस्वी, बल और अन्न से युक्त है अग्निदेव ! आप विश्व का सृजन करने में समर्थ, देदीप्यमान तथा अजर-अमर द्यावा-पृथिवी को प्रकाशित करते हैं॥३॥

अग्न इन्द्रश्च दाशुषो दुरोणे सुतावतो यज्ञमिहोप यातम् ।
अमर्धन्ता सोमपेयाय देवा ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप और इन्द्रदेव दोनों यज्ञ के रक्षणकर्ता हैं। आप अभिषुत सोम-प्रदाता यजमान के घर में सोमपान के निमित्त आयें॥४॥

अग्ने अपां समिध्यसे दुरोणे नित्यः सूनो सहसो जातवेदः ।
सधस्थानि महयमान ऊती ॥५॥

बल के पुत्र, अविनाशी और सर्वज्ञ हे अग्निदेव ! आप अपनी संरक्षण शक्ति द्वारा आश्रय देकर, प्राणियों को अनुगृहीत करते हुए, जलों के (बरसने के) स्थान अन्तरिक्ष में, भली-भाँति प्रदीप्त होते हैं॥५॥

सूक्त २६

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र:, ७ आत्मा
देवता – १-३ वैश्वानरोऽग्नि: , ४-६ मरुत:, ७-८ आत्मा, ९
विश्वामित्रोपाध्याय : । छंद – १-६ जगत, ७-९ त्रिष्टुप

वैश्वानरं मनसाग्निं निचाय्या हविष्मन्तो अनुषत्यं स्वर्विदम् ।
सुदानुं देवं रथिरं वसूयवो गीर्भी रण्वं कुशिकासो हवामहे ॥१॥

हम कुशिक-वंशज धन की अभिलाषा से हव्यादि प्रदान करते हुए रमणीय वैश्वानर अग्निदेव को स्तुति करते हुए बुलाते हैं। वे अग्निदेव सत्यमार्ग अनुगामी, स्वर्ग के सुखों को प्रदान करने वाले, उत्तम फल-प्रदायक और सर्वत्र गमनशील हैं॥१॥

तं शुभ्रमग्निमवसे हवामहे वैश्वानरं मातरिश्वानमुक्थ्यम् ।
बृहस्पतिं मनुषो देवतातये विप्रं श्रोतारमतिथिं रघुष्यदम् ॥२॥

यजमान के यज्ञ की रक्षा के लिए उन शुभ, अन्तरिक्ष में विद्युत् रूप में गतिशील, ऋचाओं द्वारा स्तुत्य, वाणी के अधीश्वर, मेधावी, श्रोता एवं अतिथि रूप पूज्य तथा शीघ्र गमनशील, वैश्वानर अग्निदेव को हम बुलाते हैं॥२॥

अश्वो न क्रन्दञ्जनिभिः समिध्यते वैश्वानरः कुशिकेभिर्युगेयुगे ।
स नो अग्निः सुवीर्यं स्वश्व्यं दधातु रत्नममृतेषु जागृविः ॥३॥

हिनहिनाने वाला अश्व जैसे अपनी जननी द्वारा प्रवृद्ध होता है, वैसे ही ये वैश्वानर अग्निदेव कुशिक वंशजों द्वारा प्रतिदिन संवर्धित होते हैं । अमर देवों में सर्वदा जागरूक वे अग्निदेव हमें उत्तम अश्व, उत्तम पराक्रम, सामर्थ्य और रत्नादि धन प्रदान करें॥३॥

प्र यन्तु वाजास्तविषीभिरग्नयः शुभे सम्मिश्लाः पृषतीरयुक्षत ।
बृहदुक्षो मरुतो विश्ववेदसः प्र वेपयन्ति पर्वताँ अदाभ्याः ॥४॥

अग्नि (यज्ञ) से उत्पन्न शक्तिशाली (ऊर्जा) धारायें श्रेष्ठ उद्देश्यों से युक्त होकर चलें । बलशाली मरुतों के साथ मिलकर पृषती (वायु को वाहन बनाने वाले मेघों) को एकत्रित करें । सर्वज्ञाता, अदम्य मरुद्गण जलयुक्त पर्वताकार (मेघ) को कम्पित करते हैं॥४॥

अग्निश्रियो मरुतो विश्वकृष्टय आ त्वेषमुग्रमव ईमहे वयम् ।
ते स्वानिनो रुद्रिया वर्षनिर्णिजः सिंहा न हेषक्रतवः सुदानवः ॥५॥

रुद्र-पुत्र वे मरुद्गण अग्निदेव के आश्रित, विश्व को आकृष्ट करने वाले, ध्वनि करने वाले, जल की वर्षा करने वाले, सिंह के समान गर्जना करने वाले और उत्तम दानशील हैं। हम उनके उग्र और तेजस्वी संरक्षण-सामथ्र्यो की याचना करते हैं॥५॥

व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिरग्नेर्भामं मरुतामोज ईमहे ।
पृषदश्वासो अनवभ्रराधसो गन्तारो यज्ञं विदथेषु धीराः ॥६॥

बिन्दुदार (चिह्नित) अश्वों वाले, अक्षय धन वाले, धीर मरुद्गण हव्य की कामना से यज्ञ में गमन करते हैं। सदैव समूह के साथ चलने वाले मरुद्गणों के बल और अग्नि के प्रकाशित ओज की कामना करते हुए, हम उत्तम स्तुतियों से उनका गुणगान करते हैं॥६॥

अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतं मे चक्षुरमृतं म आसन् ।
अर्कस्त्रिधातू रजसो विमानोऽजस्रो घर्मो हविरस्मि नाम ॥७॥

मैं अग्नि (आत्मा या ब्रह्म) जन्म से ही सर्वज्ञ हूँ । घृत (तेज) मेरे नेत्र हैं। मेरे मुख में अमृत (रस अथवा वाणी) है । मैं प्राणरूप में तीनों (जड़, वनस्पतियों एवं प्राणियों) का धारक एवं अन्तरिक्ष का मापक हूँ । सतत तेजोमय सूर्य, हवि एवं हविवाहक (अग्नि) मैं ही हूँ॥७॥

त्रिभिः पवित्रैरपुपोद्ध्यर्कं हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन् ।
वर्षिष्ठं रत्नमकृत स्वधाभिरादिद्द्यावापृथिवी पर्यपश्यत् ॥८॥

(साधकगण) अपने अंत:करण में मननीय परम ज्योति को भली-भाँति जानकरे अग्नि, जल और सूर्य रूप पूजनीय आत्मा को परिमार्जित करते हैं। अग्नि के इन तीन रूपों द्वारा वे अपनी आत्मा को उत्कृष्टतम और रमणीय बनाते हैं । तदनन्तर वे द्यावा-पृथिवी को सब ओर से देखते हैं॥८॥

शतधारमुत्समक्षीयमाणं विपश्चितं पितरं वक्त्वानाम् ।
मेळिं मदन्तं पित्रोरुपस्थे तं रोदसी पिपृतं सत्यवाचम् ॥९॥

हे द्यावा-पृथिवि सैकड़ों धाराओं वाले, जल-प्रवाहों के समान अक्षय, वचनों के पालक, संघटक, प्रवाहक, सत्यवादी और माता-पिता रूप

आपकी गोद में प्रसन्न होने वाले अग्निदेव को आप सम्यक् रूप से पूर्ण करें॥९॥

सूक्त २७

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि:, १ ऋतवा । छंद – गायत्री

प्र वो वाजा अभिद्यवो हविष्मन्तो घृताच्या ।
देवाञ्जिगाति सुम्नयुः ॥१॥

हे ऋतुओ ! अन्न, तेज और ऐश्वर्य की अभिलाषा से ऋत्विग्गण घृत से पूर्ण सुवा और हविष्यान्न से युक्त होकर देवों का यजन करते हैं । सुख की इच्छा करने वाले वे देवों को प्राप्त करते हैं॥१॥

ईळे अग्निं विपश्चितं गिरा यज्ञस्य साधनम् ।
श्रुष्टीवानं धितावानम् ॥२॥

यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों को सम्पन्न करने वाले, प्रज्ञावान्, वेगवान् और धनवान् अग्निदेव का स्तुति गान करते हुए हम उनका पूजन-सम्मान करते हैं॥२॥

अग्ने शकेम ते वयं यमं देवस्य वाजिनः ।
अति द्वेषांसि तरेम ॥३॥

हे दीप्तिमान् अग्निदेव ! हम हविष्यान्न तैयार करके आपको अपने पास रख सकें अर्थात् यजन कर सकें और पापों से पार हो सकें॥३॥

समिध्यमानो अध्वरेऽग्निः पावक ईड्यः ।
शोचिष्केशस्तमीमहे ॥४॥

अग्निदेव यज्ञ में प्रज्वलित होकर केश रूप ज्वाला वाले, पवित्रकारक और स्तुत्य हैं, उनसे हम इष्ट फल की याचना करते हैं॥४॥

पृथुपाजा अमर्त्यो घृतनिर्णिक्स्वाहुतः ।
अग्निर्यज्ञस्य हव्यवाट् ॥५॥

महान् तेजस्वी, अजर-अमर, घृतवत् तेजोमय, भली-भाँति जिनका आवाहन और पूजन किया गया है, ऐसे अग्निदेव, यज्ञ में समर्पित हवियों को धारण करने वाले हैं॥५॥

तं सबाधो यतस्रुच इत्था धिया यज्ञवन्तः ।
आ चक्रुरग्निमूतये ॥६॥

विघ्न-बाधाओं को दूर करके यज्ञ सम्पन्न करने वाले, यज्ञ के साधनों से युक्त ऋत्विजों ने अपनी रक्षा के लिए हव्यपूरित स्वचा को आगे बढ़ाकर स्तुतियों के साथ अग्निदेव को समर्पित किया। इस प्रकार उन्हें अपने अनुकूल बनाया॥६॥

होता देवो अमर्त्यः पुरस्तादेति मायया ।
विदथानि प्रचोदयन् ॥७॥

देवों का आवाहन करने वाले, अविनाशी, प्रकाशमान अग्निदेव, याजकों को सत्कर्म की प्रेरणा देते हुए शीघ्र ही प्रकट होते हैं॥७॥

वाजी वाजेषु धीयतेऽध्वरेषु प्र णीयते ।
विप्रो यज्ञस्य साधनः ॥८॥

संग्राम में बलशाली अग्निदेव को, शत्रु नाश करने के निमित्त स्थापित करते हैं । यह ज्ञान-सम्पन्न अग्निदेव यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों को सिद्ध करने वाले साधन रूप हैं॥८॥

धिया चक्रे वरेण्यो भूतानां गर्भमा दधे ।
दक्षस्य पितरं तना ॥९॥

वे अग्निदेव सब यज्ञ कर्मों में प्रकट होने के कारण श्रेष्ठ हैं और सब प्राणियों में संव्याप्त हैं । विश्व पालक अग्निदेव को वेदी स्वरूपिणी दक्ष-पुत्री यज्ञादि के निमित्त धारण करती हैं॥९॥

नि त्वा दधे वरेण्यं दक्षस्येळा सहस्कृत ।
अग्ने सुदीतिमुशिजम् ॥१०॥

हे अग्निदेव ! आप घर्षण-बल (अरणि-मन्थन से प्रकट होने वाले, श्रेष्ठ, तेजस्वीं घृतादि हविष्यान्न की कामना करने वाले और वरण करने योग्य हैं । आपको वे दो रूपों वाली दक्ष पुत्री 'इला' धारण करती हैं॥१०॥

अग्निं यन्तुरमप्तुरमृतस्य योगे वनुषः ।
विप्रा वाजैः समिन्धते ॥११॥

मेधावी साधकगण जगन्नियन्ता, जल-प्रेरक अग्निदेव को हविष्यान्न द्वारा सम्यक् रूप से प्रदीप्त करते हैं॥११॥

ऊर्जो नपातमध्वरे दीदिवांसमुप द्यवि ।
अग्निमीळे कविक्रतुम् ॥१२॥

बलों को धारण करने वाले, द्युलोक को प्रकाशित करने वाले अग्निदेव की हम इस यज्ञ में स्तुति करते हैं॥१२॥

ईळेन्यो नमस्यस्तिरस्तमांसि दर्शतः ।
समग्निरिध्यते वृषा ॥१३॥

स्तुत्य, प्रणम्य, अन्धकार नाशक, दर्शनीय और शक्तिशाली हे अग्निदेव ! आप आहुतियों द्वारा भली प्रकार प्रज्वलित संवर्धित किये जाते हैं॥१३॥

वृषो अग्निः समिध्यतेऽश्वो न देववाहनः ।
तं हविष्मन्त ईळते ॥१४॥

बलशाली अश्व जैसे राजा के वाहन को खींच कर ले जाते हैं, उसी प्रकार अग्निदेव देवताओं तक हवि पहुँचाते हैं। ऐसे अग्निदेव उत्तम प्रकार से प्रदीप्त हुए, यजमान की स्तुतियों को प्राप्त करते हैं॥१४॥

वृषणं त्वा वयं वृषन्वृषणः समिधीमहि ।
अग्ने दीद्यतं बृहत् ॥१५॥

हे बलवान् अग्निदेव ! घृतादि की हवि प्रदान करने वाले हम, शक्तिशाली, तेजस्वी और महान् आपको (अग्नि को) प्रदीप्त करते हैं॥१५॥

सूक्त २८

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि: । छंद – १-२, ६ गायत्री, ३ उषणिक, ४ त्रिष्टुप, ५ जगती

अग्ने जुषस्व नो हविः पुरोळाशं जातवेदः ।
प्रातःसावे धियावसो ॥१॥

हे जातवेदा अग्निदेव ! हमारी स्तुतियाँ आपके पास निवास करती हैं। आप प्रातः सवन में हमारे पास आकर पुरोडाश और हव्यादि का सेवन करें॥१॥

पुरोळा अग्ने पचतस्तुभ्यं वा घा परिष्कृतः ।
तं जुषस्व यविष्ठ्य ॥२॥

हे अतिशय युवा अग्निदेव ! आपके लिए पुरोडाश पकाया गया है और उसे घृतादि द्वारा सुसंस्कृत किया गया है, आप उसे ग्रहण करें॥२॥

अग्ने वीहि पुरोळाशमाहुतं तिरोअह्न्यम् ।
सहसः सूनुरस्यध्वरे हितः ॥३॥

हे अग्निदेव ! सन्ध्या वेला में समर्पित किये गये पुरोड़ाश का आप सेवन करें। आप बल के पुत्र हैं और यज्ञ में सर्वहितकारी हैं॥३॥

माध्यंदिने सवने जातवेदः पुरोळाशमिह कवे जुषस्व ।
अग्ने यह्वस्य तव भागधेयं न प्र मिनन्ति विदथेषु धीराः ॥४॥

मेधावी और सर्वभूत ज्ञाता हे अग्निदेव ! इस यज्ञ में माध्यन्दिन सवन के समय समर्पित पुरोड़ाश का आप सेवन करें। यज्ञ में धीर अध्वर्युगण आपके भाग को नष्ट नहीं करते॥४॥

अग्ने तृतीये सवने हि कानिषः पुरोळाशं सहसः सूनवाहुतम् ।
अथा देवेष्वध्वरं विपन्यया धा रत्नवन्तममृतेषु जागृविम् ॥५॥

बल के पुत्र हे अग्निदेव ! तीसरे सवन में दिए गए पुरोड़ाश को आप स्वीकार करें । तदनन्तर अविनाशी, रलधारक, चैतन्यस्वरूप सोम को देवों के पास पहुँचाएँ॥५॥

अग्ने वृधान आहुतिं पुरोळाशं जातवेदः ।
जुषस्व तिरोअह्न्यम् ॥६॥

हे जातवेदा अग्निदेव !विवर्धमान आप दिन के अन्त में समर्पित पुरोड़ाश रूपी आहुतियों का सेवन करें॥६॥

सूक्त २९

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – अग्नि:, ५ ऋत्विजो । छंद – त्रिष्टुप, १, ४, १०, १२ अनुष्टुप, ६, ११, १४, १५, जगती

अस्तीदमधिमन्थनमस्ति प्रजननं कृतम् ।
एतां विश्पत्नीमा भराग्निं मन्थाम पूर्वथा ॥१॥

सम्पूर्ण जगत् का पालन करने वाली यह अरणी, मंथन करने का साधन हैं । इसके द्वारा ही अग्निदेव प्रकट होते हैं । इस अरणी को ले आयें । पूर्व की तरह हम मन्थन करके अग्निदेव को प्रकट करें॥१॥

अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भ इव सुधितो गर्भिणीषु ।
दिवेदिव ईड्यो जागृवद्भिर्हविष्मद्भिर्मनुष्येभिरग्निः ॥२॥

गर्भिणी के पेट में सुरक्षित गर्भ की तरह ये सर्वज्ञ अग्निदेव अरणियों में समाहित रहते हैं । यज्ञ के लिए जागरूक रहने वाले होताओं द्वारा नित्य ही वन्दनीय हैं॥२॥

उत्तानायामव भरा चिकित्वान्त्सद्यः प्रवीता वृषणं जजान ।
अरुषस्तूपो रुशदस्य पाज इळायास्पुत्रो वयुनेऽजनिष्ट ॥३॥

हे प्रतिभा-सम्पन्न (अध्वर्यु ! आप उत्तान (ऊर्ध्व मुख सीधी वेदिका अथवा पृथ्वी) को भरें (पूरित करें)। पूरित होकर यह शीघ्र ही अभीष्ट वर्षा में समर्थ (यज्ञीय प्रवाह) को उत्पन्न करे । इसका तेज़ प्रकाशित होता है । इस प्रकार उज्ज्वल प्रकाश से युक्त इला (पृथ्वी) का पुत्र उत्पन्न होता है॥३॥

इळायास्त्वा पदे वयं नाभा पृथिव्या अधि ।
जातवेदो नि धीमह्यग्ने हव्याय वोळ्हवे ॥४॥

हे सर्वज्ञाता अग्निदेव ! पृथ्वी के केन्द्रीय स्थल उत्तरवेदी के मध्य में हम आपको स्थापित करते हैं। हमारे द्वारा समर्पित हवियों को आप ग्रहण करें॥४॥

मन्थता नरः कविमद्वयन्तं प्रचेतसममृतं सुप्रतीकम् ।
यज्ञस्य केतुं प्रथमं पुरस्तादग्निं नरो जनयता सुशेवम् ॥५॥

हे याजकगणो ! मेधावी, प्रपंचरहित, प्रकृष्ट ज्ञानवान्, अमर और सुन्दर शरीर वाले अग्निदेव को मंथन द्वारा उत्पन्न करें । समाज का नेतृत्व करने वाले हे याजको ! सर्वप्रथम यज्ञ के पताका रूप प्रथम पूज्य, उत्तम सुखकारी अग्निदेव को प्रकट करें॥५॥

यदी मन्थन्ति बाहुभिर्वि रोचतेऽश्वो न वाज्यरुषो वनेष्वा ।
चित्रो न यामन्नश्विनोरनिवृतः परि वृणक्त्यश्मनस्तृणा दहन् ॥६॥

जिस समय हाथों से अरणि-मंथन किया जाता है, उस समय शीघ्रगामी अश्व की भाँति गमनशील अग्निदेव काष्ठों पर अरुणिम वर्ग

से विशेष प्रकाशमान होते हैं। अश्विनीकुमारों के शीघ्रगामी रथ की भाँति विशिष्ट शोभायमान होते हैं। वे अग्निदेव अबाध गति से तृणों को जलाते हुए, दहन-स्थान से आगे बढ़ते जाते हैं॥६॥

जातो अग्नी रोचते चेकितानो वाजी विप्रः कविशस्तः सुदानुः ।
यं देवास ईड्यं विश्वविदं हव्यवाहमदधुरध्वरेषु ॥७॥

उत्पन्न अग्निदेव ज्ञानवान्, वेगवान् और मेधावान् हैं, अतएव मेधावी जन उनकी प्रशंसा करते हैं । उत्तम कर्मफल प्रदायक वे अग्निदेव सर्वत्र शोभायमान होते हैं। देवों ने उन स्तुत्य और सर्वज्ञाता अग्निदेव को यज्ञ में हव्य-हवनकर्ता के रूप में स्थापित किया॥७॥

सीद होतः स्व उ लोके चिकित्वान्त्सादया यज्ञं सुकृतस्य योनौ ।
देवावीर्देवान्हविषा यजास्यग्ने बृहद्यजमाने वयो धाः ॥८॥

हे होता रूप अग्निदेव ! सब कर्मों के ज्ञाता आप अपने प्रतिष्ठित स्थान को सुशोभित करें और श्रेष्ठ कर्मरूपी यज्ञ को सम्पन्न करें । देवों को तृप्त करने वाले हे अग्निदेव ! आप याजकों द्वारा प्रदत्त आहुतियों से देवताओं को आनन्दित करते हुए, याजकों को धन-धान्य एवं दीर्घायुष्य प्रदान करें॥८॥

कृणोत धूमं वृषणं सखायोऽस्रेधन्त इतन वाजमच्छ ।
अयमग्निः पृतनाषाट् सुवीरो येन देवासो असहन्त दस्यून् ॥९॥

हे मित्रो ! पहले आप धूम्र युक्त बलशाली अग्नि को उत्पन्न करें, फिर शक्तिशाली होकर युद्ध में आगे आएँ । ये (उत्पन्न) अग्निदेव श्रेष्ठवीर

एवं शत्रु विजेता हैं, इन्हीं की सहायता से देवगणों ने असुरों को पराजित किया॥९॥

अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातो अरोचथाः ।
तं जानन्नग्न आ सीदाथा नो वर्धया गिरः ॥१०॥

हे अग्निदेव !यह अरणि ही आपकी उत्पत्ति का हेतु है, जिसके द्वारा आप प्रकट होकर शोभायमान होते हैं ।उस अपने मूल को जानते हुए आप उस पर प्रतिष्ठित हों और हमारी स्तुतियों (वाणी की सामर्थ्य) को बढ़ायें॥१०॥

तनूनपादुच्यते गर्भ आसुरो नराशंसो भवति यद्विजायते ।
मातरिश्वा यदमिमीत मातरि वातस्य सर्गो अभवत्सरीमणि ॥११॥

गर्भ में विद्यमान अग्निदेव को 'तनूनपात्' कहते हैं । जब, यह अत्यधिक बलशाली (प्रकट) होते हैं, तब 'नराशंस' कहे जाते हैं । जब अन्तरिक्ष में वे अपने तेज को विस्तारित करते हैं, तब 'मातरिश्वा' होते हैं । इनके शीघ्र गमन करने पर वायु की उत्पत्ति होती है॥११॥

सुनिर्मथा निर्मथितः सुनिधा निहितः कविः ।
अग्ने स्वध्वरा कृणु देवान्देवयते यज ॥१२॥

मेधावान् हे अग्निदेव ! आप उत्तम मथनी द्वारा मंथन से उत्पन्न होते हैं। आपको सर्वोत्तम स्थान में स्थापित किया गया है। हमारे यज्ञ को आप भली-भाँति सम्पन्न करें और देवत्व की कामना करने वाले हम याजकों के लिए देवों का यजन करें॥१२॥

अजीजनन्नमृतं मर्त्यासोऽस्रेमाणं तरणिं वीळुजम्भम् ।
दश स्वसारो अग्रुवः समीचीः पुमांसं जातमभि सं रभन्ते ॥१३॥

मर्त्य अवजों ने अमर, अक्षय, सुदृढ़ दाँतों वाले, पापों से मुक्ति प्रदान करने वाले अग्निदेव को उत्पन्न किया। पुत्र की उत्पत्ति से प्रसन्न होने की तरह अग्नि के उत्पन्न होने पर दसों अँगुलियाँ परस्पर मिलकर अतिशय प्रसन्न होकर, शब्दायमान होते हुए प्रसन्नता व्यक्त करती हैं॥१३॥

प्र सप्तहोता सनकादरोचत मातुरुपस्थे यदशोचदूधनि ।
न नि मिषति सुरणो दिवेदिवे यदसुरस्य जठरादजायत ॥१४॥

यह सनातन अग्निदेव सात होताओं द्वारा दीप्तिमान् होते हैं । जब ये माता पृथ्वी के अंक में जल-स्थान के समीप शोभायमान होते हैं, तो वे आकर्षक दिखाई देते हैं। वे प्रतिदिन निद्रा न लेकर भी सदैव चैतन्य होते हैं; क्योंकि वे अत्यन्त बलवान् गर्भ से उत्पन्न हुए हैं॥१४॥

अमित्रायुधो मरुतामिव प्रयाः प्रथमजा ब्रह्मणो विश्वमिद्विदुः ।
द्युम्नवद्ब्रह्म कुशिकास एरिर एकएको दमे अग्निं समीधिरे ॥१५॥

मरुतों की सेना के समान शत्रुओं के साथ युद्ध करने वाले और ब्रह्मा के पुत्रों में अग्रज कुशिक वंशज ऋषिगण विश्व को जानते हैं। वे तेजस्वी हविष्यान्न सहित स्तोत्रों से अग्निदेव की स्तुति करते हैं। अपने-अपने घरों में उन्हें नित्य यज्ञार्थ प्रदीप्त करते हैं॥१५॥

यदद्य त्वा प्रयति यज्ञे अस्मिन्होतश्चिकित्वोऽवृणीमहीह ।
ध्रुवमया ध्रुवमुताशमिष्ठाः प्रजानन्विद्वाँ उप याहि सोमम् ॥१६॥

यज्ञादिक श्रेष्ठ कर्मों के सम्पादक, सर्वज्ञ हे अग्निदेव ! आज के इस यज्ञ में हम आपका वरण करते हैं। आप यहीं यज्ञ में सुदृढ़तापूर्वक स्थापित हों और सर्वत्र शान्तिकारक हों । हे विद्वान् अग्निदेव ! सोम को अभिषुत हुआ जानकर, आप उसके समीप पहुँचकर उसे ग्रहण करें॥१६॥

सूक्त ३०

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्रः ।
देवता – इन्द्रः । छंद – त्रिष्टुप

इच्छन्ति त्वा सोम्यासः सखायः सुन्वन्ति सोमं दधति प्रयांसि ।
तितिक्षन्ते अभिशस्तिं जनानामिन्द्र त्वदा कश्चन हि प्रकेतः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! सोमयाग करने वाले सखा रूप ऋत्विग्गण आपके स्तवन के अभिलाषी हैं। वे आपके लिए सोमरस छान कर तैयार करते हैं और हविष्यान्न धारण करते हैं। वे शत्रुओं के हिंसक प्रहार को सहन करते हैं। हे इन्द्रदेव ! आप से अधिक प्रसिद्ध और कौन हैं ?॥१॥

न ते दूरे परमा चिद्रजांस्या तु प्र याहि हरिवो हरिभ्याम् ।
स्थिराय वृष्णे सवना कृतेमा युक्ता ग्रावाणः समिधाने अग्नौ ॥२॥

तीव्र गतिशील अश्वों से युक्त हे इन्द्रदेव ! अत्यन्त दूरस्थ लोक भी आपके लिए दूर नहीं है, क्योंकि आपके अश्व सर्वत्र गमन करते हैं। आप स्थिर बल-युक्त और अभीष्ट वर्षक हैं, आपके लिए ही ये यज्ञादि कार्य सम्पादित किये गये हैं। यहाँ अग्नि के प्रदीप्त होने पर सोम अभिषवण हेतु पाषाण खण्ड प्रयुक्त होते हैं॥२॥

इन्द्रः सुशिप्रो मघवा तरुत्रो महाव्रातस्तुविकूर्मिर्ऋघावान् ।
यदुग्रो धा बाधितो मर्त्येषु क्व त्या ते वृषभ वीर्याणि ॥३॥

हे अभीष्टवर्धक इन्द्रदेव ! आप धनवान्, उत्तम शिरस्त्राण वाले, शत्रुओं का विनाश करने वाले, महान् वतों को धारण करने वाले, विविध कर्मों को सम्पन्न करने वाले और विकराल हैं। युद्धों में (असुरों आदि को) बाधित करने वाले आप मनुष्यों के लिए जो पराक्रम करते हैं, वह सामर्थ्य कहाँ है ?॥३॥

त्वं हि ष्मा च्यावयन्नच्युतान्येको वृत्रा चरसि जिघ्नमानः ।
तव द्यावापृथिवी पर्वतासोऽनु व्रताय निमितेव तस्थुः ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अकेले हीं अत्यन्त सुदृढ़ शत्रुओं को उनके स्थान से च्युत किया है और वृत्रों को मारते हुए सर्वत्र विचरण किया है । सम्पूर्ण द्यावा-पृथिवी और दृढ़ पर्वत आपके संकल्प के लिए ही अविचल होकर अनुकूल होते हैं॥४॥

उताभये पुरुहूत श्रवोभिरेको दव्ह्मवदो वृत्रहा सन् ।
इमे चिदिन्द्र रोदसी अपारे यत्संगृभ्णा मघवन्काशिरित्ते ॥५॥

पुरुहूत (अनेकों के द्वारा आवाहन किये जाने वाले), ऐश्वर्यवान् हे इन्द्रदेव ! बल से युक्त होकर आपने अकेले ही वृत्र का हनन करके, जो अभय वचन कहे, वे सत्य से परिपूर्ण हैं । आपने दूर होते हुए भी द्यावा और पृथिवी को संयोजित किया । आपकी यह महिमा विख्यात है॥५॥

प्र सू त इन्द्र प्रवता हरिभ्यां प्र ते वज्रः प्रमृणन्नेतु शत्रून् ।

जहि प्रतीचो अनूचः पराचो विश्वं सत्यं कृणुहि विष्टमस्तु ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! हरितवर्ण वाले अश्वों से युक्त आपका रथ उत्तम मार्ग से आगे बढ़े। आपका वज्र शत्रुओं को मारते हुए आगे बढ़े। आप आगे से आने वाले, पीछे से आने वाले और दूर से आने वाले शत्रुओं का हनन करें । लोगों में वह सामर्थ्य भरें, जिससे विश्व सत्य कर्म में प्रवृत्त हो सके॥६॥

यस्मै धायुरदधा मर्त्यायाभक्तं चिद्भजते गेह्यं सः ।
भद्रा त इन्द्र सुमतिर्घृताची सहस्रदाना पुरुहूत रातिः ॥७॥

हे पुरुहूत इन्द्रदेव ! ऐश्वर्यधारक आप, जिस मनुष्य को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, वह पहले अप्राप्त पशु, गृह आदि वैभव प्राप्त करता है । घृत, हव्यादि से प्रफुल्लित मन से, प्राप्त आपका अनुग्रह कल्याणकारी होता हैं। आपका दान विपुल ऐश्वर्य से परिपूर्ण हो॥७॥

सहदानुं पुरुहूत क्षियन्तमहस्तमिन्द्र सं पिणक्कुणारुम् ।
अभि वृत्रं वर्धमानं पियारुमपादमिन्द्र तवसा जघन्थ ॥८॥

हे पुरुहूत इन्द्रदेव ! आप दानशीलों को आश्रय देने वाले हैं। आपने घोर गर्जनशील वृत्र को हस्तहीन कर, छिन्न-विच्छिन्न कर दिया । हे इन्द्रदेव ! आपने विवर्द्धमान और हिंसक वृत्र को पादहीन करके बलपूर्वक मारा था॥८॥

नि सामनामिषिरामिन्द्र भूमिं महीमपारां सदने ससत्थ ।
अस्तभ्नाद्द्यां वृषभो अन्तरिक्षमर्षन्त्वापस्त्वयेह प्रसूताः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अत्यन्त व्यापक विस्तार वाली पृथ्वों को अन्नादि प्रदात्री और समभाव सम्पन्न करके उपयुक्त स्थान पर स्थापित किया है । हे अभीष्टवर्षक इन्द्रदेव ! आपने अन्तरिक्ष और द्युलोक को भी धारण किया हैं । आपके द्वारा निस्सृत जल-प्रवाह यहाँ भूमि पर बहें॥९॥

अलातृणो वल इन्द्र व्रजो गोः पुरा हन्तोर्भयमानो व्यार ।
सुगान्पथो अकृणोन्निरजे गाः प्रावन्वाणीः पुरुहूतं धमन्तीः ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! सूर्य रश्मि समूह पर आधिपत्य रखने वाला, संग्रहशील, वल नामक असुर आपके वज्र से भयभीत होकर क्षत-विक्षत हुआ । तदनन्तर आपने जल-प्रवाहों के बहने के लिए मार्ग को सुगम कर दिया। स्तुत्य और बहुतों द्वारा आवाहन किये गये इन्द्रदेव से प्रेरित होकर शब्द करते हुए जल-प्रवाह बहने लगे॥१०॥

एको द्वे वसुमती समीची इन्द्र आ पप्रौ पृथिवीमुत द्याम् ।
उतान्तरिक्षादभि नः समीक इषो रथीः सयुजः शूर वाजान् ॥११॥

इन्द्रदेव ने अकेले ही पृथिवी और द्यावा को परस्पर संगत और धन संयुक्त करके पूर्ण किया है । हे शूरवीर . इन्द्रदेव ! उत्तम रथी आप वेगपूर्वक गमनशील अभ्यों को रथ से जोड़कर, हमारे बीच उपस्थित होने की कृपा करें॥११॥

दिशः सूर्यो न मिनाति प्रदिष्टा दिवेदिवे हर्यश्वप्रसूताः ।
सं यदानळध्वन आदिदश्वैर्विमोचनं कृणुते तत्त्वस्य ॥१२॥

सूर्य, इन्द्रदेव द्वारा प्रेरित और गमन के लिए निश्चित दिशाओं का ही अनुसरण करते हैं। वे जब अश्वों द्वारा गमन पथ पूरा कर लेते हैं, तभी अश्वों को मुक्त करते हैं । यह भी इन्द्रदेव के लिए ही करते हैं॥१२॥

दिदृक्षन्त उषसो यामन्नक्तोर्विवस्वत्या महि चित्रमनीकम् ।
विश्वे जानन्ति महिना यदागादिन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि ॥१३॥

रात्रि को समाप्त करती हुई उषा के उदित होने पर, सभी मनुष्य उन महान् और विचित्र सूर्यदेव के तेज के दर्शन की इच्छा करते हैं। जब उषा आगमन करती है, तब लोग इन्द्रदेव के कल्याणकारी यज्ञादि महान् कर्मों को करना अपना कर्तव्य समझते हैं॥१३॥

महि ज्योतिर्निहितं वक्षणास्वामा पक्वं चरति बिभ्रती गौः ।
विश्वं स्वाद्म सम्भृतमुस्रियायां यत्सीमिन्द्रो अदधाद्भोजनाय ॥१४॥

इन्द्रदेव ने जल-प्रवाहों में महान् तेज को स्थापित किया है। उन्होंने जल से अधिक स्वादिष्ट दूध, घृतादि भोजन के लिए गौओं में स्थापित किया है । नव प्रसूता गाय दूध धारण करती हुई विचरण करती है॥१४॥

इन्द्र दृह्य यामकोशा अभूवन्यज्ञाय शिक्ष गृणते सखिभ्यः ।
दुर्मायवो दुरेवा मर्त्यासो निषङ्गिणो रिपवो हन्त्वासः ॥१५॥

हे इन्द्रदेव !आप दृढ़ हों, क्योंकि शत्रुओं ने अवरोध उत्पन्न किया है । आप यज्ञ और स्तुति करने वाले मित्रों को वाञ्छित मार्ग में प्रेरित करें ।शस्त्रादि प्रहारक, कुमार्गगामी, बाणादि धारक शत्रु आपके द्वारा मारने योग्य हैं॥१५॥

सं घोषः शृण्वेऽवमैरमित्रैर्जही न्येष्वशनिं तपिष्ठाम् ।
वृश्चेमधस्ताद्वि रुजा सहस्व जहि रक्षो मघवन्नन्धयस्व ॥१६॥

हे इन्द्रदेव ! समीपस्थ शत्रुओं द्वारा छोड़े गये आयुधों का शब्द सुनाई देता है। संताप देने वाले आयुधों द्वारा आप उन शत्रुओं को विनष्ट करें, उन्हें समूल नष्ट करें । राक्षसों को प्रताड़ित करें, पराभूत करें और उनका वध करके यज्ञ में प्रवृत्त हों॥१६॥

उद्वृह रक्षः सहमूलमिन्द्र वृश्चा मध्यं प्रत्यग्रं शृणीहि ।
आ कीवतः सललूकं चकर्थ ब्रह्मद्विषे तपुषिं हेतिमस्य ॥१७॥

हे इन्द्रदेव ! आप राक्षसों का समूल उच्छेदन करें । उनके मध्य भाग का छेदन करें । उनके अग्रभाग को नष्ट करें । लोभी राक्षसों को दूर करें । श्रेष्ठ ज्ञान-कर्म से द्वेष करने वालों पर भीषण अस्त्रों का प्रहार करें॥१७॥

स्वस्तये वाजिभिश्च प्रणेतः सं यन्महीरिष आसत्सि पूर्वीः ।
रायो वन्तारो बृहतः स्यामास्मे अस्तु भग इन्द्र प्रजावान् ॥१८॥

हे जगत्-नियामक इन्द्रदेव ! हमें कल्याण के लिए अश्वों से युक्त करें । जब आप हमारे निकट हों, तब हम विपुल अन्न और प्रभूत धनों के स्वामी हों । हमें पुत्र-पौत्रादि से युक्त ऐश्वर्य की प्राप्ति हो॥१८॥

आ नो भर भगमिन्द्र द्युमन्तं नि ते देष्णस्य धीमहि प्ररेके ।
ऊर्व इव पप्रथे कामो अस्मे तमा पृण वसुपते वसूनाम् ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें तेजस्विता-सम्पन्न ऐश्वर्य से अभिपूरित करें। आप दानशील हैं। हम आपके दान को धारण करने वाले हों । हमारी कामनाएँ बड़वानल के सदृश प्रवृद्ध हुई हैं। हे धनों में श्रेष्ठ धन के स्वामी इन्द्रदेव ! आप हमारी कामनाओं को पूर्ण करें॥१९॥

इमं कामं मन्दया गोभिरश्वैश्चन्द्रवता राधसा पप्रथश्च ।
स्वर्यवो मतिभिस्तुभ्यं विप्रा इन्द्राय वाहः कुशिकासो अक्रन् ॥२०॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी अभिलाषा को पूर्ण करें । हमें गौ, अश्व और हर्षप्रद ऐश्वर्य से सम्पन्न करें । स्वर्गादि सुख के अभिलाषी और बुद्धिमान् कुशिक वंशजों ने बुद्धिपूर्वक स्तोत्रों का सम्पादन किया है॥२०॥

आ नो गोत्रा दर्दहि गोपते गाः समस्मभ्यं सनयो यन्तु वाजाः ।
दिवक्षा असि वृषभ सत्यशुष्मोऽस्मभ्यं सु मघवन्बोधि गोदाः ॥२१॥

हे स्वर्ग के स्वामी इन्द्रदेव !आप मेघों को विदीर्ण कर हमें जल प्रदान करें।हमें उपभोग योग्य अन्न प्रदान करें ।आप द्युलोक में व्याप्त होकर स्थित हैं । हे सत्यबल-सम्पन्न और ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! ज्ञान-प्रदाता आप हमें सर्वोत्कृष्ट ज्ञान प्रदान करें॥२१॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥२२॥

धन-धान्य से सम्पन्न, वैभवशाली, युद्धों में उत्साहपूर्वक विजय प्राप्त करने वाले, भयंकर शत्रुसेना का विनाश करने वाले, याजकों द्वारा

किये गये स्तुति गान का श्रवण करने वाले हे इन्द्रदेव ! हमें आश्रय की कामना करते हुए आपका आवाहन करते हैं॥२२॥

सूक्त ३१

ऋषि – कुशिक ऐषीरथि: गाथिनों विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

शासद्वह्निर्दुहितुर्नप्त्यं गाद्विद्वाँ ऋतस्य दीधितिं सपर्यन् ।
पिता यत्र दुहितुः सेकमृञ्जन्त्सं शग्म्येन मनसा दधन्वे ॥१॥

विद्वान् पुत्रहीन पिता (वह्नि), सामर्थ्यवान् जामाता का सत्कार करते हुए अपनी पुत्री के पुत्र को, पुत्र रूप में अपना लेता है जब पिता अपनी पुत्री को विवाह योग्य बना देता है, तब मन अत्यन्त सुख को अनुभव करता है॥१॥

न जामये तान्वो रिक्थमारैक्चकार गर्भं सनितुर्निधानम् ।
यदी मातरो जनयन्त वह्निमन्यः कर्ता सुकृतोरन्य ऋन्धन् ॥२॥

भाई अपनी बहिन को पैतृक धन का भाग नहीं देता, अपितु उसको पति के लिए नव निर्माण करने में सक्षम बनाता है। माता-पिता पुत्र और पुत्री को उत्पन्न करते हैं, तो उनमें से एक (पुत्र) सर्वोत्कृष्ट पैतृक कर्म सम्पन्न करता है और अन्य (पुत्री) सम्मान युक्त शोभा को धारण करती है॥२॥

अग्निर्जज्ञे जुह्वा रेजमानो महस्पुत्राँ अरुषस्य प्रयक्षे ।
महान्गर्भो मह्या जातमेषां मही प्रवृद्धर्यश्वस्य यज्ञैः ॥३॥

महान् तेजस्वी हे इन्द्रदेव ! आपके यज्ञ के लिए ज्वालाओं से कम्पायमान अग्निदेव ने अनेकों पुत्रों (रश्मियों) को उत्पन्न किया है। इन रश्मियों का महान् गर्भ जलरूप है । ओषधि रूपी उत्पत्ति भी महान् है । हे इन्द्रदेव (हरि-अश्व वाहक) ! आपके यज्ञ के कारण ये रश्मियाँ महानता की ओर प्रवृत्त हुई हैं॥३॥

अभि जैत्रीरसचन्त स्पृधानं महि ज्योतिस्तमसो निरजानन् ।
तं जानतीः प्रत्युदायन्नुषासः पतिर्गवामभवदेक इन्द्रः ॥४॥

शत्रुओं पर हमेशा विजय प्राप्त करने वाले मरुद्गण युद्धरत इन्द्रदेव के साथ जुड़ गये ।उन्होंने महान् ज्योति (सूर्य) को गहन तमिस्रा से मुक्त किया, उसे जानकर उषायें भी उदित हुई । इन सभी क्रियाओं के एक मात्र अधिपति इन्द्रदेव ही हैं॥४॥

वीळौ सतीरभि धीरा अतृन्दन्प्राचाहिन्वन्मनसा सप्त विप्राः ।
विश्वामविन्दन्पथ्यामृतस्य प्रजानन्नित्ता नमसा विवेश ॥५॥

बुद्धिमान् और मेधावी सात ऋषियों ने सुदृढ़ पर्वत (विशाल आकार) द्वारा रोकी गई गौओं (रश्मि पुञ्ज) को देखा । ऊर्ध्वगामी श्रेष्ठ चिन्तनरत निर्मल मन से उन्होंने यज्ञ के मार्ग का अनुगमन करते हुए, उस रश्मि पुञ्ज को प्राप्त किया। अषियों के इन समस्त कर्मों के द्रष्टा इन्द्रदेव स्तोत्रों के साथ यज्ञ में प्रविष्ट हुए॥५॥

विदद्यदी सरमा रुग्णमद्रेर्महि पाथः पूर्व्यं सध्यक्कः ।

अग्रं नयत्सुपद्यक्षराणामच्छा रवं प्रथमा जानती गात् ॥६॥

सरमा ने पर्वतकाय वृत्र (अन्धकार) के भग्न स्थल को जान लिया, तब इन्द्रदेव ने एक सीधा और विस्तृत पथ विनिर्मित किया । उत्तम पैरों वाली सरमा इन्द्रदेव को उस पथ पर आगे ले गई । पर्वत में असुर द्वारा छिपाई गई गौओं (प्रकाश किरणों) के शब्द को सर्वप्रथम सुनकर सरमा ने इन्द्रदेव के साथ उनको प्राप्त किया॥६॥

अगच्छदु विप्रतमः सखीयन्नसूदयत्सुकृते गर्भमद्रिः ।
ससान मर्यो युवभिर्मखस्यन्नथाभवदङ्गिराः सद्यो अर्चन् ॥७॥

श्रेष्ठतम ज्ञानी और उत्तम कर्मा इन्द्रदेव अंगिराओं की मित्रता की इच्छा से पर्वत के समीप पहुँचे। पर्वताकार असुर ने अपने गर्भ में छिपी गौओं (किरणों) को प्रकट किया । इन्द्रदेव ने मरुतों की सहायता से युद्ध करके शत्रुओं को मारते हुए गौओं (किरणों) को प्राप्त किया । तदनन्तर अंगिराओं ने इन्द्रदेव की शीघ्र ही अर्चना प्रारम्भ की॥७॥

सतःसतः प्रतिमानं पुरोभूर्विश्वा वेद जनिमा हन्ति शुष्णम् ।
प्र णो दिवः पदवीर्गव्युरर्चन्त्सखा सखीँरमुञ्चन्निरवद्यात् ॥८॥

शुष्णासुर का वध करने वाले, युद्धों में अग्रणी रहकर सेना का नेतृत्व करने वाले इन्द्रदेव, उत्पन्न होने वाले समस्त पदार्थों को जानते हुए उनका प्रतिनिधित्व करते हैं। ऐसे सन्मार्गगामी और गो द्रव्य अभिलाषी इन्द्रदेव मित्ररूप पूजनीय होकर द्युलोक से हम मित्रों को पाप से छुड़ायें॥८॥

नि गव्यता मनसा सेदुरर्कैः कृण्वानासो अमृतत्वाय गातुम् ।
इदं चिन्नु सदनं भूर्येषां येन मासाँ असिषासन्नृतेन ॥९॥

अंगिरावंशी ऋषिगण ज्ञान प्राप्ति की अभिलाषा करते हुए यज्ञ में प्रवृत्त हुए। उन्होंने यज्ञ में बैठकर स्तोत्रों से अमरता प्राप्त करने के लिए उपाय किया। यह यज्ञ उनको वह विस्तृत स्थान है, जिसके माध्यम से उन्होंने महीनों का विभाजन किया॥९॥

सम्पश्यमाना अमदन्नभि स्वं पयः प्रजस्य रेतसो दुघानाः ।
वि रोदसी अतपद्घोष एषां जाते निष्ठामदधुर्गोषु वीरान् ॥१०॥

अंगिरा ऋषि अपनी गौओं को सम्मुख देखकर पूर्व की तरह उनसे वीर्यवर्द्धक दूध दुहते हुए हर्षित हुए थे। उनका हर्षयुक्त उद्घोष आकाश और पृथ्वी में व्याप्त हुआ। उन्होंने गौओं की उत्पत्ति को भी निष्ठापूर्वक धारण किया और गौओं की रक्षा के लिए वीर पुरुषों को नियुक्त किया॥१०॥

स जातेभिर्वृत्रहा सेदु हव्यैरुदुस्रिया असृजदिन्द्रो अर्कैः ।
उरूच्यस्मै घृतवद्धरन्ती मधु स्वाद्म दुदुहे जेन्या गौः ॥११॥

इन्द्रदेव ने मरुतों की सहायता द्वारा वृत्र का वध किया । वे पूजनीय और हव्य योग्य हैं। उन्होंने जल-प्रवाह उत्पन्न किया । घृत-दुग्ध धारण-कत्रीं, अतिशय पूज्य और प्रशंसनीय गाय ने उन इन्द्रदेव के लिए मधुर और स्वादिष्ट दूध उपलब्ध कराया॥११॥

पित्रे चिच्चक्रुः सदनं समस्मै महि त्विषीमत्सुकृतो वि हि ख्यन् ।

विष्कभ्नन्तः स्कम्भनेना जनित्री आसीना ऊर्ध्वं रभसं वि मिन्वन् ॥१२॥

अंगिराओं ने सर्वपालक इन्द्रदेव के लिए महान् दीप्तिमान् स्थान को संस्कारित किया, वहाँ वे स्तुति करने लगे। उत्तम कर्मशील अंगिराओं ने यज्ञ में आसीन होकर सबको उत्पन्न करने वाली द्यावा-पृथिवी के मध्य स्तम्भ रूप अन्तरिक्ष को थामकर वेगवान् इन्द्रदेव को द्युलोक में संस्थापित किया॥१२॥

मही यदि धिषणा शिश्नथे धात्सद्योवृधं विभ्वं रोदस्योः ।
गिरो यस्मिन्ननवद्याः समीचीर्विश्वा इन्द्राय तविषीरनुत्ताः ॥१३॥

सबके हितों को धारण करने वाले, सतत वृद्धि करने वाले इन्द्रदेव के निमित्त श्रेष्ठ स्तोत्रों का गान किया गया। इससे द्यावा-पृथिवीं की समस्त शक्तियों पर उनका एकाधिकार हो गया॥१३॥

मह्या ते सख्यं वश्मि शक्तीरा वृत्रघ्ने नियुतो यन्ति पूर्वीः ।
महि स्तोत्रमव आगन्म सूरेरस्माकं सु मघवन्बोधि गोपाः ॥१४॥

वृत्र नामक असुर का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! हम आपकी मित्रता और महती शक्ति पाने के लिए आपसे प्रार्थना करते हैं। अनेक अश्व आपको वहन करने के लिए आते हैं। हम स्तोतागण आपके निमित्त स्तोत्र पहुँचाते हैं । हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आष ज्ञान-रक्षक हैं। हमें दिव्य ज्ञान से प्रेरित करें॥१४॥

महि क्षेत्रं पुरु श्चन्द्रं विविद्वानादित्सखिभ्यश्चरथं समैरत् ।
इन्द्रो नृभिरजनद्दीद्यानः साकं सूर्यमुषसं गातुमग्निम् ॥१५॥

सर्वविद् इन्द्रदेव ने अपने मित्रों के लिए महान् क्षेत्र और विपुल तेजस्वी धनों का दान किया। तदनन्तर उत्तम गौओं का भी दान किया। उन दीप्तिमान् इन्द्र देव ने मरुतों के साथ सूर्य, उषा एवं अग्नि को और उनके मार्ग को बनाया॥१५॥

अपश्चिदेष विभ्वो दमूनाः प्र सध्रीचीरसृजद्विश्वश्चन्द्राः ।
मध्वः पुनानाः कविभिः पवित्रैर्द्युभिर्हिन्वन्त्यक्तुभिर्धनुत्रीः ॥१६॥

शत्रुदमनशील इन्द्रदेव ने परस्पर संगठित होकर बहने वाले एवं सबको आनन्दित करने वाले जल को उत्पन्न किया । वे अन्न उत्पादक जल प्रवाह, अग्नि, सूर्य एवं वायु के द्वारा शोधित-पवित्र होकर मधुर सोमरसों को दिन-रात प्रेरित करते रहते हैं॥१६॥

अनु कृष्णे वसुधिती जिहाते उभे सूर्यस्य मंहना यजत्रे ।
परि यत्ते महिमानं वृजध्यै सखाय इन्द्र काम्या ऋजिप्याः ॥१७॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार सूर्यशक्ति के द्वारा अपार वैभव से सम्पन्न महिमामण्डित दिन और रात्रि एक दूसरे का अनुगमन करते हुए निरन्तर गतिशील हैं, उसी प्रकार सुगम मार्गों से निरन्तर प्रवाहित होने वाले मित्र और मरुद्देव शत्रुओं का विनाश करने का सम्पूर्ण बल आपसे ही प्राप्त करते हैं॥१७॥

पतिर्भव वृत्रहन्त्सूनृतानां गिरां विश्वायुर्वृषभो वयोधाः ।
आ नो गहि सख्येभिः शिवेभिर्महान्महीभिरूतिभिः सरण्यन् ॥१८॥

हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! आप अविनाशी, अभीष्टवर्धक और अन्न-प्रदाता हैं। हमारे द्वारा प्रेमपूर्वक की गई स्तुतियों को स्वीकार करें। आप यज्ञ में जाने के अभिलाषी और महान् हैं। अपनी महती और कल्याणकारी रक्षण-सामर्थ्यों से युक्त होकर मैत्री भाव सहित हम सब पर अनुग्रह करें॥१८॥

तमङ्गिरस्वन्नमसा सपर्यन्नव्यं कृणोमि सन्यसे पुराजाम् ।
द्रुहो वि याहि बहुला अदेवीः स्वश्च नो मघवन्त्सातये धाः ॥१९॥

पुरातन दिव्यपुरुष हे इन्द्रदेव ! हम नमन-अभिवादन सहित आपकी पूजा करते हैं। आपके निमित्त हम नवीन स्तोत्रों को सम्पादित करते हैं । हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! दैवीय गुणरहित द्रोहियों को हमसे दूर करें और हमारे उपयोग के लिए धनादि प्रदान करें॥१९॥

मिहः पावकाः प्रतता अभूवन्त्स्वस्ति नः पिपृहि पारमासाम् ।
इन्द्र त्वं रथिरः पाहि नो रिषो मक्षूमक्षू कृणुहि गोजितो नः ॥२०॥

हे इन्द्रदेव ! पवित्र वर्षणशील (सिंचनकारी) जल चारों ओर फैला है । हमारे कल्याण के लिए जलाशयों के किनारों को जल से पूर्ण करें । तीव्रगामी रथ से युक्त हे देव ! हमें शत्रुओं से संघर्ष करने की सामर्थ्य तथा गौओं के रूप में अपार वैभव प्रदान करें॥२०॥

अदेदिष्ट वृत्रहा गोपतिर्गा अन्तः कृष्णाँ अरुषैर्धामभिर्गात् ।
प्र सूनृता दिशमान ऋतेन दुरश्च विश्वा अवृणोदप स्वाः ॥२१॥

वृत्रहन्ती और दिव्य शक्तियों के संगठक स्वामी इन्द्रदेव, हमें सर्वोत्तम ज्ञान से अभिपूरित करें । वे हमारे आन्तरिक शत्रुओं को अपने

तेजस्वी पराक्रम द्वारा विनष्ट कर दें । यज्ञ में हमारी प्रीतिकर स्तुतियों को स्वीकार करते हुए वे हमारे सम्पूर्ण दुर्गुणों को दूर करें॥२१॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥२२॥

धन-धान्य से सम्पन्न ऐश्वर्यवान् हे इन्द्रदेव ! आप हमारी प्रार्थनाओं से प्रसन्न होकर युद्धों में अपना पराक्रम दिखाते हैं और शत्रुओं पर विजय प्राप्त करते हैं। हम अपनी रक्षा के लिए आपको आवाहन करते हैं॥२२॥

सूक्त ३२

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

इन्द्र सोमं सोमपते पिबेमं माध्यंदिनं सवनं चारु यत्ते ।
प्रप्रुथ्या शिप्रे मघवन्नृजीषिन्विमुच्या हरी इह मादयस्व ॥१॥

सोम के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आप इस मध्य-दिवस के सवन पर समर्पित सोमरस का पान करें । ऐश्वर्यवान् और सोमाभिलाषी हे इन्द्रदेव ! आप अपने दोनों अश्वों को यहाँ खोलकर उनके मुख को (आहार से परिपूर्ण करके उन्हें तृप्त करें॥१॥

गवाशिरं मन्थिनमिन्द्र शुक्रं पिबा सोमं ररिमा ते मदाय ।
ब्रह्मकृता मारुतेना गणेन सजोषा रुद्रैस्तृपदा वृषस्व ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप भली प्रकार मथकर दुग्धादि मिश्रित तेजस्वी सोमरस का पान करें । हम आपके हर्ष के लिए सोम प्रदान करते हैं। स्तोता मरुद्गणों और रुद्रों के साथ संयुक्त होकर आप सोम से तृप्त हों तथा हमारी कामनाओं को पूर्ण करें॥२॥

ये ते शुष्मं ये तविषीमवर्धन्नर्चन्त इन्द्र मरुतस्त ओजः ।

माध्यंदिने सवने वज्रहस्त पिबा रुद्रेभिः सगणः सुशिप्र ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आपके शत्रुनाशक बल को, सैन्यबल को, पराक्रम तथा सामर्थ्य को ये मरुद्गण उत्तम स्तुतियों द्वारा बढ़ाते हैं । वज्रवत् हाथों वाले, शिरस्त्राण युक्त हे इन्द्रदेव ! उन रुद्रपुत्र मरुतों के साथ आप माध्यन्दिन सवन में सोम पान करें॥३॥

त इन्वस्य मधुमद्विविप्र इन्द्रस्य शर्धो मरुतो य आसन् ।
येभिर्वृत्रस्येषितो विवेदामर्मणो मन्यमानस्य मर्म ॥४॥

इन्द्रदेव के सैन्यबल को बढ़ाने वाले मरुद्गणों ने उनको मधुर वचनों से प्रेरित किया । मरुद्गणों से प्रेरित होकर इन्द्रदेव ने मर्म न जान सकने वाले एवं अपने को महान् समझने वाले वृत्र के मर्म को जान लिया और उसका वध किया॥४॥

मनुष्वदिन्द्र सवनं जुषाणः पिबा सोमं शश्वते वीर्याय ।
स आ ववृत्स्व हर्यश्व यज्ञैः सरण्युभिरपो अर्णा सिसर्षि ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप मनु के यज्ञ के समान हमारे यज्ञ का सेवन करते हुए शाश्वत बल प्राप्ति के लिए सोमपान करें । हरि संज्ञक अश्वों के स्वामी हे इन्द्रदेव ! यजनीय और गतिवान् मरुतों के साथ आप हमारे यज्ञ में आएँ तथा हमारे कल्याण के लिए जल वर्षा करें॥५॥

त्वमपो यद्ध वृत्रं जघन्वाँ अत्याँ इव प्रासृजः सर्तवाजौ ।
शयानमिन्द्र चरता वधेन वव्रिवांसं परि देवीरदेवम् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अन्तरिक्ष में विद्यमान जल को रोककर बैठे हुए तेजहीन, शयन करते हुए वृत्र को वेगवान वज्र के प्रहार से मार दिया। उसके द्वारा रोकी गई जल-राशि को अश्वों की भाँति मुक्त करा दिया॥६॥

यजाम इन्नमसा वृद्धमिन्द्रं बृहन्तमृष्वमजरं युवानम् ।
यस्य प्रिये ममतुर्यज्ञियस्य न रोदसी महिमानं ममाते ॥७॥

यज्ञों में समर्पित हव्यरूपी आहार पाकर प्रवृद्ध होने वाले महान् , अतिश्रेष्ठ अजर, सर्वदा तरुण रहने वाले इन्द्रदेव की हम विधिवत् पूजा करते हैं। उन यजन योग्य इन्द्रदेव की महिमा को द्यावा-पृथिवी भी माप नहीं सकते॥७॥

इन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि व्रतानि देवा न मिनन्ति विश्वे ।
दाधार यः पृथिवीं द्यामुतेमां जजान सूर्यमुषसं सुदंसाः ॥८॥

पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक को धारण करने वाले, उषा एवं सूर्यदेव को उत्पन्न करने वाले महान् पराक्रमी इन्द्रदेव के श्रेष्ठ कार्यों और व्रतों को समस्त देवशक्तियाँ मिलकर भी रोक नहीं सकतीं॥८॥

अद्रोघ सत्यं तव तन्महित्वं सद्यो यज्जातो अपिबो ह सोमम् ।
न द्याव इन्द्र तवसस्त ओजो नाहा न मासाः शरदो वरन्त ॥९॥

हे द्रोहरहित इन्द्रदेव !आपकी महिमा ही वास्तविक हैं, क्योंकि आप प्रकट होकर ही सोमपान करते हैं। आप अत्यन्त बलशाली हैं ।स्वर्ग आदि लोक तथा दिवस, मास और वर्ष भी आपके तेजका सामना नहीं कर सकते॥९॥

त्वं सद्यो अपिबो जात इन्द्र मदाय सोमं परमे व्योमन् ।
यद्ध द्यावापृथिवी आविवेशीरथाभवः पूर्व्यः कारुधायाः ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आपने उत्पन्न होकर शीघ्र ही परम आकाश में रहकर हर्ष प्राप्ति के लिए सोमपान किया । जब आपने पृथ्वी और द्युलोक में व्यापक रूप से विस्तार कर लिया,तब सभी योजकों की मनोकामनाओं को पूर्ण किया॥१०॥

अहन्नहिं परिशयानमर्ण ओजायमानं तुविजात तव्यान् ।
न ते महित्वमनु भूदध द्यौर्यदन्यया स्फिग्या क्षामवस्थाः ॥११॥

महान् पराक्रमी हे इन्द्रदेव ! आप विभिन्न लोकों के समस्त पदार्थों को उत्पन्न करने वाले हैं। आपने जल को घेरकर शयन करने वाले अहि नामक असुर को मारा। जब आपने जल से पृथ्वी को अभिषिक्त करके सँभाला, उस समय आपकी महिमा की समानता द्युलोक सहित अन्य कोई भी नहीं कर सका॥११॥

यज्ञो हि त इन्द्र वर्धनो भूदुत प्रियः सुतसोमो मियेधः ।
यज्ञेन यज्ञमव यज्ञियः सन्यज्ञस्ते वज्रमहिहत्य आवत् ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! हमारा यज्ञ आपको प्रवर्धित करता है । यज्ञादि कार्य में अभिषुत किया हुआ सोम आपको अतिशय प्रिय हैं । यजन-योग्य आप हमारे यज्ञ में आकर उसको संरक्षित करें॥१२॥

यज्ञेनेन्द्रमवसा चक्रे अर्वागैनं सुम्नाय नव्यसे ववृत्याम् ।
यः स्तोमेभिर्वावृधे पूर्व्येभिर्यो मध्यमेभिरुत नूतनेभिः ॥१३॥

जो इन्द्रदेव अति पुरातन, मध्यकालीन और नूतन स्तोत्रों से प्रवृद्ध हुए हैं, उनको स्तोतागण संरक्षण प्राप्ति के लिए यज्ञ के समीप ले आएँ । हम भी नवीनतम साधन एवं सुख प्राप्ति के लिए इन्द्रदेव का आवाहन करें॥१३॥

विवेष यन्मा धिषणा जजान स्तवै पुरा पार्यादिन्द्रमह्नः ।
अंहसो यत्र पीपरद्यथा नो नावेव यान्तमुभये हवन्ते ॥१४॥

जब हमारे मन में इन्द्रदेव की स्तुति करने की इच्छा उत्पन्न होती हैं, उसी समय हम स्तुति करते हैं। हम दूरवर्ती (भाव) अमंगलकारों दिन के पहले ही स्तुति करते हैं, जिससे वे इन्द्रदेव हमें दु:खों से मुक्ति दिलाएँ । जैसे नाव वाले को दोनों तटों के लोग बुलाते हैं, वैसे ही इन्द्रदेव को हमारे मातृ-पितृ दोनों पक्षों के लोग बुलाते हैं॥१४॥

आपूर्णो अस्य कलशः स्वाहा सेक्तेव कोशं सिसिचे पिबध्यै ।
समु प्रिया आववृत्रन्मदाय प्रदक्षिणिदभि सोमास इन्द्रम् ॥१५॥

यह सोमरस से परिपूर्ण कलश इन्द्रदेव के पीने के लिए हैं। जैसे सिंचनकर्ता क्षेत्र को सिंचित करते हैं. वैसे ही हम इन्द्रदेव को स्वाहाकार सहित सोमरस से सींचते हैं। प्रिय सोम इन्द्रदेव के मन को प्रमुदित करने के लिए प्रदक्षिणा करता हुआ उनके समीप पहुंचे॥१५॥

न त्वा गभीरः पुरुहूत सिन्धुर्नाद्रयः परि षन्तो वरन्त ।
इत्था सखिभ्य इषितो यदिन्द्रा दव्ह्वं चिदरुजो गव्यमूर्वम् ॥१६॥

बहुतों द्वारा आवाहन किये जाने वाले है इन्द्रदेव ! मित्रों द्वारा प्रेरित होकर आपने,रश्मि समूह को छिपाने वाले सुदृढ़ मेघों को फोड़ा। गम्भीर समुद्र और चारों ओर विस्तृत पर्वत भी आपको नहीं रोक सके॥१६॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥१७॥

हम अपने जीवन-संग्राम में संरक्षण प्राप्ति के लिए इन्द्रदेव को बुलाते हैं। वे पवित्र करने वाले सभी मनुष्यों के नियन्ता, हमारी स्तुतियों को सुनने वाले, उम, युद्धों में शत्रुओं का विनाश करने वाले, धनों के विजेता और ऐश्वर्यवान् है॥१७॥

सूक्त ३३

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र:, ४, ६, ८, १० नद्य: ऋषिका:
देवता – नद्य :४,८,१० विश्वामित्र, ६, ७, इन्द्र । छंद – त्रिष्टुप, १३ अनुष्टुप

प्र पर्वतानामुशती उपस्थादश्वे इव विषिते हासमाने ।
गावेव शुभ्रे मातरा रिहाणे विपाट् छुतुद्री पयसा जवेते ॥१॥

बन्धन से विमुक्त होकर हर्षयुक्त नाद करते हुए दो घोड़ियों की भाँति अथवा अपने बछड़ों से सस्नेह मिलन के लिए उतावली, दो गायों की भाँति विपाट् (व्यास) और शुद्र (सतलज) नाम की नदियाँ पर्वत की गोद में निकलकर समुद्र से मिलने की अभिलाषा के साथ प्रबल वेग से प्रवाहित हो रही हैं॥१॥

इन्द्रेषिते प्रसवं भिक्षमाणे अच्छा समुद्रं रथ्येव याथः ।
समाराणे ऊर्मिभिः पिन्वमाने अन्या वामन्यामप्येति शुभ्रे ॥२॥

हे नदियों ! आप दोनों इन्द्र द्वारा प्रेरित होकर सम्यक् रूप से अनुकूलतापूर्वक प्रवहमान हों । हे उज्ज्वला ! अपनी तरंगों से सबको तृप्त करती हुई आप दोनों धान्य उत्पत्ति में समर्थ हों। दो रथियों के समान समुद्र की ओर गमन करे॥३॥

अच्छा सिन्धुं मातृतमामयासं विपाशमुर्वीं सुभगामगन्म ।
वत्समिव मातरा संरिहाणे समानं योनिमनु संचरन्ती ॥३॥

ऋषि विश्वामित्र कहते हैं कि हम मैह-सिक्त मातृ-तुल्य शुतुद्रि (सतलज नदी के पास गये और विपुल ऐश्वर्य-शि से सम्पन्न विपाशा नदी के पास गये । बछड़े के प्रति स्नेहाभिलाषिणी गौओं के समान में नदियाँ एक हौं लक्ष्य-स्थान समुद्र की ओर सतत बहती हुई जा रहीं हैं॥३॥

एना वयं पयसा पिन्वमाना अनु योनिं देवकृतं चरन्तीः ।
न वर्तवे प्रसवः सर्गतक्तः किंयुर्विप्रो नद्यो जोहवीति ॥४॥

हुम नदियों अपने जल-प्रवाह से सबको तृप्त करती हुई देवों द्वारा स्थापित स्थान की ओर बहती हुई ज्ञा रही हैं। अनवरत प्रयमान हम अपने प्रयास से कभी भी विश्राम नहीं लेतीं हैं (यह तो हमारा सहज सामान्य क्रम हैं। फिर ब्राह्मण विश्वामित्र द्वारा हमारी स्तुति क्यों की जा रहीं हैं ?॥४॥

रमध्वं मे वचसे सोम्याय ऋतावरीरुप मुहूर्तमेवैः ।
प्र सिन्धुमच्छा बृहती मनीषावस्युरह्वे कुशिकस्य सूनुः ॥५॥

हे ज्ञलवतों नदियों ! आप हमारे नम्र और मधुर वचनों को सुनकर अपनी गति को एक क्षण के लिए विराम दे दें । हम कुशक पुत्र अपनी रक्षा के लिए महती स्तुतियों द्वारा आप नदियों का भली प्रकार सम्मान करते हैं॥५॥

इन्द्रो अस्माँ अरदद्वज्रबाहुरपाहन्वृत्रं परिधिं नदीनाम् ।
देवोऽनयत्सविता सुपाणिस्तस्य वयं प्रसवे याम उर्वीः ॥६॥

(नदियों की वाणी) हे विश्वामित्र ! बज्रधारी इन्द्रदेव ने हमें स्वोदकर उत्पन्न किया । नदियों के प्रवाह को रोकने वाले वृत्र को उन्होंने मारा । सबके प्रेरक, उत्तम हाथों वाले और दीप्तिमान् इदेव ने हमें बढ़ने के लिए प्रेरित किया। उनकी आज्ञा के अनुसार ही हम जल से परिपूर्ण होकर गमन करती हैं॥६॥

प्रवाच्यं शश्वधा वीर्यं तदिन्द्रस्य कर्म यदहिं विवृश्चत् ।
वि वज्रेण परिषदो जघानायन्नापोऽयनमिच्छमानाः ॥७॥

इन्द्रदेव ने अनि नामक असुर के मारा; उनके वे पराक्रम और कर्म सर्वदा वर्णनीय हैं । जन्य इन्द्रदेव ने अपने चारों ओर स्थित असुरों को मारा, तब जल-प्रवाह समुद्र से मिलने की इच्छा करते हुए प्रवाहित हुआ॥७॥

एतद्वचो जरितर्मापि मृष्ठा आ यत्ते घोषानुत्तरा युगानि ।
उक्थेषु कारो प्रति नो जुषस्व मा नो नि कः पुरुषत्रा नमस्ते ॥८॥

हे स्तोता (विश्वामित्र) ! अपने ये स्तुति-वचन कभी भूलना नहीं । भावी समय में यज्ञों में इन वचनों को उद्घोषणा द्वारा आप हमारी सेवा करें । हम (दोनों नदियाँ) आपको नमस्कार करती हैं। पुरुषों द्वारा सम्पादित कर्मों में कभी भी हमारी उपेक्षा न करें॥८॥

ओ षु स्वसारः कारवे शृणोत ययौ वो दूरादनसा रथेन ।
नि षू नमध्वं भवता सुपारा अधोअक्षाः सिन्धवः स्रोत्याभिः ॥९॥

हे भगिनी रूप (दोनो) नदियों ! हमारी स्तुति भलींप्रकार सुनें । हम आपके पास अति दूरस्थ देश में रथ और शकट को लेकर आये हैं। आप अपने प्रवाज़ों के साथ इतनीं झुक जायें कि रथ की धुरी से नीचे हो जाये, जिससे हम सरलता से पार हो जाये॥९॥

आ ते कारो शृणवामा वचांसि ययाथ दूरादनसा रथेन ।
नि ते नंसै पीप्यानेव योषा मर्यायेव कन्या शश्वचै ते ॥१०॥

हे स्तोता ! हम दोनों नदियाँ) आपको स्तुतियाँ सुनतीं हैं आप दूरस्थ देश से रथ और शकट के साथ आए हैं; इसलिए जैसे माता पुत्र को स्तनपान कराने के लिए अवनत होती है अथवा धर्म पत्नी अपने पति के प्रति नम्र होती हैं, वैसे ही हम आपके लिए अवनत होती हैं (अपने प्रवाह को कम करके आपको जाने का मार्ग प्रदान करती हैं)॥१०॥

यदङ्ग त्वा भरताः संतरेयुर्गव्यन्ग्राम इषित इन्द्रजूतः ।
अर्षादह प्रसवः सर्गतक्त आ वो वृणे सुमतिं यज्ञियानाम् ॥११॥

हे दोनों नदियों ! जब पोषणकर्ता पुरुष आपको पार करना चाहें, तब आपको पार करने के अभिलाषा में ज्ञ-समूह इन्द्रदेव द्वारा प्रेरित होकर आपकी अनुकम्पा में पार हो जायें। आप यज्ञन योग्य हैं। हम प्रतिदिन आपके वेगवान् जल-प्रवाहों की उत्तम स्तुतियाँ करते हैं॥११॥

अतारिषुर्भरता गव्यवः समभक्त विप्रः सुमतिं नदीनाम् ।
प्र पिन्वध्वमिषयन्तीः सुराधा आ वक्षणाः पृणध्वं यात शीभम् ॥१२॥

है नदियों ! भरण-पोषण को लक्ष्य करके आपके पार जाने के अभिलाषीजन पार हो गए। ज्ञानीजनों ने आपके निमित्त उत्तम स्तुतियों को अभिव्यक्त किया। आप अन्नों को प्रात्री और उत्तम ऐश्वर्यवती होकर नहरों को जल से परिपूर्ण करें और शीघ्र गमन करें॥१२॥

उद्व ऊर्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत ।
मादुष्कृतौ व्येनसाघ्न्यौ शूनमारताम् ॥१३॥

हे नदियों ! आपकी तरंगें रथ की धुरी से टकराती रहें । हे दुष्कर्महीना, पापरहिता, अनिन्दनीया नदियों ! आपको कोई बाधा न हों॥१३॥

सूक्त ३४

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

इन्द्रः पूर्भिदातिरद्दासमर्कैर्विदद्वसुर्दयमानो वि शत्रून् ।
ब्रह्मजूतस्तन्वा वावृधानो भूरिदात्र आपृणद्रोदसी उभे ॥१॥

शत्रुओं के गढ़ को ध्वस्त करने वाले महिमावान्, धनवान् इन्द्रदेव ने शत्रुओं को मारते हुए अपनी तेजस्विता से उन्हें भस्म कर दिया। स्तुतियों से प्रेरित और शरीर से वर्द्धित होते हुए विविध अस्त्र-धारक इन्द्रदेव ने द्यावा और पृथिवी दोनों को पूर्ण किया॥१॥

मखस्य ते तविषस्य प्र जूतिमियर्मि वाचममृताय भूषन् ।
इन्द्र क्षितीनामसि मानुषीणां विशां दैवीनामुत पूर्वयावा ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप पूजनीय और बलशाली हैं। आपको विभूषित करते हुए हम अमरत्व-प्राप्ति के लिए प्रेरक स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं। आप हम मनुष्यों और देवों के अग्रगामी हों॥२॥

इन्द्रो वृत्रमवृणोच्छर्धनीतिः प्र मायिनाममिनाद्वर्पणीतिः ।
अहन्व्यंसमुशधग्वनेष्वाविर्धेना अकृणोद्राम्याणाम् ॥३॥

प्रसिद्ध नीतिज्ञ इन्द्रदेव ने वृत्रासुर को रोका । कार्यकुशल इन्द्रदेव ने शत्रुवध की इच्छा करके मायावी असुरों को मारा। उन्होंने वन में छिपे स्कन्धविहीन असुर को नष्ट करके अन्धकार में छिपायौं गयौं गाँओं (किरण को प्रकट किया॥३॥

इन्द्रः स्वर्षा जनयन्नहानि जिगायोशिग्भिः पृतना अभिष्टिः ।
प्रारोचयन्मनवे केतुमह्नामविन्दज्ज्योतिर्बृहते रणाय ॥४॥

स्वर्ग-सुख-प्रेरक इन्द्रदेव ने दिनों में उत्पन्न करके युद्धाभिलाषी मरुतों के साथ शत्रु सेना का पराभव कर उन्हें ज्ञौता । तदनन्तर मनुष्यों के लिए दिनों के प्रज्ञापक (बोधक) सूर्यदेव को प्रकाशित किया। उन्होंने महान् युद्धों में विजय प्राप्ति के निमित्त दिव्य ज्योति (तेजस्विता) को प्राप्त किया॥४॥

इन्द्रस्तुजो बर्हणा आ विवेश नृवद्दधानो नर्या पुरूणि ।
अचेतयद्धिय इमा जरित्रे प्रेमं वर्णमतिरच्छुक्रमासाम् ॥५॥

विपुल सामथ्र्यो को धारण करके नेतृत्वकर्ता की भाँनि इन्द्रदेव ने अवरोधक शत्रु-सेना के मध्य प्रविष्ट होकर उसे छिन्न-भिन्न किया। उन्होंने स्तुतिकर्ताओं के लिए उषा को चँतय किया और उनके शुभ वर्ग की दीप्ति के माईत किया॥५॥

महो महानि पनयन्त्यस्येन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि ।
वृजनेन वृजिनान्त्सं पिपेष मायाभिर्दस्यूँरभिभूत्योजाः ॥६॥

स्तोतागण महान् पराक्रमी इन्द्रदेव के श्रेष्ठ कर्मों का गुणगान करते हैं । वे इन्द्रदेव अपनी सामथ्यों में शत्रुओं के पराभव-कर्ता हैं। उन्होंने अपने बल से युक्त माया द्वारा बलवान् दस्युओं को पूरी तरह से नष्ट किया॥६॥

युधेन्द्रो मह्ना वरिवश्चकार देवेभ्यः सत्पतिश्चर्षणिप्राः ।
विवस्वतः सदने अस्य तानि विप्रा उक्थेभिः कवयो गृणन्ति ॥७॥

देव वृत्तियों के संगठक, अधिपति और मनुष्यों को शक्ति प्रदान करके उनकी इच्छापूर्ति करने वाले इन्द्रदेव ने अपनी महत्ता से बुद्धों में शत्रुओं को परास्त किया । उनका धन प्राप्त करके स्तोताओं को प्रदान किया। बुद्धिमान् । स्तोतागण यजमान के घर में इन्द्रदेव के उन श्रेष्ठ कर्मों की चर्चा एवं प्रशंसा करते है॥७॥

सत्रासाहं वरेण्यं सहोदां ससवांसं स्वरपश्च देवीः ।
ससान यः पृथिवीं द्यामुतेमामिन्द्रं मदन्त्यनु धीरणासः ॥८॥

स्तोताजन शत्रु-विजेता, वरणीय, बल-प्रदाता, स्वर्ग-सुख और दीप्तिमान् जल के अधिपनि इन्द्रदेव की उत्तम स्तुतियों में वन्दना करते हैं, उन्होंने इस द्युलोक और पृथ्वी लोक में अपने ऐश्वर्यों के बल पर धारण किया॥८॥

ससानात्याँ उत सूर्यं ससानेन्द्रः ससान पुरुभोजसं गाम् ।
हिरण्ययमुत भोगं ससान हत्वी दस्यून्प्रार्यं वर्णमावत् ॥९॥

इन्द्रदेव ने अत्यों (लौघ जाने वाले-अश्वों) का दान किया। सूर्य एवं पर्याप्त भोजन प्रदान करनेवाली गौओं (किरणों) का दान किया ।

स्वर्णिम अलंकारों एवं भोग्य पदार्थों का दान किया। दस्युओं (दुष्टों) को मारकर आर्यो (सज्जनों की रक्षा की॥९॥

इन्द्र ओषधीरसनोदहानि वनस्पतीँरसनोदन्तरिक्षम् ।
बिभेद वलं नुनुदे विवाचोऽथाभवद्दमिताभिक्रतूनाम् ॥१०॥

इन्द्रदेव ने प्राणियों के कल्याण के लिए ओषधियाँ प्रदान की हैं, दिन (प्रकाश) का अनुदान दिया हैं। वनस्पतियों और अन्तरिक्ष को प्रदान किया है । उन्होंने वलासुर का विभेदन किया, प्रतिवादियों को दूर किया और युद्ध के अभिमुख हुए शत्रुओं का दमन किया हैं॥१०॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥११॥

इम अपने जीवन-संग्राम में संरक्षण प्राप्ति के लिए इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं। वे इन्द्रदेव पवित्र-कर्ता, मनुष्यों के नियन्ता, स्तुतियों को श्रवण करने वाले, उग्र, युद्धों में शत्रुओं का विनाश करने वाले, धन-विजेता और ऐश्वर्यवान् हैं॥११॥

सूक्त ३५

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमाना याहि वायुर्न नियुतो नो अच्छ ।
पिबास्यन्धो अभिसृष्टो अस्मे इन्द्र स्वाहा ररिमा ते मदाय ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! हरि नामक अश्व जिस रथ में नियोजित होने हैं: नियत नामक अश्वों वाले वाय के समान आप उस रथ में बैठकर हमारी ओर आयें। हमारे द्वारा प्रदत्त हविष्यान्न रूपी सोमरस का पान करें । हम आपके मन को प्रमुदित करने के लिए स्वाहा सहित सोमरस प्रदान करते हैं।॥१॥

उपाजिरा पुरुहूताय सप्ती हरी रथस्य धूर्ष्वा युनज्मि ।
द्रवद्यथा सम्भृतं विश्वतश्चिदुपेमं यज्ञमा वहात इन्द्रम् ॥२॥

अनेक जनों द्वारा जिनका आवाहन किया जाता है, ऐसे इन्द्रदेव के शीघ्रतापूर्वक आगमन के लिए वेगवान् दो अश्वों को रथ के अग्रभाग से संयोजित करते हैं । वे अश्व इन्द्रदेव को सब ओर से इस सर्वसाधन-सम्पन्न देवयज्ञ में अविलम्ब ले आयें॥२॥

उपो नयस्व वृषणा तपुष्पोतेमव त्वं वृषभ स्वधावः ।
ग्रसेतामश्वा वि मुचेह शोणा दिवेदिवे सदृशीरद्धि धानाः ॥३॥

हे इष्टवर्धक और अन्नवान् इन्द्रदेव ! आप बलवान् और शत्रुओं से रक्षा करने वाले अश्यों को समीप ले आयें तथा इस यजमान की रक्षा करें । अपने रक्तवर्ण अश्वों को यहाँ विमुक्त करें, ताकि वे आहार ग्रहण कर सके । आग प्रतिदिन उत्तम विष्यान्न अहण करें॥३॥

ब्रह्मणा ते ब्रह्मयुजा युनज्मि हरी सखाया सधमाद आशू ।
स्थिरं रथं सुखमिन्द्राधितिष्ठन्प्रजानन्विद्वाँ उप याहि सोमम् ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! मन्त्रों से नियोजित होने वाले, युद्धों में कीर्ति सम्पन्न, मित्र-भाव सम्पन्न हरि नामक दोनों अश्वों । कों हम मन्त्रों में योजित करते हैं। हे इन्द्रदेव ! सुदृढ़ और सुखकारौं रथ में अधिष्ठित होकर आप सोमयाग के समीप आयें । आप सब यज्ञो को जानने वाले विद्वान् हैं॥४॥

मा ते हरी वृषणा वीतपृष्ठा नि रीरमन्यजमानासो अन्ये ।
अत्यायाहि शश्वतो वयं तेऽरं सुतेभिः कृणवाम सोमैः ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आपके बलवान् और सुन्दर पृष्ठभाग वाले हर नामक अच्चों को अन्य यजमान संतुष्ट करें। हम अभिषुत सोमरस द्वारा आपको भलीप्रकार तृप्त करते हैं। आप अनेक यजमानों को छोड़कर हमारे पास आयें॥५॥

तवायं सोमस्त्वमेह्यर्वाङ्छश्वत्तमं सुमना अस्य पाहि ।
अस्मिन्यज्ञे बर्हिष्या निषद्या दधिष्वेमं जठर इन्दुमिन्द्र ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! यह सौमरस आपके निमित्त हैं । आप हमारी ओर अभिमुख हों तथा प्रफुल्लित मन से इस सोम का पान करे । हमारे इस यज्ञ में कुशों पर बैठकर इस सौम को अपने उदर में धारण करें॥६॥

स्तीर्णं ते बर्हिः सुत इन्द्र सोमः कृता धाना अत्तवे ते हरिभ्याम् ।
तदोकसे पुरुशाकाय वृष्णे मरुत्वते तुभ्यं राता हवींषि ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आपके निमित्त कुश का आसन बिछाया गया और सोमरस निचोड़ कर तैयार किया गया हैं। आपके दोनों अश्नों के नाने के लिए धान्य तैयार है । यह यज्ञ आपका निवास स्थान हैं । आप बहुत सामर्थ्यवान्, इष्टवर्धक और मरुतों की सेना से युक्त हैं । आपके निमित्त ये हवियों दी गई हैं॥७॥

इमं नरः पर्वतास्तुभ्यमापः समिन्द्र गोभिर्मधुमन्तमक्रन् ।
तस्यागत्या सुमना ऋष्व पाहि प्रजानन्विद्वान्पथ्या अनु स्वाः ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपके निमित्त ऋत्विग्गगों ने पाषाण से निष्पन्न, जलसंयुक्त सोमरस तैयार किया हैं । दुग्ध मिश्रित करके उसे अतिशय मधुर बनाया है । हे सर्व-द्रष्टा और विद्वान् इन्द्रदेव ! आप हमारी स्तुतियों को जानते हुए उत्तम मन में इसका पान करें॥८॥

याँ आभजो मरुत इन्द्र सोमे ये त्वामवर्धन्नभवन्गणस्ते ।
तेभिरेतं सजोषा वावशानोऽग्नेः पिब जिह्वया सोममिन्द्र ॥९॥

हे इन्द्रदेव !!जिन मरुतों को आप सोमयाग में सम्मानित करते हैं, जो आपको प्रवर्धत करते हैं, जो आपके सहायक होते हैं, उन सबके साथ सोम की अभिलाषा करते हुए आप अग्नि रूप जिह्वा से इस सोम का पान करें॥९॥

इन्द्र पिब स्वधया चित्सुतस्याग्नेर्वा पाहि जिह्वया यजत्र ।
अध्वर्योर्वा प्रयतं शक्र हस्ताद्धोतुर्वा यज्ञं हविषो जुषस्व ॥१०॥

हे यज्ञनीय इन्द्रदेव ! अपने पराक्रम से अभिपुत सोम का पान करें अथवा आँन रूप जिहा से सोम का पान करें । अध्वर्यु के हाथ में प्रदत्त सौम का पान करें अथवा होता के हव्यादि युक्त यज्ञ का सेवन करें॥१०॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥११॥

हम अपने जीवन-संग्राम में संरक्षण के लिए ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव का आवाहन करते है ये पवित्र कर्ता, मनुष्यों के नियन्ता, स्तुतियों के श्रवणकर्ता, उग्र, शत्रुओं का हनन करने वाले तथा धन-सम्पदाओं को जीतने वाले हैं॥११॥

सूक्त ३६

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: १० घोर अंगीरसा
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

इमामू षु प्रभृतिं सातये धाः शश्वच्छश्वदूतिभिर्यादमानः ।
सुतेसुते वावृधे वर्धनेभिर्यः कर्मभिर्महद्भिः सुश्रुतो भूत् ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! सर्वदा संरक्षण-सामथ्र्यों से युक्त रहने वाले आप हमारे द्वारा की गई उत्तम स्तुतियों को सुनें तथा हविष्यान्न के रूप में समर्पित सोम को ग्रहण करें । आप महान् कर्मों से प्रसिद्ध हुए हैं। आप प्रत्येक सोम-सवन में पुष्टिकारक हव्यादि द्वारा प्रवर्धिन होते हैं॥१॥

इन्द्राय सोमाः प्रदिवो विदाना ऋभुर्येभिर्वृषपर्वा विहायाः ।
प्रयम्यमानान्प्रति षू गृभायेन्द्र पिब वृषधूतस्य वृष्णः ॥२॥

हम द्युलोक में इन्द्रदेव के लिए सोम प्राप्त करते हैं, जिसे पीकर इन्द्रदेव बलवान् , सुदृद्ध, महान् और दीप्तिमान होते हैं। हे इन्द्रदेव ! शत्रुओं को भयभीत करने वाले आप बल प्रदायक और पाषाणों द्वारा भलीप्रकार अभिषुत इस स्रोम का पान करें॥२॥

पिबा वर्धस्व तव घा सुतास इन्द्र सोमासः प्रथमा उतेमे ।
यथापिबः पूर्व्याँइन्द्र सोमाँ एवा पाहि पन्यो अद्या नवीयान् ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोम-पान करके वर्द्धित हों । आपके निमित्त ये प्राचीन और नवीन सोम अभिषुत हुए हैं। हे स्तुत्य इन्द्रदेव ! जैसे आपने पूर्वकाल में सोमपान किया, वैसे ही आज इस नवीन सोम का पान करें॥३॥

महाँ अमत्रो वृजने विरप्श्युग्रं शवः पत्यते धृष्ण्वोजः ।
नाह विव्याच पृथिवी चनैनं यत्सोमासो हर्यश्वममन्दन् ॥४॥

ये महान् इन्द्रदेव, शत्रुओं को परास्त करने वाले और अतिशय बलवान् हैं ।इनका उग्र बल और ओज सर्वत्र विस्तृत होता हैं ।जब वे सोम पीकर तृप्त होते हैं, तब पृथ्वी और द्युलोक भी उन्हें संभालने में समर्थ नहीं होते हैं॥४॥

महाँ उग्रो वावृधे वीर्याय समाचक्रे वृषभः काव्येन ।
इन्द्रो भगो वाजदा अस्य गावः प्र जायन्ते दक्षिणा अस्य पूर्वीः ॥५॥

ये महान् बल और पराक्रमशाली इन्द्रदेव शौर्य युक्त श्रेष्ठ कार्यों के लिए प्रसिद्ध हुए हैं। अभीष्ट प्रदान करने वालें और ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव की उत्तम स्तुतियों से प्रार्थना करते हैं । इनकी दिव्य रश्मियाँ पोषण प्रदान करने वालों हैं, इनके दान आदि कर्म भी बहुत प्रसिद्ध हैं॥५॥

प्र यत्सिन्धवः प्रसवं यथायन्नापः समुद्रं रथ्येव जग्मुः ।
अतश्चिदिन्द्रः सदसो वरीयान्यदीं सोमः पृणति दुग्धो अंशुः ॥६॥

जिस प्रकार समस्त नदियाँ कामनापूर्वक सुदूर समुद्र में जाकर मिलती हैं, उनका जल रथ के समान समुद्र की ओर गमन करता है । उसी प्रकार दुग्ध-मिश्रित अल्प सोमरस महान् इन्द्रदेव को परिपूर्ण करता है, जिससे तृप्त होकर इन्द्रदेव स्वर्ग में भी अधिक श्रेष्ठ और महान् हो जाते हैं॥६॥

समुद्रेण सिन्धवो यादमाना इन्द्राय सोमं सुषुतं भरन्तः ।
अंशुं दुहन्ति हस्तिनो भरित्रैर्मध्वः पुनन्ति धारया पवित्रैः ॥७॥

समुद्र से मिलने की अभिलाषा वाली नदियों जैसे समुद्र को परिपूर्ण करती हैं, वैसे ही अध्वर्युगण पाषाणयुक्त हाथों में इन्द्रदेव के लिए अभिषुत करके सोम तैयार करते हैं। अपनी भुजाओं से वे सोमलता का दोहन करते हैं। और छुने द्वारा एक धारा में सोम छानते हैं॥७॥

ह्रदा इव कुक्षयः सोमधानाः समी विव्याच सवना पुरूणि ।
अन्ना यदिन्द्रः प्रथमा व्याश वृत्रं जघन्वाँ अवृणीत सोमम् ॥८॥

इन्द्रदेव का उदर सरोवर की भाँति विस्तार वाला है ।इन्हें अनेकों सो-सबन पूर्ण करते हैं ।इन्द्रदेव ने सर्वप्रथम सोम रस रूप हविष्यान्न का भक्षण किया, तदनन्तर वृत्र को मारकर अन्य देवों के लिए सोम ग्रहण किया॥८॥

आ तू भर माकिरेतत्परि ष्ठाद्विद्मा हि त्वा वसुपतिं वसूनाम् ।
इन्द्र यत्ते माहिनं दत्रमस्त्यस्मभ्यं तद्धर्यश्व प्र यन्धि ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! हमें शीघ्र ही अपार धन-वैभव प्रदान करें। आपको धन-दान से मैन रोक सकता हैं? आपको हुम श्रेष्ठ धनाधिपति के रूप में

जानते हैं। हैं हरिं संज्ञक अश्वों के स्वामी इन्द्रदेव ! आपके पास जो भी हमारे लिए उपयोगी धन हो; वह हमें प्रदान करें॥९॥

अस्मे प्र यन्धि मघवन्नृजीषिन्निन्द्र रायो विश्ववारस्य भूरेः ।
अस्मे शतं शरदो जीवसे धा अस्मे वीराञ्छश्वत इन्द्र शिप्रिन् ॥१०॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप उदारचेता हैं। आप सबके द्वारा वरणीय प्रभूत धन-ऐश्वर्य हमें प्रदान करें। हैं। उत्तम शिरस्त्राण वाले इन्द्रदेव ! हमें जीने के लिए सौ वर्ष की आयु प्रदान करें तथा बहुत से वीर पुत्र प्रदान करें॥१०॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥११॥

हम अपने जीवन-संग्राम में संरक्षण प्राप्ति के लिए ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव या आवाहन करते हैं। वे इन्द्रदेव, पवित्रता प्रदान करने वाले, मनुष्यों के नियन्ता, हमारी स्तुतियों को सुनने वाले, उग्र, युद्धों में शत्रुओं का विनाश करने वाले और धनों के विजेता है॥११॥

सूक्त ३७

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्रः ।
देवता – इन्द्रः । छंद – गायत्री, ११ अनुष्टुप

वार्त्रहत्याय शवसे पृतनाषाह्याय च ।
इन्द्र त्वा वर्तयामसि ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! वृत्र नामक असुर का हनन करने के लिए तथा शत्रु सेना को पराजित करने की शक्ति प्राप्ति के लिए हम आपसे निवेदन करते हैं॥१॥

अर्वाचीनं सु ते मन उत चक्षुः शतक्रतो ।
इन्द्र कृण्वन्तु वाघतः ॥२॥

सैंकडों अश्वमेधादिक यज्ञ सम्पन्न करने वाले हे इन्द्रदेव ! स्तनागण स्तुति करते हुए आपकी प्रसन्नता, अनुमह और कृपा-दृष्टि को हमारी ओर प्रेरित करें॥२॥

नामानि ते शतक्रतो विश्वाभिर्गीर्भिरीमहे ।
इन्द्राभिमातिषाह्ये ॥३॥

अभिमानी शत्रुओं को पराजित करने वाले हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! युद्ध में हम सपूर्ण स्तुति-सूक्तों द्वारा आपके यश एवं वैभव का बखान करते हैं॥३॥

पुरुष्टुतस्य धामभिः शतेन महयामसि ।
इन्द्रस्य चर्षणीधृतः ॥४॥

बहुतों द्वारा स्तुत्य, महान् तेजस्वी, मनुष्यों को धारण करने वाले इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं॥४॥

इन्द्रं वृत्राय हन्तवे पुरुहूतमुप ब्रुवे ।
भरेषु वाजसातये ॥५॥

बहुतों द्वारा जिनका आवाइन किया जाता हैं, उन वृत्र-हता इन्द्रदेव को हम भरण-पोषण के लिए बुलाते हैं॥५॥

वाजेषु सासहिर्भव त्वामीमहे शतक्रतो ।
इन्द्र वृत्राय हन्तवे ॥६॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आप युद्धों में शत्रुओं का विनाश करने वाले हैं। बुत्र का हनन करने के लिए हम आपसे प्रार्थना करते हैं॥६॥

द्युम्नेषु पृतनाज्ये पृत्सुतूर्षु श्रवःसु च ।
इन्द्र साक्ष्वाभिमातिषु ॥७॥

हमारे अभिमानीं शत्रुओं का विनाश करने वाले है इन्द्रदेव ! युद्धों में तेजस्वी धन-प्राप्ति के लिए आप सभी बलवान् शत्रुओं को पराजित करें॥७॥

शुष्मिन्तमं न ऊतये द्युम्निनं पाहि जागृविम् ।
इन्द्र सोमं शतक्रतो ॥८॥

हे शतकर्मा-इन्द्रदेव ! हम याजकों को संरक्षण प्रदान करने के लिए आप अत्यन्त बल-प्रदायक, दीप्तिमान्, चेतनता लाने वाले सोमरस का पान करें॥८॥

इन्द्रियाणि शतक्रतो या ते जनेषु पञ्चसु ।
इन्द्र तानि त आ वृणे ॥९॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! पाँच जनों (समाज के पाँचों बग) में जो इन्द्रियाँ (विशेष सामथ्य) हैं, उन्हें आपकी शक्तियों के रूप में हम वरण करते हैं॥९॥

अगन्निन्द्र श्रवो बृहद्द्युम्नं दधिष्व दुष्टरम् ।
उत्ते शुष्मं तिरामसि ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! यह महान् हविष्यान्न आपके पास जाये । आप शत्रुओं के लिए दुर्लभ तेजस्वी समरस ग्रहण करें । हम आपके बल को प्रवृद्ध करते हैं॥१०॥

अर्वावतो न आ गह्यथो शक्र परावतः ।
उ लोको यस्ते अद्रिव इन्द्रेह तत आ गहि ॥११॥

हे वज्रधारक इन्द्रदेव ! आप समीपस्थ प्रदेश में हमारे पास आएं। दूरस्थ देश में भी आएँ। आपका जो उत्कृष्ट लोक हैं, उस लोक से भी आप यहाँ आएँ (अर्थात् प्रत्येक स्थिति में आप हम पर अनुग्रह करें)॥११॥

सूक्त ३८

ऋषि – प्रजापतिवैश्वामित्र:, प्रजापतिर्वाच्यो, तावुभावपि, गाथिनो विश्वामित्रो वा
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

अभि तष्टेव दीधया मनीषामत्यो न वाजी सुधुरो जिहानः ।
अभि प्रियाणि मर्मृशत्पराणि कवींरिच्छामि संदृशे सुमेधाः ॥१॥

हे स्तोता ! त्वष्टा (कान के शिल्पी) की तरह आप इन्द्रदेव के लिए उत्तम स्तोत्रों का निर्माण करें। श्रेस धुरौ में योजित वेगवान् अश्व की भाँति कर्म में प्रवृत्त होकर और इन्द्रदेव के निमित प्रियकारी स्तुतियों करते हुए हम उत्तम मेधावान् कवियों (द्रष्टाओं के दर्शन की इच्छा करते हैं॥१॥

इनोत पृच्छ जनिमा कवीनां मनोधृतः सुकृतस्तक्षत द्याम् ।
इमा उ ते प्रण्यो वर्धमाना मनोवाता अध नु धर्मणि ग्मन् ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! इन कवियों के जन्म के सम्बन्ध में उन आचार्य गणों से पूछे, जिन्होंने मनोबत को धारण करके अपने पुण्य-कर्मो से स्वर्ग का निर्माण किया था। इस यज्ञ में आपके मन में आनन्द प्रदान करने वाली आपके हो निमित्त प्रणोत स्तुतियां आपके पास जाती हैं॥२॥

नि षीमिदत्र गुह्या दधाना उत क्षत्राय रोदसी समञ्जन् ।
सं मात्राभिर्ममिरे येमुरुर्वी अन्तर्महीं समृते धायसे धुः ॥३॥

कवियों ने गूढ़ कर्मों को सम्पादित करते हुए द्यावा-पृथिबी को बल-प्राप्ति के लिए परस्पर संगत किया और उन्हें मात्राओं से परिमित किया । परस्पर संगत विस्तीर्ण और महतीं शाय-पृथियों को नियंत्रित किया। उन दोनों के बीच में धारण करने के लिए उन्होंने अन्तरिक्ष को स्थापित किया॥३॥

आतिष्ठन्तं परि विश्वे अभूषञ्छ्रियो वसानश्चरति स्वरोचिः ।
महत्तद्वृष्णो असुरस्य नामा विश्वरूपो अमृतानि तस्थौ ॥४॥

समस्त कवियों ने रथ में अधिष्ठित इन्द्रदेव को महिमामंडित किया । वे इन्द्रदेव अपनी दीप्ति से दीप्तिमान् होकर शोभायमान होते हुए विचरण करते हैं। सबके जीवन में प्राण संचार करने वाले, उनके श्रेष्ठ संकल्पों को पूर्ण करने वाले इन्द्रदेव की कीर्ति महान् हैं । सम्पूर्ण रूपों से युक्त होकर वे अमृत तत्त्वों पर स्थित होते हैं॥४॥

असूत पूर्वो वृषभो ज्यायानिमा अस्य शुरुधः सन्ति पूर्वीः ।
दिवो नपाता विदथस्य धीभिः क्षत्रं राजाना प्रदिवो दधाथे ॥५॥

मनोवांछित फल प्रदान करने वाले, पुरातन और श्रेष्ठ देव इन्द्र ने जल-वृष्टि की । इस विपुल ज्ञल राशि में पिपासा को दूर किया । द्युलोक के धारक दीप्तिमान् वरुण और इन्द्रदेव, तेजस्वी याजकों की स्तुतियों को सुनकर उनके लिए धनों को धारण करते हैं॥५॥

त्रीणि राजाना विदथे पुरूणि परि विश्वानि भूषथः सदांसि ।
अपश्यमत्र मनसा जगन्वान्व्रते गन्धर्वाँअपि वायुकेशान् ॥६॥

हे द्रावरुण ! आप इस यज्ञ में सम्पूर्ण और व्यापक तीनों सदनों को अलंकृत करें । हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञ में गये थे; क्योंकि हमने इस यज्ञ में वायु से स्पन्दित केश युक्त अश्यों को देखा है॥६॥

तदिन्वस्य वृषभस्य धेनोरा नामभिर्ममिरे सक्म्यं गोः ।
अन्यदन्यदसुर्यं वसाना नि मायिनो ममिरे रूपमस्मिन् ॥७॥

इस वृषभ (बलशाली इन्द्र) की धेनु (वत्स को धारण करने वालौं। तथा गौ (पोषण करने वाली सामथ्यों के सार तत्वों को जिन प्रतिभावानों ने दुहा; उन्होंने नई-नई शक्तियों के रूप में इस को पाया॥७॥

तदिन्वस्य सवितुर्नकिर्मे हिरण्ययीममतिं यामशिश्रेत् ।
आ सुष्टुती रोदसी विश्वमिन्वे अपीव योषा जनिमानि वव्रे ॥८॥

इन सूर्यदेव की स्वर्णमयों दीप्ति को कोई नष्ट नहीं कर सकता। इस दौप्ति के आश्रय को जो स्वीकार करता हैं, वह उत्तम स्तुतियों द्वारा प्रशंसित होता हैं । जैसे माता अपना सन्तानों का वरण करती है, वैसे ही वह देव सर्वदत्रों द्यावा-पृथिबी द्वारा धरण किया जाता हैं॥८॥

युवं प्रत्नस्य साधथो महो यद्दैवी स्वस्तिः परि णः स्यातम् ।
गोपाजिह्वस्य तस्थुषो विरूपा विश्वे पश्यन्ति मायिनः कृतानि ॥९॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप पुरातन स्तोताओं का हर प्रकार से कल्याण करते हैं, उनके निमित्त स्वर्गापम श्रेय सम्पादित करते हैं।

आप हमें सब ओर से संरक्षित करें समस्त मायावी शक्तियों में दक्ष आप, हमें अगने आश्रय में रखकर, संरक्षणकारों वचनों का आश्वासन दें-ऐसे आपके विविध कार्यों को हम देखते हैं॥९॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥१०॥

हम जीवन-संग्राम में संरक्षण की कामना से ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं; क्योंकि वे देव पवित्र करने वाले, अप्ठतम नेतृत्वकर्ता, स्तुतियों को सुनने वाले, उग्र, शत्रुओं का हनन करने वाले एवं धन-विजेता हैं॥१०॥

सूक्त ३९

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

इन्द्रं मतिर्हृद आ वच्यमानाच्छा पतिं स्तोमतष्टा जिगाति ।
या जागृविर्विदथे शस्यमानेन्द्र यत्ते जायते विद्धि तस्य ॥१॥

हे सर्व-पालक इन्द्रदेव ! स्लोनाओं द्वारा भावनापूर्वक उच्चारित स्तुतियाँ सीधे आपके पास पहुँचती हैं । आप को चैतन्य करने वाली जो स्तुतियाँ यज्ञ में उन्धारित की जाती हैं, जो आपके निमित्त उत्पन्न हैं, उन्हें आप जानें॥१॥

दिवश्चिदा पूर्व्या जायमाना वि जागृविर्विदथे शस्यमाना ।
भद्रा वस्त्राण्यर्जुना वसाना सेयमस्मे सनजा पित्र्या धीः ॥२॥

हे देव ! सूर्य से भी पहले उत्पन्न हुई ये कानुनियाँ यज्ञ में उच्चरित होकर आपको चैतन्य करती हैं। जो कल्याणकारी और शुभ तेजस्विना को धारण करता है, वे हमारी स्तुतियाँ पूर्वजों से प्राप्त सनातन धरोहर हैं॥२॥

यमा चिदत्र यमसूरसूत जिह्वाया अग्रं पतदा ह्यस्थात् ।

वपूंषि जाता मिथुना सचेते तमोहना तपुषो बुध्न एता ॥३॥

अश्विनीकुमारों को उत्पन्न करने वाली उषा ने उन्हें इस समय उत्पन्न किया हैं। उनकी प्रशंसा करने को उत्कंठित जिह्वा का अग्रभाग चंचल हो उठा हैं । दिन के प्रारंभ में तमोनाशक अश्विनीकुमारों का यह जोड़ा जन्म के साथ ही स्तोत्रों में संयुक्त होता हैं॥३॥

नकिरेषां निन्दिता मर्त्येषु ये अस्माकं पितरो गोषु योधाः ।
इन्द्र एषां दंहिता माहिनावानुद्गोत्राणि ससृजे दंसनावान् ॥४॥

असुरों से युद्ध करने में कुशल हमारे पितरों की निन्दा करने वाला हममें से कोई नहीं है । महिमावान् और उत्तम कर्मवान् इन्द्रदेव इन्हें और इनके गोत्रों को सुदृढ़ स्वर्ग लोक में स्थापित करते हैं॥४॥

सखा ह यत्र सखिभिर्नवग्वैरभिज्ञ्वा सत्वभिर्गा अनुग्मन् ।
सत्यं तदिन्द्रो दशभिर्दशग्वैः सूर्यं विवेद तमसि क्षियन्तम् ॥५॥

नौ अश्नों (शक्ति धाराओं) से युक्त बलवान् मित्ररूप अंगिराओं के साथ इन्द्रदेव जब गाँओं की खोज में निकले, तब गहन अन्धकार में छिपे हुए प्रकाशपुंज सूर्य को प्राप्त किया॥५॥

इन्द्रो मधु सम्भृतमुस्रियायां पद्वद्विवेद शफवन्नमे गोः ।
गुहा हितं गुह्यं गूळ्हमप्सु हस्ते दधे दक्षिणे दक्षिणावान् ॥६॥

इन्द्रदेव ने दुग्ध प्रदान गौओं से मधुर दुग्ध को प्राप्त किया । अनन्तर चरण वाले पक्षी और खुरों वाले पशुओं से युक्त अपार धन प्राप्त

किया। दानी इन्द्रदेव ने गुहाशित तथा अन्तरिक्ष के जलों में स्थित गुह्य धनों को दाहिने हाथ में धारण किया॥६॥

ज्योतिर्वृणीत तमसो विजानन्नारे स्याम दुरितादभीके ।
इमा गिरः सोमपाः सोमवृद्ध जुषस्वेन्द्र पुरुतमस्य कारोः ॥७॥

विशिष्ट ज्ञान से सम्पन्न इन्द्रदेव ने गहन तमिस्रा में ज्योति को प्रकट किया । हम सब पापों से दूर होकर भय रहित स्थान में रहे। हे सोम पीने वाले तथा सोम में वृद्धि पाने वाले इन्द्रदेव ! श्रेष्ठतम स्तुतिकर्ता की इन स्तुतियों को ग्रहण करें॥७॥

ज्योतिर्यज्ञाय रोदसी अनु ष्यादारे स्याम दुरितस्य भूरेः ।
भूरि चिद्धि तुजतो मर्त्यस्य सुपारासो वसवो बर्हणावत् ॥८॥

(सृष्टि का संतुलन बनाये रखने वाले) यज्ञ के लिए सूर्यदेव द्यावा-पृथिवी को प्रकाशित करें । हम विविध पापों से दूर रहें । हे दुःखतारक वसुदेवो ! आप हम यज्ञनकर्ता मनुष्यों को विपुल धन राशि से पूर्ण करें॥८॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥९॥

हम अपने जीवन-संग्राम में संरक्षण प्राप्ति के लिए ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं, क्योंकि वे पवित्रकर्ता, श्रेष्ठ नेतृत्वकर्ता, हेमाडौँ स्तुतियों को कृपापूर्वक सुनने वाले, उग्र, युद्धों में शत्रुओं का विनाश करने वाले और धनों के विजेता हैं॥९॥

सूक्त ४०

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – गायत्री

इन्द्र त्वा वृषभं वयं सुते सोमे हवामहे ।
स पाहि मध्वो अन्धसः ॥१॥

साधकों की मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाले है इन्द्रदेव ! अभिषुत सोम का पान करने के निमित्त हम आपका आवाहन करते हैं। आप अत्यन्त मधुर हविष्यान्न युक्त सोम का पान करें॥१॥

इन्द्र क्रतुविदं सुतं सोमं हर्य पुरुष्टुत ।
पिबा वृषस्व तातृपिम् ॥२॥

है हरि संज्ञक अच्चों के स्वामी और बहुतों द्वारा प्रशंसित इन्द्रदेव ! आप अभीएवर्षक हैं । यह अभिषुत सोम आपको तृप्त करने के लिए इस यज्ञ में विधिवत् तैयार किया गया हैं । आप इसका पान करें॥२॥

इन्द्र प्र णो धितावानं यज्ञं विश्वेभिर्देवेभिः ।
तिर स्तवान विश्पते ॥३॥

हे स्तुत्य और प्रजापालक इन्द्रदेव ! आप सम्पूर्ण पूजनीय देवों के साथ हमारे इस हव्यादि द्रव्यों से पूर्ण यज्ञ को संवर्धित करें॥३॥

इन्द्र सोमाः सुता इमे तव प्र यन्ति सत्पते ।
क्षयं चन्द्रास इन्दवः ॥४॥

हे सत्यव्रतियों के अधिपति इन्द्रदेव ! ये दीप्तियुक्त, आह्लादक और अभियुत सोमरस आपके स्थान की ओर उन्मुख है (अर्थात् आपको समर्पित है), इसे ग्रहण करें॥४॥

दधिष्वा जठरे सुतं सोममिन्द्र वरेण्यम् ।
तव द्युक्षास इन्दवः ॥५॥

है इन्द्रदेव ! यह अभिषुत सोम आपके द्वारा वरण करने योग्य है; क्योंकि यह दीप्तिमान् और आपके पास स्वर्ग में रहने योग्य है । आप इसे अपने उदर में धारण करें॥५॥

गिर्वणः पाहि नः सुतं मधोर्धाराभिरज्यसे ।
इन्द्र त्वादातमिद्यशः ॥६॥

हैं स्तुत्य इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा शोधित सोमरस का आप पान करें, क्योंकि इस आनन्ददायीं सोमरस की धाराओं में आप सिंचित होते हैं । है इन्द्रदेव ! आपकी कृपा से ही हमें यश मिलता है॥६॥

अभि द्युम्नानि वनिन इन्द्रं सचन्ते अक्षिता ।
पीत्वी सोमस्य वावृधे ॥७॥

देवपूजक यजमान के द्वारा समर्पित दीप्तिमान् और अक्षय सोमादियुक्त हवियों इन्द्रदेव की ओर जाती हैं । इस सोम को पोकर इन्द्रदेव विकसित होते हैं॥७॥

अर्वावतो न आ गहि परावतश्च वृत्रहन् ।
इमा जुषस्व नो गिरः ॥८॥

हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! आप समपस्थ स्थान से हमारे पास आयें । दूरस्थ स्थान से भी हमारे पास आयें । हमारे द्वारा समर्पित इन स्तुतियों को ग्रहण करें॥८॥

यदन्तरा परावतमर्वावतं च हूयसे ।
इन्द्रेह तत आ गहि ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आप दूरस्थ देश से, समीपस्थ देश में तथा मध्य के प्रदेशों में बुलाये जाते हैं, उन स्थानों से आप में यज्ञ में आये॥॥

सूक्त ४१

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – गायत्री

आ तू न इन्द्र मद्यग्घुवानः सोमपीतये ।
हरिभ्यां याह्यद्रिवः ॥१॥

हे इन्द्रदेव सोमपान के लिए हम आपका आवाहन करते हैं, हमारे निकट हुरिसंज्ञक अश्वों के साथ आये॥१॥

सत्तो होता न ऋत्वियस्तिस्तिरे बर्हिरानुषक् ।
अयुज्रन्प्रातरद्रयः ॥२॥

हमारे यज्ञ में ऋतु के अनुसार यज्ञकर्ता होता बैठे हैं। उन्होंने कुश के आसन बिछाये हैं और सोम-अभिषव के लिए पाषाण खण्ड को संयुक्त किया है । हे इन्द्रदेव ! आप सोमपान के निमित्त आये॥२॥

इमा ब्रह्म ब्रह्मवाहः क्रियन्त आ बर्हिः सीद ।
वीहि शूर पुरोळाशम् ॥३॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! स्तोतागण इन स्तुतियों को सम्पादित करते हैं । अतएव आप इस आसन पर बैठे और पुरोडाश का सेवन करें॥३॥

रारन्धि सवनेषु ण एषु स्तोमेषु वृत्रहन् ।
उक्थेष्विन्द्र गिर्वणः ॥४॥

हे स्तुति-योग्य, वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! आप यज्ञ में तीनों सदनों में किये गये स्तोत्रों और मंत्रों में रमण करें॥४॥

मतयः सोमपामुरुं रिहन्ति शवसस्पतिम् ।
इन्द्रं वत्सं न मातरः ॥५॥

हमारी ये स्तुतियों महान् सोमपायों और बलों के अधिपति इन्द्रदेव को उसी प्रकार प्राप्त होती हैं, जिस प्रकार गौएँ अपने बछड़ों को प्राप्त होती हैं॥५॥

स मन्दस्वा ह्यन्धसो राधसे तन्वा महे ।
न स्तोतारं निदे करः ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! विपुल धनराशि दान देने के लिए आप सोम युक्त हविष्यान्न से अपने शरीर को प्रसन्न करे । हम स्तोताओं को निन्दित न होने दें॥६॥

वयमिन्द्र त्वायवो हविष्मन्तो जरामहे ।
उत त्वमस्मयुर्वसो ॥७॥

हे सबके आश्रय प्रदाता इन्द्रदेव ! आपकी अभिलाषा करते हुए हम हवियों से युक्त होकर आपको स्त करते हैं। आप हमारी रक्षा करें॥७॥

मारे अस्मद्वि मुमुचो हरिप्रियार्वाङ्याहि ।
इन्द्र स्वधावो मत्स्वेह ॥८॥

हे हरि संज्ञक अश्वों के प्रिय स्वामी इन्द्रदेव ! आप अपने घोड़ों को हमसे दूर जाकर न खोलें । हमारे पास आयें । इस यज्ञ में आकर हर्षित हों॥८॥

अर्वाञ्चं त्वा सुखे रथे वहतामिन्द्र केशिना ।
घृतस्नू बर्हिरासदे ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! दीप्तिमान् (स्निग्धा केशवाले अश्व आपको सुखकर रथ द्वारा हमाचे निकट ले आये । आप यहाँ यज्ञस्थल पर कुश के पवित्र आसन पर सुशोभित हों॥९॥

सूक्त ४२

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – गायत्री

उप नः सुतमा गहि सोममिन्द्र गवाशिरम् ।
हरिभ्यां यस्ते अस्मयुः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! याजकों की अभिलाषा करते हुए आप अलों से योजित अपने रथ द्वारा हमारे पास आयें । हमारे द्वारा अभिद्युत गोदुग्धादि मिश्रित सोम का पान करे॥१॥

तमिन्द्र मदमा गहि बर्हिःष्ठां ग्रावभिः सुतम् ।
कुविन्त्वस्य तृप्णवः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप पाषाणों से निष्पन्न कुश के आसन पर सुसज्जित तथा हर्ष प्रदायक सोम के निकट आयें । प्रचुर मात्रा में इसका पान करके तृप्त हों॥२॥

इन्द्रमित्था गिरो ममाच्छागुरिषिता इतः ।
आवृते सोमपीतये ॥३॥

इन्द्रदेव को बुलाने के लिए भेजी गई स्तुतियाँ, उनको सोमपान के लिए इस यज्ञस्थल पर भली-भाँति लायें॥३॥

इन्द्रं सोमस्य पीतये स्तोमैरिह हवामहे ।
उक्थेभिः कुविदागमत् ॥४॥

हम इन्द्रदेव को सोमपान के लिए यहाँ इस यज्ञ में स्तुति गान करते हुए बुलाते हैं। स्तोत्रों द्वारा वे अनेक बार विभिन्न यज्ञों में आ चुके हैं॥४॥

इन्द्र सोमाः सुता इमे तान्दधिष्व शतक्रतो ।
जठरे वाजिनीवसो ॥५॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आपके निमित्त सोम प्रस्तुत हैं ।इसे उदर में धारण करें ।आप अन्न-धन के अधीश्वर हैं॥५॥

विद्मा हि त्वा धनंजयं वाजेषु दधृषं कवे ।
अधा ते सुम्नमीमहे ॥६॥

हे क्रान्तदश इन्द्रदेव ! हम आपको शत्रुओं के पराभवकर्ता और धनों के विजेता के रूप में जानते हैं, अतएव हम आपसे धन की याचना करते हैं॥६॥

इममिन्द्र गवाशिरं यवाशिरं च नः पिब ।
आगत्या वृषभिः सुतम् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने बलवान् अश्वों द्वारा आकर हमारे द्वारा अभिषुत गो-दुध तथा जो मिश्रित समरस का पान करें॥७॥

तुभ्येदिन्द्र स्व ओक्ये सोमं चोदामि पीतये ।
एष रारन्तु ते हृदि ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! हम यज्ञ स्थल पर आपके निमित्त सोमरस प्रस्तुत करते हैं यह सौम आपके हृदय में रमण करें॥८॥

त्वां सुतस्य पीतये प्रत्नमिन्द्र हवामहे ।
कुशिकासो अवस्यवः ॥९॥

हे पुरातन इन्द्रदेव ! हम कुशिक वंशज आपकी संरक्षणका सामथ्र्यों की अभिलाषा करते हैं । सोमपान के लिए यज्ञस्थल पर हम आपका आवाहन करते हैं॥९॥

सूक्त ४३

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

आ याह्यर्वाङुप वन्धुरेष्ठास्तवेदनु प्रदिवः सोमपेयम् ।
प्रिया सखाया वि मुचोप बर्हिस्त्वामिमे हव्यवाहो हवन्ते ॥१॥

ॐ इन्द्रदेव ! इथे में अधिष्ठित होकर आप हमारे पास आयें ।परिष्कृत, दीप्तिमान् सोमरस का पान करने के लिए आप अपने प्रिय घोड़ो को यज्ञ स्थल के निकट विमुक्त करें, क्योंकि ये ऋत्विग्गण आपका आवाहन करते हैं॥१॥

आ याहि पूर्वीरति चर्षणीराँ अर्य आशिष उप नो हरिभ्याम् ।
इमा हि त्वा मतयः स्तोमतष्टा इन्द्र हवन्ते सख्यं जुषाणाः ॥२॥

हे स्वामी इन्द्रदेव !आप अनेक प्रजाजनों को लाँघकर हमारे पास आयें । हमारी प्रार्थना है कि आप अश्वों से हमारे पास आयें । आपकी मित्रता की इच्छा करती हुई स्तोताओं की ये स्तुनियाँ आपका आवाहन कर रही हैं॥२॥

आ नो यज्ञं नमोवृधं सजोषा इन्द्र देव हरिभिर्याहि तूयम् ।

अहं हि त्वा मतिभिर्जोहवीमि घृतप्रयाः सधमादे मधूनाम् ॥३॥

हे दौप्तिमान् इन्द्रदेव ! प्रसन्न हृदय से आप हमारे अन्नवर्द्धक यज्ञ के पास अच्चों द्वारा शीघ्र ही आयें । सोम-यज्ञों में मृतयुक्त सोम रूप हव्य समर्पित करते हुए हम आपका आवाहन करते हैं॥३॥

आ च त्वामेता वृषणा वहातो हरी सखाया सुधुरा स्वङ्गा ।
धानावदिन्द्रः सवनं जुषाणः सखा सख्युः शृणवद्वन्दनानि ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! बलवान्, उत्तम, धुरा (या जुआ) में योजित, पुष्ट अंगों वाले मित्र रूप आपके ये अश्व आपको हमारे पास लायें । हविष्यान्न रूप में सोमरस का सेवन करते हुए आप मैत्री भावपूर्ण स्तोनाओं की स्तुतियों का श्रवण करें॥४॥

कुविन्मा गोपां करसे जनस्य कुविद्राजानं मघवन्नृजीषिन् ।
कुविन्म ऋषिं पपिवांसं सुतस्य कुविन्मे वस्वो अमृतस्य शिक्षाः ॥५॥

सोमरस की कामना करने वाले ऐश्वर्यवान् हैं इन्द्रदेव ! आप हमें लोगों का रक्षक बनायें । हमें प्रज्ञाज्ञनों का स्वामी बनायें । हमें दूरद्रष्टा ऋषि बनायें । हमें अभिपुत सोमपान कर्ता बनायें और हमें अक्षय धन प्रदान करें॥५॥

आ त्वा बृहन्तो हरयो युजाना अर्वागिन्द्र सधमादो वहन्तु ।
प्र ये द्विता दिव ऋञ्जन्त्याताः सुसम्मृष्टासो वृषभस्य मूराः ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! रथ में योजित हरि संज्ञक विशालकाय अश्व आपको हमारी ओर ले आयें । हे इष्टवर्धक देव ! (प्रेरित किये गये) इन्द्रदेव के

शत्रु नाशक ये अञ्च दोनों ओर प्रभाव डालने वाले द्युलोक में आते हैं॥६॥

इन्द्र पिब वृषधूतस्य वृष्ण आ यं ते श्येन उशते जभार ।
यस्य मदे च्यावयसि प्र कृष्टीर्यस्य मदे अप गोत्रा ववर्थ ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोम अभिलाषी हैं । श्येन पक्षी आपके निमित्त सोम लाया हैं । पाषाण द्वारा कूटे गये इष्ट प्रदायक सोम का आप पान करें। इसके द्वारा उत्पन्न हुर्ष से आप शत्रुओं को दूर करते हैं॥७॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥८॥

हम अपने जीवन-संग्राम में संरक्षण प्राप्ति के लिए ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं, क्योकि ये इन्द्रदेव पवित्रकर्ता, श्रेष्ठ नेतृत्वकर्ता, स्तुति श्रवण-कर्ता, उम, युद्धों में शत्रुनाशक और धनों के विजेता हैं॥८॥

सूक्त ४४

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – बृहती

अयं ते अस्तु हर्यतः सोम आ हरिभिः सुतः ।
जुषाण इन्द्र हरिभिर्न आ गह्या तिष्ठ हरितं रथम् ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! पाषाण द्वारा निष्पादित प्रीतिकर और सेवनीय यह सोम आपके लिए हैं । आप हरि संज्ञक अश्वों द्वारा ले जाये जाने वाले रथ पर अधिष्ठित होकर हमारे समीप आएँ॥१॥

हर्यन्नुषसमर्चयः सूर्यं हर्यन्नरोचयः ।
विद्वाँश्चिकित्वान्हर्यश्व वर्धस इन्द्र विश्वा अभि श्रियः ॥२॥

हरि संज्ञक अश्रों के स्वामी है इन्द्रदेव ! आप सोम की कामना करते हुए उषा और सूर्य को प्रकाशित करते हैं। आप विद्वान् और हमारी अभिलाषाओं के ज्ञाता हैं। आप हमारी समृद्धि और वैभव को बढ़ाएँ॥२॥

द्यामिन्द्रो हरिधायसं पृथिवीं हरिवर्पसम् ।
अधारयद्धरितोर्भूरि भोजनं ययोरन्तर्हरिश्चरत् ॥३॥

जिसके बीच में सूर्यदेव की हरित किरणें संचरित हैं, उस द्युलोक और रश्मियों को धारण करने से जिस पर हरियाली फैली है, ऐसी भरपूर भोजन सामग्री युक्त पृथ्वी को इन्द्रदेव ने धारण किया॥३॥

जज्ञानो हरितो वृषा विश्वमा भाति रोचनम् ।
हर्यश्वो हरितं धत्त आयुधमा वज्रं बाह्वोर्हरिम् ॥४॥

इष्टवर्धक, इन्द्रदेव उत्पन्न होकर सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करते हैं। हरित वर्ण के अशों वाले इद्रदेव हाथों में दीप्तिमान् वज्र आदि आयुध धारण करते हैं॥४॥

इन्द्रो हर्यन्तमर्जुनं वज्रं शुक्रैरभीवृतम् ।
अपावृणोद्धरिभिरद्रिभिः सुतमुद्ना हरिभिराजत ॥५॥

इन्द्रदेव ने अभिषाला योग्य, शुभ, तेज़ से परिपूर्ण, दीप्तिमान् और पाषाण द्वारा निम्पादित सोम प्राप्त किया। (सोमरस पौंकर तृप्त हुए) इन्द्रदेव ने वज्र को धारण कर अच्चों द्वारा गमन कर अपहृत गौओं को विमुक्त किया॥५॥

सूक्त ४५

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – बृहती

आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः ।
मा त्वा के चिन्नि यमन्विं न पाशिनोऽति धन्वेव ताँ इहि ॥१॥

जैसे यात्री रेगिस्तान को शीघ्र ही (बिना रुके) पार कर जाते हैं, उसी प्रकार है इन्द्रदेव ! आनन्ददायक मोर पंखों के समान शैम युक्त घोड़ों (सात रंग युक्त सुन्दर किरणों के साथ मार्ग की रुकावटों को हटाते हुये आप आएँ । जाल फैलाने वाले आपको पथ में रुकावट पैदा न कर सके॥१॥

वृत्रखादो वलंरुजः पुरां दर्मो अपामजः ।
स्थाता रथस्य हर्योरभिस्वर इन्द्रो दृव्ह्या चिदारुजः ॥२॥

वे इन्द्रदेव वृत्रासुर का हनन करने वाले, राक्षसों के बल को विदीर्ण करने वाले, उनके नगरों को ध्वंस करने वाले, जल वृष्टि करने वाले घोड़ों से सज्जित रथ में विराजमान होकर शत्रुओं को पराजित करने वाले हैं॥२॥

गम्भीराँ उदधींरिव क्रतुं पुष्यसि गा इव ।
प्र सुगोपा यवसं धेनवो यथा ह्रदं कुल्या इवाशत ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! गम्भीर समुद्र को जल धाराओं में पुष्ट करने के समान आप याज्ञिक को इष्ट फल देकर पुष्ट करते हैं। जिस प्रकार उत्तम गोपालक अपनी गौओ को श्रेष्ठ पौष्टिक आहार देकर पुष्ट करता है, जैसे गौएँ घास खाती हैं, नदियाँ समुद्र में मिलती है, उसी प्रकार सोम को धाराएँ आपको पुष्ट करती हैं॥३॥

आ नस्तुजं रयिं भरांशं न प्रतिजानते ।
वृक्षं पक्वं फलमङ्कीव धूनुहीन्द्र सम्पारणं वसु ॥४॥

ॐ इन्द्रदेव जिस प्रकार पिता अपने ज्ञान सम्पन्न पुत्र को धन का भाग देता है, उसी प्रकार आप मुझे शत्रुओं को पराभूत करने वाला ऐश्वर्य प्रदान करें । जिस प्रकार मनुष्य अंकुश(लग्गी) द्वारा पके फल वाले वृक्ष को हिलाकर फल पाता हैं, उसी प्रकार आप हमें अभीप्सित धन प्रदान करें॥४॥

स्वयुरिन्द्र स्वराळसि स्मद्दिष्टिः स्वयशस्तरः ।
स वावृधान ओजसा पुरुष्टुत भवा नः सुश्रवस्तमः ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप धनवान् हैं । आप स्वयम तेज से युक्त हैं, सर्व नियन्ता और प्रभूत यश वाले हैं । हे बहुतों द्वारा स्तुत इन्द्रदेव ! आप बल से विकसित होकर हमारे निमित्त विपुल अन्न वाले हों॥५॥

सूक्त ४६

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्रः ।
देवता – इन्द्रः । छंद – त्रिष्टुप

युध्मस्य ते वृषभस्य स्वराज उग्रस्य यूनः स्थविरस्य घृष्वेः ।
अजूर्यतो वज्रिणो वीर्याणीन्द्र श्रुतस्य महतो महानि ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! आप उत्तम योद्धा, इष्ट-प्रदाता, धनों के स्वामी, शूरवीर, तरुण, स्थायी, प्रतिष्ठावान्, शत्रुओं के पराभवकर्ता, वज्रधारी तथा तीनों लोकों में प्रख्यात हैं। आप के वीरोचित कार्य भी महान् हैं॥१॥

महाँ असि महिष वृष्ण्येभिर्धनस्पृदुग्र सहमानो अन्यान् ।
एको विश्वस्य भुवनस्य राजा स योधया च क्षयया च जनान् ॥२॥

हे महान् उग्र इन्द्रदेव ! आप धनों से परिपूर्ण रहने वाले, अपने पराक्रम से शत्रुओं को पराभूत करने वाले और सम्पूर्ण लोकों के अधीश्वर हैं। आप शत्रुओं का विनाश करें और सत्यव्रती जनों को आश्रय प्रदान करें॥२॥

प्र मात्राभी रिरिचे रोचमानः प्र देवेभिर्विश्वतो अप्रतीतः ।
प्र मज्मना दिव इन्द्रः पृथिव्याः प्रोरोर्महो अन्तरिक्षादृजीषी ॥३॥

दीप्तिमान् और सब प्रकार से अपराजेय, सम पौने वाले इन्द्रदेव सम्पूर्ण परिमित पदार्थों में भी महान् हैं। सम्पूर्ण देवों के बल से बड़े हैं ।द्यावापृथिवीं से अधिक श्रेष्ठ हैं तथा व्यापक अन्तरिक्ष से भी अधिक उत्कृष्ट हैं॥३॥

उरुं गभीरं जनुषाभ्युग्रं विश्वव्यचसमवतं मतीनाम् ।
इन्द्रं सोमासः प्रदिवि सुतासः समुद्रं न स्रवत आ विशन्ति ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप महान् और गंभीर हैं, जन्म से अत्यन्त वीर हैं और विश्व में व्याप्त होने वाले हैं। आप स्तोताओं के रक्षक हैं । प्रकृष्ट, दीप्तिमान् अभिघुत सोम उसी प्रकार आप को प्राप्त होते हैं, जिस प्रकार दूर तक गमन करती हुई नदियाँ समुद्र को॥४॥

यं सोममिन्द्र पृथिवीद्यावा गर्भं न माता बिभृतस्त्वाया ।
तं ते हिन्वन्ति तमु ते मृजन्त्यध्वर्यवो वृषभ पातवा उ ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार माता अपने गर्भ को धारण करती है, उसी प्रकार द्यावा-पृथिबी आपकी अभिलाषा से सोम को धारण करती हैं। हैं इएमर्षक इन्द्रदेव ! अध्ययुंगण इस सोम को शुद्ध करके आपके पीने के लिए प्रेरित करते हैं॥५॥

सूक्त ४७

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

मरुत्वाँ इन्द्र वृषभो रणाय पिबा सोममनुष्वधं मदाय ।
आ सिञ्चस्व जठरे मध्व ऊर्मिं त्वं राजासि प्रदिवः सुतानाम् ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! मरुतों के सहयोग से आप जल की वर्षा करते हैं । हव्याटि युक्त सोम का पान कर हर्ष से प्रमुदित होते हुए आप युद्ध के लिए तत्पर हों । द्युलोक में विद्यमान दिव्य सोम के आप हीं स्वामी हैं॥१॥

सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान् ।
जहि शत्रूँरप मृधो नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः ॥२॥

मरुतों की सहायता से वृत्र का संहार करने वाले, देवताओं के मित्र, वौर, पराक्रमी है इन्द्रदेव ! याजकों द्वारा समर्पित इस सोमरस का पान करें हिंसक प्राणियों तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करके हमारे भय को दूर करें॥२॥

उत ऋतुभिर्ऋतुपाः पाहि सोममिन्द्र देवेभिः सखिभिः सुतं नः ।

याँ आभजो मरुतो ये त्वान्वहन्वृत्रमदधुस्तुभ्यमोजः ॥३॥

हे ऋतुपालक इन्द्रदेव ! अपने मित्ररूप देवों के साथ और मरुतों के साथ आप हमारे द्वारा अभिपुत सोम का पान करें । जिन मरुतों में आपकी सहायता की और आपका अनुगमन किया, उन्होंने ही युद्ध में आपको शक्ति को बढ़ाया; तब आपने वृत्र का हनन किया॥३॥

ये त्वाहिहत्ये मघवन्नवर्धन्ये शाम्बरे हरिवो ये गविष्टौ ।
ये त्वा नूनमनुमदन्ति विप्राः पिबेन्द्र सोमं सगणो मरुद्भिः ॥४॥

हरि संज्ञक अच्वों के स्वामी हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! जिन्होंने अहि नामक असुर को मारने, शम्बरासुर के वध के लिए आपको आगे बढ़ाया; जिन मेधावीं मरुद्गणों ने गाँ-प्राप्ति के युद्ध में आपको प्रमुदित किया, उन सभी के साथ आप सोम पान करें॥४॥

मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानमकवारिं दिव्यं शासमिन्द्रम् ।
विश्वासाहमवसे नूतनायोग्रं सहोदामिह तं हुवेम ॥५॥

मरुद्गणों की सहायता से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य ने वाले, दिव्यगुण-सम्पन्न, श्रेष्ठ शासक, वीर, पराक्रमी तथा शत्रुओं का विनाश करने वाले इन्द्रदेव का हम आवाहन करते हैं। वे हमें हर प्रकार से संरक्षण प्रदान करें॥५॥

ऋग्वेद - तृतीय मंडल

सूक्त ४८

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

सद्यो ह जातो वृषभः कनीनः प्रभर्तुमावदन्धसः सुतस्य ।
साधोः पिब प्रतिकामं यथा ते रसाशिरः प्रथमं सोम्यस्य ॥१॥

ये इन्द्रदेव उत्पन्न होते ही जल बरसाने वाले और रमणीय बन गये ।इन्होंने हविष्यान्न युक्त सोम-प्रदाताओं का रक्षण किया हे देव !सोमपान की अभिलाषा करने पर पहले आप दुग्ध मिश्रित सोमरस का पान करते हैं॥१॥

यज्जायथास्तदहरस्य कामेंऽशोः पीयूषमपिबो गिरिष्ठाम् ।
तं ते माता परि योषा जनित्री महः पितुर्दम आसिञ्चदग्रे ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! जिस दिन आप प्रकट हुए थे, उसी दिन तृषित होने पर आपने पर्यंतस्थ सोमलता के रस का पान किया था। आपकी तरुणी माता अदिति ने आपके महान् पिता के गृह में स्तनपान कराने से पूर्व आपके मुख में इसी सोमरस का सिंचन किया था॥२॥

उपस्थाय मातरमन्नमैट्ट तिग्ममपश्यदभि सोममूधः ।
प्रयावयन्नचरद्गृत्सो अन्यान्महानि चक्रे पुरुधप्रतीकः ॥३॥

इन इन्द्रदेव ने माता की गोद में जाकर पोषक आहार की याचना की। तब उन्होंने माता के स्तनों में दुग्ध रूपी दीप्तिमान् सोम को देखा । वृद्धि को प्राप्त करके वे अन्यान्य शत्रुओं को उनके स्थान से हटाने लगे । तदनन्तर विविध रूपों को धारण करके इन्द्रदेव ने महान् पराक्रम प्रदर्शित किया॥३॥

उग्रस्तुराषाळभिभूत्योजा यथावशं तन्वं चक्र एषः ।
त्वष्टारमिन्द्रो जनुषाभिभूयामुष्या सोममपिबच्चमूषु ॥४॥

ये इन्द्रदेव शत्रुओं के लिए उग्ररूप, उन्हें शीघ्रता से पराजित करने वाले और विविध बलों को धारण करने वाले हैं। उन्होंने इच्छा के अनुरूप शरीर को बनाया। उन्होंने अपनी सामर्थ्य से त्वष्टा नामक असुर का पराभव किया और पात्रों में रखा सोम चुपचाप पी लिया॥४॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥५॥

हम इस जीवन-संग्राम में अपने संरक्षण के लिए ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं, क्योंकि वे देव पवित्रता प्रदान करने वाले, देवमानवों का नेतृत्व करने वाले, म, स्तुतियों को ध्यानपूर्वक सुनने वाले, युद्धों में शत्रुओं का विनाश करने वाले और धनों को जीतने वाले हैं॥५॥

सूक्त ४९

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

शंसा महामिन्द्रं यस्मिन्विश्वा आ कृष्टयः सोमपाः काममव्यन् ।
यं सुक्रतुं धिषणे विभ्वतष्टं घनं वृत्राणां जनयन्त देवाः ॥१॥

हे स्तोताओं ! सोमपान करने वाले जिन इन्द्रदेव के पास समस्त प्रजाजन कामना पूर्ति के लिए जाते हैं; समस्त देवगण और द्यावा-पृथिवी भी जिन उत्तम कर्मा, रूपवान् और वृत्रों (पाप) के हन्ता इन्द्रदेव को प्रसन्न करते हैं; आप सभी उन्हीं महान् देव की स्तुति करें॥१॥

यं नु नकिः पृतनासु स्वराजं द्विता तरति नृतमं हरिष्ठाम् ।
इनतमः सत्वभिर्यो ह शूषैः पृथुज्रया अमिनादायुर्दस्योः ॥२॥

युद्धों में अपने तेज़ से दीप्तिमान् मनुष्यों के नियन्ता, हर संज्ञक अश्वों से योजित रथ में अधिष्ठित इन्द्रदेव में कोई भी कुटिल पार नहीं पा सकता। वे इन्द्रदेव सेनाओं के उत्तम स्वामी हैं। वे अपनी सत्यरूप सामर्थ्य से शत्रुओं को क्षत-विक्षत कर देते हैं॥२॥

सहावा पृत्सु तरणिर्नार्वा व्यानशी रोदसी मेहनावान् ।
भगो न कारे हव्यो मतीनां पितेव चारुः सुहवो वयोधाः ॥३॥

संग्राम में इन्द्रदेव अश्वों की तरह देवताओं के शत्रुओं का अतिक्रमण करते हैं। वे अपनी सामर्थ्य से द्यावा-पृथिवीं को व्याप्त करने वाले और भगदेव के समान अत्यन्त ऐश्वर्यवान् होने से आवाहन करने योग्य हैं। वे अन्नों के धारक होने से उत्तम आवाहन योग्य हैं। वे स्तुतिकर्ताओं के पिता के समान पालन करने वाले हैं॥३॥

धर्ता दिवो रजसस्पृष्ट ऊर्ध्वो रथो न वायुर्वसुभिर्नियुत्वान् ।
क्षपां वस्ता जनिता सूर्यस्य विभक्ता भागं धिषणेव वाजम् ॥४॥

वे इन्द्रदेव घुलोक और अन्तरिक्ष के धारक हैं । वे रथ के सदृश ऊर्ध्व गमनशील हैं । वे धनों और अश्वों से युक्त हैं। ये रात्रि के आचानकारी हैं और सूर्य के उत्पत्तिकर्ता हैं । वे याज्ञकों की स्तुति एवं कर्मफल के अनुसार, अन्नों का विभाग करने वाले हैं॥४॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥५॥

हम अन्न-प्राप्ति के अपने इस जीवन-संग्राम में ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं । वे इन्द्रदेव पवित्रता प्रदान करने वाले, मनुष्यों के नेतृत्वकर्ता और हमारी स्तुति को ध्यानपूर्वक सुनने वाले हैं। वे उम, वीर, युद्धों में शत्रुओं का हनन करने वाले और धनों के विजेता हैं॥५॥

ऋग्वेद - तृतीय मंडल

सूक्त ५०

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

इन्द्रः स्वाहा पिबतु यस्य सोम आगत्या तुम्रो वृषभो मरुत्वान् ।
ओरुव्यचाः पृणतामेभिरन्नैरास्य हविस्तन्वः काममृध्याः ॥१॥

जिनके लिए यह सोम हैं, वे इन्द्रदेव यज्ञ में भली प्रकार आहुति दिये गये सोम का पान करें। वे शत्रुओं को नष्ट करने वाले तथा मरुतों के साथ जल की वर्षा करने वाले हैं। अत्यन्त व्यापक यश-सम्पन्न इन्द्रदेव हमारे यज्ञ में आकर हविरूप अत्रों से तृप्त हों और हमारी हवियाँ उनके शरीर को प्रवृद्ध करें॥१॥

आ ते सपर्यू जवसे युनज्मि ययोरनु प्रदिवः श्रुष्टिमावः ।
इह त्वा धेयुर्हरयः सुशिप्र पिबा त्वस्य सुषुतस्य चारोः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आपके इस यज्ञ में शीघ्र आने के लिए उत्तम परिचर्या करने वाले अश्वों को रथ से योजित करते हैं, जिनसे आप हमारे संरक्षण के लिए आएँ । वें अश्व आपको हमारे यज्ञ के लिए धारण करें

। उत्तम शिरस्त्राण धारक है इन्द्रदेव ! आप भलींप्रकार इस अभियुत सोम का पान करें॥२॥

गोभिर्मिमिक्षुं दधिरे सुपारमिन्द्रं ज्यैष्ठ्याय धायसे गृणानाः ।
मन्दानः सोमं पपिवाँ ऋजीषिन्त्समस्मभ्यं पुरुधा गा इषण्य ॥३॥

स्तोताओं की समस्त कामनाओं को पूर्ण कर उनके दुःजों का निवारण करने वाले इन्द्रदेव के लिए गो दुग्धादि मिश्रित सोमरस समर्पित करते हैं। वे हमें श्रेष्ठतम पोषण प्रदान करें । हे सोमपायी इन्द्रदेव ! हर्ष से उल्लसित होकर आप सोम का पान करें और हमारे लिए विविध भाँति की गौओं (पोषक-शक्तियों) को प्रेरित करें॥३॥

इमं कामं मन्दया गोभिरश्वैश्चन्द्रवता राधसा पप्रथश्च ।
स्वर्यवो मतिभिस्तुभ्यं विप्रा इन्द्राय वाहः कुशिकासो अक्रन् ॥४॥

हे इन्द्रदेव गौं, अश्व और धन-ऐश्वर्य प्रदान करके आप हमारी कामनाओं को पूर्ण कों एवं प्रसिद्धि प्रदान करें स्वर्गादि सुख की अभिलाषा से मेधावी कुशक वंशजो ने विचारपूर्वक आपके लिए स्तोत्रों की रचना की हैं॥४॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम् ॥५॥

हम अन्न प्राप्ति के लिए किये जाने वाले अपने इस संग्राम में ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव को संरक्षण प्राप्ति के लिए बुलाते हैं। वे इद्रदेव पवित्रता प्रदान करने वाले, मनुष्यों के नियामक और हमारी स्तुति को सुनने

वाले हैं। वे उग्र, वीर, युद्धों में शत्रुओं का वध करने वाले और धनों के विजेता हैं॥५॥

ऋग्वेद - तृतीय मंडल

सूक्त ५१

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप, १-३ जगती, १०-१२ गायत्री

चर्षणीधृतं मघवानमुक्थ्यमिन्द्रं गिरो बृहतीरभ्यनूषत ।
वावृधानं पुरुहूतं सुवृक्तिभिरमर्त्यं जरमाणं दिवेदिवे ॥१॥

सभी मानवों के पोषक, ऐश्वर्यशाली, ख्यातियुक्त, वर्धमान, अमर तथा अनेकों स्तोत्रों से प्रतिदिन प्रशंसित होने वाले इन्द्रदेव की हम अनेक प्रकार से स्तुति करते हैं॥१॥

शतक्रतुमर्णवं शाकिनं नरं गिरो म इन्द्रमुप यन्ति विश्वतः ।
वाजसनिं पूर्भिदं तूर्णिमप्तुरं धामसाचमभिषाचं स्वर्विदम् ॥२॥

वे इन्द्रदेव शत (सैकड़ों) यज्ञ सम्पादक, जल से युक्त, सामर्थ्यवान् मरुतों के नियामक अन्न प्रदाता, शत्रु पुरों के भेदक, शीघ्र गमन करने वाले, जल के प्रेरक, तेजस्विता सम्पन्न शत्रुओं के पराभवकर्ता और स्वर्गीय सुख-प्रदाता हैं। उन इन्द्रदेव को हमारी स्तुतियों सब ओर से प्राप्त होती हैं॥२॥

आकरे वसोर्जरिता पनस्यतेऽनेहसः स्तुभ इन्द्रो दुवस्यति ।
विवस्वतः सदन आ हि पिप्रिये सत्रासाहमभिमातिहनं स्तुहि ॥३॥

धन-प्राप्ति के संग्राम में बेइदेव स्तोताओं द्वारा प्रशंसित होते हैं। मैं इन्द्रदेव निष्पाप स्तुतियों को स्वीकार करते हैं। वे यज्ञादि कर्म करने वालों के घर सोम युक्त हव्यादि सेवन कर अतिशय प्रसन्न होते हैं । हे स्त्रोताओ ! आप मरुतों के साथ शत्रुओं के पराभवकर्ता, अभिमानियों के संहारक इन्द्रदेव की स्तुति करें॥३॥

नृणामु त्वा नृतमं गीर्भिरुक्थैरभि प्र वीरमर्चता सबाधः ।
सं सहसे पुरुमायो जिहीते नमो अस्य प्रदिव एक ईशे ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप मनुष्यों के नियामक और वीर हैं। असुरों द्वारा संतप्त ऋत्विग्गण स्तुतियों और मंत्रों द्वारा आपको अर्चना करते हैं। विविध पराक़मों से सम्पन्न आप बल के लिए युद्ध में गमन करते हैं। आग आकाशीय सोम के एकमात्र स्वामी हैं। आपको नमस्कार हैं॥४॥

पूर्वीरस्य निष्षिधो मर्त्येषु पुरू वसूनि पृथिवी बिभर्ति ।
इन्द्राय द्याव ओषधीरुतापो रयिं रक्षन्ति जीरयो वनानि ॥५॥

अनेक मनुष्यों को इन्द्रदेव का अनुग्रह प्राप्त होता है । सर्व नियामक इन्द्रदेव के लिए पृथ्वी विविध धनों को धारण करती हैं । इन्द्रदेव को अनुज्ञा से ही सूर्यदेव सम्पूर्ण ओषधियो, जल, मनुष्यों और वनों की रक्षा करते हैं॥५॥

तुभ्यं ब्रह्माणि गिर इन्द्र तुभ्यं सत्रा दधिरे हरिवो जुषस्व ।
बोध्यापिरवसो नूतनस्य सखे वसो जरितृभ्यो वयो धाः ॥६॥

हरि संज्ञक अश्वों के स्वामी हैं इन्द्रदेव ! आपके लिए मन्त्रों और तोजों को सम्पूर्ण अत्विग्गण धारण करने हैं । मित्ररूप और सर्व निवासक इन्द्रदेव ! संरक्षण की प्राप्ति के लिए ये नुतन हवियाँ आपको प्रदान की गई हैं । आप इन्हें ज्ञाने और स्तोताओं को अन्न प्रदान करें॥६॥

इन्द्र मरुत्व इह पाहि सोमं यथा शार्याते अपिबः सुतस्य ।
तव प्रणीती तव शूर शर्मन्ना विवासन्ति कवयः सुयज्ञाः ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आपने मरुद्गणों के साथ मिलकर जिस प्रकार शार्यात (शर्यात् के पत्र के यज्ञ में पहुंच कर सोमरस का पान किया था, उसी प्रकार हमारे इस यज्ञ में उपस्थित होकर सोमास का पान करे । हे थोर ! यज्ञस्थल पर याजकगण हविष्यान्न समर्पित करते हुए आपकी सेवा करते हैं॥७॥

स वावशान इह पाहि सोमं मरुद्भिरिन्द्र सखिभिः सुतं नः ।
जातं यत्त्वा परि देवा अभूषन्महे भराय पुरुहूत विश्वे ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! सोम को कामना करते हुए आप मित्ररूप मरुतो के साथ हमारे इस यज्ञ में आभषुत सोम का पान करें । अनेकों द्वारा आवाहन किये जाने वाले है इन्द्रदेव ! आपके उत्पन्न होते ही समूर्ण देबों में आपको महा संग्राम के लिए नियुक्त-प्रयुक्त किया था॥८॥

अप्तूर्ये मरुत आपिरेषोऽमन्दन्निन्द्रमनु दातिवाराः ।
तेभिः साकं पिबतु वृत्रखादः सुतं सोमं दाशुषः स्वे सधस्थे ॥९॥

जल देने वाले मरुद्गण स्वामीरूप इन्द्रदेव को संग्राम में हर्षित करते हैं । वृत्र-संहारक इन्द्रदेव उन मरुद्गणों के साथ हबिदाता यजमान के गृह में अभिषुत सोम का पान करें॥९॥

इदं ह्यन्वोजसा सुतं राधानां पते ।
पिबा त्वस्य गिर्वणः ॥१०॥

हे ऐश्वर्यों के स्वामी, स्तुति योग्य इन्द्रदेव ! बलपूर्वक निकाले गये इस सोमरस का रुचिपूर्वक पान करें॥१०॥

यस्ते अनु स्वधामसत्सुते नि यच्छ तन्वम् ।
स त्वा ममत्तु सोम्यम् ॥११॥

हे सोमपान के योग्य इन्द्रदेव ! आपके शरीर के लिए सोम अन्न तुल्य हैं । यज्ञ में उपस्थित होकर आप इसके पान से आनन्दिन्न हों॥११॥

प्र ते अश्नोतु कुक्ष्योः प्रेन्द्र ब्रह्मणा शिरः ।
प्र बाहू शूर राधसे ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आपके दोनों पार्थो (कुक्षियों) में यह सम भती-भाँति रम ज्ञाय । स्तुति के प्रभाव से बह आपके समस्त शरीर में संचरित हो । हे वीर इन्द्रदेव ! ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए आपको भुजायें भी समर्थ हों॥१२॥

ऋग्वेद - तृतीय मंडल

सूक्त ५२

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र: ।
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप, १-४ गायत्री, ६ जगती

धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् ।
इन्द्र प्रातर्जुषस्व नः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! हम दही और सत्तू से मिश्रित पकाये हुए पुरोड़ाश की हवि को मन्त्रोच्चार के साथ समर्पित करते हैं, आप प्रातः इसे स्वीकार करें॥१॥

पुरोळाशं पचत्यं जुषस्वेन्द्रा गुरस्व च ।
तुभ्यं हव्यानि सिस्रते ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! भली प्रकार पाये गये इस पुरोडाश का सेवन करें। इसके सेवन के लिए पुरुषार्थ करें। यह हब्य रूप पुरोटाश आपके लिए समर्पित है॥२॥

पुरोळाशं च नो घसो जोषयासे गिरश्च नः ।
वधूयुरिव योषणाम् ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा प्रदत्त पुरोड़ाश का भक्षण करें । हमारी इन स्तुतियों का आप वैसे ही सेवन करें (स्वीकारें), जैसे पुरुष अपनी अर्धांगिनी पत्नी को स्वीकार करता हैं॥३॥

पुरोळाशं सनश्रुत प्रातःसावे जुषस्व नः ।
इन्द्र क्रतुर्हि ते बृहन् ॥४॥

हे प्रख्यान इन्द्रदेव ! प्रातः सवन में हमारे द्वारा प्रदत्त पुरोडाश का सेवन करें, जिससे आपके कर्म महान् हो॥४॥

माध्यंदिनस्य सवनस्य धानाः पुरोळाशमिन्द्र कृष्वेह चारुम् ।
प्र यत्स्तोता जरिता तूर्ण्यर्थो वृषायमाण उप गीर्भिरीट्टे ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! माध्यन्दिन सवन के समय हमारे द्वारा प्रदत्त भुने हुए जवादि धान्य और स्वाहुत हुए पुरोडाश का भक्षण करें । हे मेधावान् इन्द्रदेव ! आप ऋभुओं के साथ धन-धान्यों से सम्पन्न हैं । हम स्तुनि करते हुए आपके लिए हविष्यान्न समर्पित करते हैं॥५॥

तृतीये धानाः सवने पुरुष्टुत पुरोळाशमाहुतं मामहस्व नः ।
ऋभुमन्तं वाजवन्तं त्वा कवे प्रयस्वन्त उप शिक्षेम धीतिभिः ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी स्तुति बहुतों द्वारा की गई हैं । आप तीसरे मन में हमारे भुने हुए जनादि पुडाश का सेवन करें। आप धुओं, धन और पुत्रों से युक्त हैं। हवियों से युक्त लोगों से हम आपकी पूजा करते हैं॥६॥

पूषण्वते ते चकृमा करम्भं हरिवते हर्यश्वाय धानाः ।
अपूपमद्धि सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप पोषणकारी, दुःखहारी और हर संज्ञक अश्वारोहीं हैं। आपके निमित्त हमने दही मिश्रित सत्तू और भुने जवादि धान्य तैयार किये हैं। मरुद्गणों के साथ आप इस पुरोडाश आदि का भक्षण करें और सोमस का पान कों॥७॥

प्रति धाना भरत तूयमस्मै पुरोळाशं वीरतमाय नृणाम् ।
दिवेदिवे सदृशीरिन्द्र तुभ्यं वर्धन्तु त्वा सोमपेयाय धृष्णो ॥८॥

हे ऋत्विजों !इन्द्रदेव के लिए शीघ्र ही भुने जवादि धान्य (खौल) और परोड़ाश विपुल परिमाण में हैं, क्योंकि वे मनुष्यों के नेतृत्वकर्ताओं में सर्वोपम वीर हैं । हे शत्रुओं के पराभवकर्ता इन्द्रदेव ! हम सब एकत्रित होकर आपके निमित्त प्रतिदिन स्तुतियों करते हैं; वे स्तुतियाँ आपको सोमपान के लिए प्रेरित करे॥८॥

ऋग्वेद - तृतीय मंडल

सूक्त ५३

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्रः ।
देवता – इन्द्रः । छंद – त्रिष्टुप, १० , १६ जगती, १३ गायत्री, १२, २०, २२ अनुष्टुप, १८ वृहती

इन्द्रापर्वता बृहता रथेन वामीरिष आ वहतं सुवीराः ।
वीतं हव्यान्यध्वरेषु देवा वर्धेथां गीर्भिरिळया मदन्ता ॥१॥

हे इन्द्र और पर्वतदेव ! स्तुत्य, श्रेष्ठ सन्तान युक्त यजमान द्वारा समर्पित हविष्यान से हर्ष का अनुभव करने वाले, यज्ञ में हयि का भक्षण करने वाले आप हमें अन्न प्रदान करें एवं हमारे स्तोत्रों से यशस्वी हो॥१॥

तिष्ठा सु कं मघवन्मा परा गाः सोमस्य नु त्वा सुषुतस्य यक्षि ।
पितुर्न पुत्रः सिचमा रभे त इन्द्र स्वादिष्ठया गिरा शचीवः ॥२॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप हमारे पास कुछ समय तक ठहरें । हमारे यज्ञ से दूर न जाएँ । हम आपके निमित्त शीघ्र हीं अभिषुत सोम द्वारा यजन करते हैं । हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! जैसे पुत्र पिता का आश्रय ग्रहण करता है, वैसे हम मधुर स्तुतियों द्वारा आपका आश्रय ग्रहण करते हैं॥२॥

शंसावाध्वर्यो प्रति मे गृणीहीन्द्राय वाहः कृणवाव जुष्टम् ।
एदं बर्हिर्यजमानस्य सीदाथा च भूदुक्थमिन्द्राय शस्तम् ॥३॥

हे अध्वर्युगण ! हम इन्द्रदेव की स्तुति करेगें । आप हमें प्रोत्साहित करें । हम उनके लिए प्रीतिकर स्तो का गान करें । आप यजमान के इस कुश के आसन पर बैठें, जिससे इन्द्रदेव के लिए अक्थ वचन प्रशस्त हों॥३॥

जायेदस्तं मघवन्त्सेदु योनिस्तदित्त्वा युक्ता हरयो वहन्तु ।
यदा कदा च सुनवाम सोममग्निष्ट्वा दूतो धन्वात्यच्छ ॥४॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! स्त्री ही गृह होती है, वहीं पुरुष का आश्रय स्थान होती है । रथ से योजित अश्व आपको उसी (विश्रान्तिदायक) गृह में ले जाएँ । हम जब कभी सोम अभिषव करते हैं, तब हमारे द्वारा निवेदित सोम को दूतस्वरूप अग्निदेव सीधे आपके पास पहुँचायें॥४॥

परा याहि मघवन्ना च याहीन्द्र भ्रातरुभयत्रा ते अर्थम् ।
यत्रा रथस्य बृहतो निधानं विमोचनं वाजिनो रासभस्य ॥५॥

सबको पोषण प्रदान करने वाले, ऐश्वर्यवान् हे इन्द्रदेव ! आप यहाँ से दूर अपने गृह के समीप रहें अथवा हमारे इस यज्ञ में आएँ। दोनों ही जगह आपका प्रयोजन हैं। वहीं घर में आपकी स्त्री हैं और यहाँ सोम हैं । जहाँ आप अपने महान् रथ को रोकते हैं, वहीं हर्षध्वनि करने वाले अश्वों को विमुक्त करने हैं॥५॥

अपाः सोममस्तमिन्द्र प्र याहि कल्याणीर्जाया सुरणं गृहे ते ।
यत्रा रथस्य बृहतो निधानं विमोचनं वाजिनो दक्षिणावत् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! यहाँ सोमपान करें, अनन्तर घर जाये, क्योंकि आपके घर में कल्याणकर्जा स्त्री हैं और वहां मनोरम सुख है । आप जहाँ अपने रथ को रोकने हैं, वहीं अओं में विचरने के लिए विमुक्त करते है॥६॥

इमे भोजा अङ्गिरसो विरूपा दिवस्पुत्रासो असुरस्य वीराः ।
विश्वामित्राय ददतो मघानि सहस्रसावे प्र तिरन्त आयुः ॥७॥

यज्ञ में भोज्य पदार्थ समर्पित करने वाले अंगिरा बंशज विभिन्न रूपों में देखें जाते हैं। ये देबों में श्रेष्ठ वीर मरुद्गण हम विश्वामित्रों के लिए हजारों प्रकार के ऐश्वर्य प्रदान करें । हमारे धन-धान्य एवं आयु में वृद्धि करें॥७॥

रूपंरूपं मघवा बोभवीति मायाः कृण्वानस्तन्वं परि स्वाम् ।
त्रिर्यद्दिवः परि मुहूर्तमागात्स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावा ॥८॥

हम इन्द्रदेव के जिस स्वरूप का आवाहन करते हैं, वे उसी रूप के हो जाते हैं। अपनी माया से विविध रूप धारण करते हैं। वे ऋतु के अनुकूल सर्वदा सोम का पान करने वाले हैं। वे मंत्रों द्वारा बुलाये जाने पर तीनो सबनो में स्वर्गलोक से एक क्षण में हों आ जाते हैं॥८॥

महाँ ऋषिर्देवजा देवजूतोऽस्तभ्नात्सिन्धुमर्णवं नृचक्षाः ।
विश्वामित्रो यदवहत्सुदासमप्रियायत कुशिकेभिरिन्द्रः ॥९॥

अतिशय महान्, देवों में उत्पन्न एवं प्रेरित, सर्व द्रष्टा विश्वामित्र ऋषि ने जल से परिपूर्ण सिन्धु (नदी अथवा समुद्र) के वेग को अवरुद्ध किया। वहीं से वे सुदास राजा के यज्ञ में गये । तब कुशक वंशज्ञों ने इन्द्रदेव को प्रिय स्थान (यज्ञस्थलों में सम्मानित किया॥९॥

हंसा इव कृणुथ श्लोकमद्रिभिर्मदन्तो गीर्भिरध्वरे सुते सचा ।
देवेभिर्विप्रा ऋषयो नृचक्षसो वि पिबध्वं कुशिकाः सोम्यं मधु ॥१०॥

अतीन्द्रिय क्षमतासम्पन्न, मेधावान् मनुष्यों के संरक्षक हे कुशिको !आप सब हंसों के सदृश पक्ति में बैठकर स्तुति मंत्रों का उच्चारण करें, यज्ञ में पाषाण से सोमाभिषवण करें तथा सभी देवों के साथ सोमरस का पान करें॥१०॥

उप प्रेत कुशिकाश्चेतयध्वमश्वं राये प्र मुञ्चता सुदासः ।
राजा वृत्रं जङ्घनत्प्रागपागुदगथा यजाते वर आ पृथिव्याः ॥११॥

हे कुशिक वंशजों ! आप सब अश्व के समीप जाएं. अश्य को उत्साहित करे । राजा सुदास के अश्व कों ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए विमुक्त कर दें । देवराज इन्द्र ने पूर्व, पश्चिम और उत्तर प्रदेशों में शत्रुओं का हनन किया हैं। अब सुदास राजा पृथ्वी के उत्तम स्थान में यज्ञ कार्य सम्पादित करे॥११॥

य इमे रोदसी उभे अहमिन्द्रमतुष्टवम् ।
विश्वामित्रस्य रक्षति ब्रह्मेदं भारतं जनम् ॥१२॥

हे कुशिक वंशजो ! हम (विश्वामित्र) ने द्यावा-पृथिवी द्वारा इन्द्रदेव की स्तुति की । विश्वामित्र के वंशजों का यह स्तोत्र भरत-वंशजों की रक्षा करे॥१२॥

विश्वामित्रा अरासत ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे ।
करदिन्नः सुराधसः ॥१३॥

विश्वामित्र के वंशजों ने वज्रधारी इन्द्रदेव के लिए स्तोत्र विनिर्मित किये इन्द्रदेव हमें उत्तम धनों से युक्त करें॥१३॥

किं ते कृण्वन्ति कीकटेषु गावो नाशिरं दुह्रे न तपन्ति घर्मम् ।
आ नो भर प्रमगन्दस्य वेदो नैचाशाखं मघवन्रन्धया नः ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! अनार्य देश के कीटवासियों को गौएँ आपके लिए क्या करती हैं? आपके लिए न दुग्ध देती हैं और न यज्ञाग्नि को प्रदीप्त करती हैं। इन गौओं को यहाँ ले आएँ । धन शोषकों के धन को हमारे लिए ले आएँ। है ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! नीच वंश वालों को आप नियमित करें॥१४॥

ससर्परीरमतिं बाधमाना बृहन्मिमाय जमदग्निदत्ता ।
आ सूर्यस्य दुहिता ततान श्रवो देवेष्वमृतमजुर्यम् ॥१५॥

जमदग्नि के द्वारा प्रेरित, अज्ञान विनाशक, द्युलोक तक प्रवाहित वाणी द्युलोक में विपुल शब्दकारक होती है। सूर्य पुत्री (वह वाणी) सम्पूर्ण देवों को अमृतोषम पदार्थ और अक्षय अन्नादि प्रदान करती हैं॥१५॥

ससर्परीरभरत्तूयमेभ्योऽधि श्रवः पाञ्चजन्यासु कृष्टिषु ।
सा पक्ष्या नव्यमायुर्दधाना यां मे पलस्तिजमदग्नयो ददुः ॥१६॥

पलस्त, जमदग्नि आदि क्षयों ने जो उत्तम वचन कहे, वे नवीन अन्नों को प्रदान कराने वाले थे। पंच जनों मैं जो अन्नादि विद्यमान हैं, उनसे अधिक अन्नादि हमारे निमित्त शीघ्र प्रदान करें॥१६॥

स्थिरौ गावौ भवतां वीळुरक्षो मेषा वि वर्हि मा युगं वि शारि ।
इन्द्रः पातल्ये ददतां शरीतोररिष्टनेमे अभि नः सचस्व ॥१७॥

सुदास के यज्ञ में विश्वामित्र रथांगों की स्तुति करते हैं-योजित बैल स्थिर हों, रथ का अथवा सदृढ़ हो । रथ के दण्टु न टूटें। शकट न इटें । धुरी की गिरने वाली कोल को इन्द्रदेव ठीक कर दें । हे अबाधित रथे ! आप सदैव हमारे अनुकूल रहते हुए आगे बढ़े॥१७॥

बलं धेहि तनूषु नो बलमिन्द्रानळुत्सु नः ।
बलं तोकाय तनयाय जीवसे त्वं हि बलदा असि ॥१८॥

हे इन्द्रदेव ! हमारे शरीरों में बल स्थापित करें । हमारे बैल आदि पशुओं में बल स्थापित करें । हमारे पुत्र और पौत्रों में दीर्घ जीवन के लिए बल स्थापित करें, क्योंकि आप बालों को प्रदान करने वाले हैं॥१८॥

अभि व्ययस्व खदिरस्य सारमोजो धेहि स्पन्दने शिंशपायाम् ।
अक्ष वीळो वीळित वीळयस्व मा यामादस्मादव जीहिपो नः ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! खदिर काष्ट से विनिर्मित रथ के दण्ड को दृढ़ करें । रथ के स्पन्दनों में शीशम के कप्त से विनिर्मित रथ की धुरी और शकटादि में बल भरे । हे सुदृढ़ अक्ष ! हमारे द्वारा दृढ़ किये हुए आप और अधिक सुदृढ़ हों । वेग से गमन करते हुए आप हमें गिरा न दें॥१९॥

अयमस्मान्वनस्पतिर्मा च हा मा च रीरिषत् ।
स्वस्त्या गृहेभ्य आवसा आ विमोचनात् ॥२०॥

वनस्पति से विनिर्मित यह रथ में न गिराये, संताप न दें । हमारे घर पहुंचने तक यह हमारा मंगल करे और अश्त्रों के विमुक्त होने तक यह इमारौं रक्षा करे॥२०॥

इन्द्रोतिभिर्बहुलाभिर्नो अद्य याच्छ्रेष्ठाभिर्मघवञ्छूर जिन्व ।
यो नो द्वेष्ट्यधरः सस्पदीष्ट यमु द्विष्मस्तमु प्राणो जहातु ॥२१॥

हे शूरवीर और ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप विविध, श्रेप्ठ, संरक्षणकारी साधनों से हमारी रक्षा करें । हमारे शत्रुओं का विनाश कर हमें प्रसन्न करें । जो हमसे द्वेष करता है, उसका पतन करें । हम जिससे द्वेष करते हैं, उसके प्राणों का हरण करें॥२१॥

परशुं चिद्वि तपति शिम्बलं चिद्वि वृश्चति ।
उखा चिदिन्द्र येषन्ती प्रयस्ता फेनमस्यति ॥२२॥

हे इन्द्रदेव ! फरसे से वृक्ष के संतप्त होने के समान हमारे शत्रु संतप्त हों । शाल्मलि गुष्य के शाखा से गिरने के समान हमारे शत्रु के अंग

विच्छिन्न हों । पकाने के समय हांड़ी के फेन निकलने के समान हमारे हिंसक शत्रुओं के मुख से फेन निकालें॥२२॥

न सायकस्य चिकिते जनासो लोधं नयन्ति पशु मन्यमानाः ।
नावाजिनं वाजिना हासयन्ति न गर्दभं पुरो अश्वान्नयन्ति ॥२३॥

विश्वामित्र कहते हैं, वीर पुरुष बाणों के कष्ट को कुछ नहीं समझते । वे लोभी शत्रु को पशु मानकर ले जाने हैं। वे बलवानों से निर्बलों का उपहास नहीं कराते । गधों की तुलना अवों से नहीं करते॥२३॥

इम इन्द्र भरतस्य पुत्रा अपपित्वं चिकितुर्न प्रपित्वम् ।
हिन्वन्त्यश्वमरणं न नित्यं ज्यावाजं परि णयन्त्याजौ ॥२४॥

हे इन्द्रदेव ! ये भरत वंशज्ञ शत्रु को पृथक् करना जानते हैं, उनके साथ एक होकर रहना नहीं जानते । वे संग्राम में प्रेरित अव की भाँति धनुष को प्रत्यंचा को शक्ति प्रकट करते हैं॥२४॥

सूक्त ५४

ऋषि – प्रजापतिवैश्वामित्र:, प्रजापतिर्वाच्यो वा
देवता – विश्वेदेवा: । छंद – त्रिष्टुप

इमं महे विदथ्याय शूषं शश्वत्कृत्व ईड्याय प्र जभ्रुः ।
शृणोतु नो दम्येभिरनीकैः शृणोत्वग्निर्दिव्यैरजस्रः ॥१॥

स्त्रोतागण महान् यज्ञ के साधन रूप तथा स्तुति योग्य अग्निदेव के लिए इन उत्तम स्तोत्रों को उच्चारित करते हैं। वे अग्नदेव अपने स्थान में तेजोमयों किरणों से उद्दीप्त होकर हमारी स्तुति का श्रवण करें॥१॥

महि महे दिवे अर्चा पृथिव्यै कामो म इच्छञ्चरति प्रजानन् ।
ययोर्ह स्तोमे विदथेषु देवाः सपर्यवो मादयन्ते सचायोः ॥२॥

हे स्तोताओं ! यज्ञादि कार्यों में, जिन द्यावा-पृथिवी में, स्तोत्रों को सुनते हुए पूजाभिलाषी देवगण एकत्र एवं प्रसन्न होते हैं। उन महती द्यावा-पृथिवीं को सामर्थ्य को जानते हुए उनकी अर्चना करे । सम्पूर्ण भौगो की इच्छा से मेरा मन विचरणशील हैं॥२॥

युवोर्ऋतं रोदसी सत्यमस्तु महे षु णः सुविताय प्र भूतम् ।
इदं दिवे नमो अग्ने पृथिव्यै सपर्यामि प्रयसा यामि रत्नम् ॥३॥

सत्यव्रतों में अनुबन्धित हे द्यावा-पृथिवि ! अति पुरातन ग्रंषगणों ने आपके सत्य रहस्यों को ज्ञानकर स्तुति की हैं । युद्ध के लिए जाने वाले वीर-पुरुषों में भी आप दोनों की महत्ता को जानकर सर्वदा वन्दना की हैं॥३॥

उतो हि वां पूर्व्या आविविद्र ऋतावरी रोदसी सत्यवाचः ।
नरश्चिद्वां समिथे शूरसातौ ववन्दिरे पृथिवि वेविदानाः ॥४॥

हे सत्य धर्म वाली द्यावा-पृथिवि ! सत्यवतधारी सनातन ऋषियों ने आपसे हितकारों वांछित फल प्राप्त किया था। हे पृथिवि ! युद्ध क्षेत्र में जाने वाले वीर योद्धा आपको महिमा को जानते हुए आपको नमस्कार करते हैं॥४॥

को अद्धा वेद क इह प्र वोचद्देवाँ अच्छा पथ्या का समेति ।
दक्षश्र एषामवमा सदांसि परेषु या गुह्येषु व्रतेषु ॥५॥

कौन सा पथ देवों के अभिमुख पहुँचता हैं ? कौन इसे निश्चित रूप से जानता हैं कौन उसका वर्णन कर सकता है क्योंकि देवों के जो गुह्य और उच्च स्थान हैं, उनमें से जो निम्नतम स्थान हैं, वे ही दिखाई पड़ते हैं॥५॥

कविर्नृचक्षा अभि षीमचष्ट ऋतस्य योना विघृते मदन्ती ।
नाना चक्राते सदनं यथा वेः समानेन क्रतुना संविदाने ॥६॥

दूरदर्शी मनुष्यों के द्रष्टा सूर्यदेव इस द्यावा-पृथिवी को सब ओर से देखते हैं। रसवती, हर्ष प्रदात्री, समान कर्म में परस्पर संयुक्त यह

द्यावा-पृथिवीं पक्षियों के घोंसले बनाने के सदृश जल के गर्भस्थान अन्तरिक्ष में अपने लिए विविध स्थान बनाती हैं॥६॥

समान्या वियुते दूरेअन्ते ध्रुवे पदे तस्थतुर्जागरूके ।
उत स्वसारा युवती भवन्ती आदु ब्रुवाते मिथुनानि नाम ॥७॥

(गुरुत्वाकर्षण से) परस्पर जुड़े होने पर भी अलग-अलग रहने वाली द्यावा-पृथिवीं कभी भी क्षय को प्राप्त नहीं होतीं । अक्षय, अनंत अन्तरिक्ष में दोनों दो बहनों के समान एकरूप होकर रहती हैं। इस प्रकार ये सृष्टि क्रम को चला रही हैं॥७॥

विश्वेदेते जनिमा सं विविक्तो महो देवान्बिभ्रती न व्यथेते ।
एजद्ध्रुवं पत्यते विश्वमेकं चरत्पतत्रि विषुणं वि जातम् ॥८॥

ये द्यावा-पृथिवीं समस्त प्राणियों और वस्तुओं को पृथक्-पृथक् स्थान प्रदान करती हैं। ये महान् सूर्य एवं । इन्द्रादि देव को धारण करके भी व्यथित (कम्पिती नहीं होती हैं । स्थावर और जंगम समस्त प्राणियों को मात्र एक पृथ्वी पर ही आश्रय प्राप्त होता है ।पक्षी समूहों के विचरण के लिए द्यावा-पृथिवीं के मध्य का स्थान सुनिश्चित है॥८॥

सना पुराणमध्येम्यारान्महः पितुर्जनितुर्जामि तन्नः ।
देवासो यत्र पनितार एवैरुरौ पथि व्युते तस्थुरन्तः ॥९॥

हे द्यावा-स्थिवि ! आप महान् पित्तारूप पोषण कत्र और मातारूप उत्पन्न-क हैं । हम आपके सनातन और पुरातन इन सम्बन्धों को सर्वदा स्मरण करते हैं। आपके मध्य में स्तुति-अभिलाषी देवगण

विस्तीर्ण और प्रकाशित पथों में अपने वाहनों से युक्त होकर अवस्थित होते हैं॥९॥

इमं स्तोमं रोदसी प्र ब्रवीम्यृदूदराः शृणवन्नग्निजिह्वाः ।
मित्रः सम्राजो वरुणो युवान आदित्यासः कवयः पप्रथानाः ॥१०॥

हे द्यावा-पृथिव ! हम आपके स्तोत्रों का भली प्रकार उच्चारण करते हैं। सोम को उदर में धारण करने वाले, अग्नि रूप जिहा से सोम पान करने वाले, अत्यन्त तेजस्वी तरुण, मेधावान्, प्रख्यात कर्म वाले, मित्र, वरुण और आदित्य देव हमारी स्तुतियाँ सुनें॥१०॥

हिरण्यपाणिः सविता सुजिह्वस्त्रिरा दिवो विदथे पत्यमानः ।
देवेषु च सवितः श्लोकमश्रेरादस्मभ्यमा सुव सर्वतातिम् ॥११॥

स्वर्णिम ऐश्वर्य को दान के लिए हाथ में रखने वाले, उत्तम प्रेरणाएँ प्रदान करने वाले सवितादेव, यज्ञ के तीनों सवनों में आकाश में आते हैं ।वे देवों के बीच बैठकर हमारे स्तोत्रों को सुनें और हमें सम्पूर्ण इष्ट-फल प्रदान करे॥११॥

सुकृत्सुपाणिः स्ववाँ ऋतावा देवस्त्वष्टावसे तानि नो धात् ।
पूषण्वन्त ऋभवो मादयध्वमूर्ध्वग्रावाणो अध्वरमतष्ट ॥१२॥

कल्याणकारी कर्मवाले, मंगलमय हाथों वाले, धन-सम्पन्न, सत्यव्रतों वाले त्वष्टादेन हमें अभीष्ट फल प्रदान करें । हैं भुओं ! सोमाभिषव हेतु पाषाण धारक चिज्ञों ने यज्ञ किया हैं । अतएव आप पूषा के साथ उस सोम का पान करके हर्षित हों॥१२॥

विद्युद्रथा मरुत ऋष्टिमन्तो दिवो मर्या ऋतजाता अयासः ।
सरस्वती शृणवन्यज्ञियासो धाता रयिं सहवीरं तुरासः ॥१३॥

विद्युत् के समान देदीप्यमान रथ वाले, आयुध धारण करने वाले, तेजस्वी, शत्रु-विनाशक, यज्ञ से उत्पन्न होने वाले, वेगवान् तथा यजन योग्य मरुद्गण और देवी सरस्वती हमारी स्तुतियों का श्रवण करें । हे शीघ्र गमनशील मरुद्गणों ! हमें उत्तम वीर पुत्रों से युक्त ऐश्वर्य प्रदान करें॥१३॥

विष्णुं स्तोमासः पुरुदस्ममर्का भगस्येव कारिणो यामनि ग्मन् ।
उरुक्रमः ककुहो यस्य पूर्वीर्न मर्धन्ति युवतयो जनित्रीः ॥१४॥

सर्वदा तरुणी, सर्व-जनयत्री, विविध दिशाएँ जिन विष्णुदेव की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करती, वे विष्णुदेव बहुत पराक्रमी हैं। उन बहुकर्मा विष्णुदेव के पास यज्ञ में उच्चारित हमारे पूजनीय स्तोत्र उसी प्रकार पहुंचे, जैसे सभी कर्मनिष्ठ, धनवान् के पास पहुंचते हैं॥१४॥

इन्द्रो विश्वैर्वीर्यैः पत्यमान उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा ।
पुरंदरो वृत्रहा धृष्णुषेणः संगृभ्या न आ भरा भूरि पश्वः ॥१५॥

सम्पूर्ण सामर्थ्यों से युक्त वे इन्द्रदेव अपनी महत्ता से द्यावा-पृथिवी दोनों को परिपूर्ण कर देते हैं । शत्रु पुरियों के विध्वंसक वृत्रहन्ता, आक्रामक सेना युक्त वे पशुओं का संग्रह करके हमारे लिए विपुल वैभव प्रदान करें॥१५॥

नासत्या मे पितरा बन्धुपृच्छा सजात्यमश्विनोश्चारु नाम ।
युवं हि स्थो रयिदौ नो रयीणां दात्रं रक्षेथे अकवैरदब्धा ॥१६॥

असत्य से दूर रहने वाले है अश्विनीकुमारों ! आप दोनों पिता के समान हम साधकों की अभिलाषा को पूछ कर उन्हें पूर्ण करने वाले हैं । आप दोनों का जन्म से प्रचलित नाम अति सुन्दर है।आप दोनों अपार वैभन, धन ऐश्वर्य सें सम्पन्न हैं, हमें विपुल धन प्रदान करें। आप दोनों अविचलित रहकर हविदाता की रक्षा करें॥१६॥

महत्तद्वः कवयश्चारु नाम यद्ध देवा भवथ विश्व इन्द्रे ।
सख ऋभुभिः पुरुहूत प्रियेभिरिमां धियं सातये तक्षता नः ॥१७॥

हे देवो ! आपका यह नाम-यश अत्यन्त महान् और मनोहर है, जिसके कारण आप सब इन्द्रलोक में दिव्य स्थान पाते हैं। बहुतों द्वारा आवाहन किये जाने वाले है इन्द्रदेव ! अपने प्रिय भुओं के साथ आप सखाभाव रखते हैं। हमें धनादि लाभ प्रदान करने के लिए हमारी इन रस्तुतियों को उनके साथ स्वीकार करें॥१७॥

अर्यमा णो अदितिर्यज्ञियासोऽदब्धानि वरुणस्य व्रतानि ।
युयोत नो अनपत्यानि गन्तोः प्रजावान्नः पशुमाँ अस्तु गातुः ॥१८॥

अर्यमा, देवमाता अदिति, यजनीय देवगण और अविचल नियम-पालक वरुणदेव हमारी रक्षा करें । हमारे (जीवन) मार्गों से नि:सन्तान के योग को दूर करें और घर को सन्तानों और पशुओं से युक्त करें॥१८॥

देवानां दूतः पुरुध प्रसूतोऽनागान्नो वोचतु सर्वताता ।
शृणोतु नः पृथिवी द्यौरुतापः सूर्यो नक्षत्रैरुर्वन्तरिक्षम् ॥१९॥

विविध भाँति से प्रकट होने वाले, देवों के दूतरूप अग्निदेव हम निष्पाप लोगों को भली प्रकार उपदेश करें। पृश्नी, द्युलोक और जल, सूर्य-नधात्रों से पूर्ण अन्तरिक्ष हमारी स्तुतियाँ सुने॥१९॥

शृण्वन्तु नो वृषणः पर्वतासो ध्रुवक्षेमास इळया मदन्तः ।
आदित्यैर्नो अदितिः शृणोतु यच्छन्तु नो मरुतः शर्म भद्रम् ॥२०॥

जत-वृष्टि करके मनुष्य का कल्याण करने वाले, वनस्पति आदि से हर्षित करने वाले पर्वतदेय हमारी स्तुतियाँ सुनें । देवमाता अदिति, आदित्यों के साथ हमारी स्तुतियाँ सुने । मरुद्गण हमें कल्याणकारों सुख प्रदान करें॥२०॥

सदा सुगः पितुमाँ अस्तु पन्था मध्वा देवा ओषधीः सं पिपृक्त ।
भगो मे अग्ने सख्ये न मृध्या उद्रायो अश्यां सदनं पुरुक्षोः ॥२१॥

मारे मार्ग सर्वदा सुगम हों और अन्नों से युक्त हों । हे देवो ! हुमारी ओषधियों को मधुर रस से युक्त करें। हे अग्निदेव ! आपकी मित्रता में हमारा ऐश्वर्य विनष्ट न हों । हम आपके अनुभह से धनादि और अत्रों से परिपूर्ण गृह को प्राप्त करें॥२१॥

स्वदस्व हव्या समिषो दिदीह्यस्मद्यक्सं मिमीहि श्रवांसि ।
विश्वाँ अग्ने पृत्सु ताञ्जेषि शत्रूनहा विश्वा सुमना दीदिही नः ॥२२॥

हैं अग्ने !आप हुड्य पदार्थों का आस्वादन करें और हमें अत्रादि प्रदान करें। सभी अन्नों को हमारी और प्रेरित करें ।आप शत्रुओं को संग्राम में जीतें । उल्लसित मन से युक्त होकर आप सभी दिवसों को प्रकाशित करें॥२२॥

सूक्त ५५

ऋषि – प्रजापतिवैश्वामित्र:, प्रजापतिर्वाच्यो वा
देवता – विश्वेदेवा: । छंद – त्रिष्टुप

उषसः पूर्वा अध यद्व्यूषुर्महद्वि जज्ञे अक्षरं पदे गोः ।
व्रता देवानामुप नु प्रभूषन्महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१॥

उदयकाल में पूर्व उषा जब प्रकाशित होती है, तब अविनाशी सूर्यदेव आकाश में प्रकट होते हैं तभी यजमान यज्ञादि देवकर्म करते हुए देवों के समीप उपस्थित होते हैं सभी देवों की महान् शक्ति संयुक्त (एक ही है॥१॥

मो षू णो अत्र जुहुरन्त देवा मा पूर्वे अग्ने पितरः पदज्ञाः ।
पुराण्योः सद्मनोः केतुरन्तर्महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥२॥

हैं अग्निदेव ! यहाँ देवगण हमें हिंसित न करें । देवत्व पद को प्राप्त हमारे पूर्वज्ञ पितरगण भी हमारे लिए अनिष्ट रहित हों । यज्ञ के प्रकाशक पुरातन द्यावा-पृथिवीं के बीच उदीयमान महान् ज्योतिरूप सूर्यदेव प्रकाशित होते हैं। सभी देवताओं का महान् संयुक्त बल एक ही हैं॥२॥

वि मे पुरुत्रा पतयन्ति कामाः शम्यच्छा दीद्ये पूर्व्याणि ।
समिद्धे अग्नावृतमिद्वदेम महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥३॥

हे अग्नदेव ! हमारी नानाविध आकांक्षाएँ विभिन्न दिशाओं में गतिशील होती हैं। अग्निष्टोमादि यज्ञों में अग्नि के प्रचलित होने पर हम गुरातन स्तोत्रों को जाम करते हैं । अग्नि प्रज्वलित होने पर होम स्तात्रों का उच्चारण करेंगे। देवताओं का महान् पुरुषार्थ एक ही हैं॥३॥

समानो राजा विभृतः पुरुत्रा शये शयासु प्रयुतो वनानु ।
अन्या वत्सं भरति क्षेति माता महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥४॥

सर्वसाधारण के शासक, दीप्तिमान् अग्निदेव अनेक स्थानों में यज्ञार्थ प्रतिष्ठित होते हैं । वे यज्ञवेदी के ऊपर शयन करते हैं तथा अणि (काष्ठा के माध्यम से प्रकट होते हैं। माता-पिता रूप द्यावा-पृथिवी इन्हें धारण करते हैं, वृष्टि आदि द्वारा द्युलोक परिपुष्ट करते हैं तथा वसुधा उन्हें आश्रय प्रदान करती हैं, सभी देवों का महान् शक्ति । स्रोत एक ही है॥४॥

आक्षित्पूर्वास्वपरा अनूरुत्सद्यो जातासु तरुणीष्वन्तः ।
अन्तर्वतीः सुवते अप्रवीता महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥५॥

ये अग्निदेव अति प्राचीन और जीर्ण-शीर्ण वृक्षों में विद्यमान रहते हैं तथा जो पौधे नये-नये गे हैं, उनमें भी रहते हैं। इन वनस्पतियों में कोई भी स्थूल प्रजनन क्रिया नहीं करता, फिर भी वे अग्नि द्वारा गर्भ धारण करके फल । और फूलों को पैदा करती हैं. इन समस्त देव कार्यों का महान् बल एक ही है॥५॥

शयुः परस्तादध नु द्विमाताबन्धनश्चरति वत्स एकः ।
मित्रस्य ता वरुणस्य व्रतानि महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥६॥

पश्चिम में सोने (अस्त होने वाला, दो माताओं (उषा और द्युलोकों का यह शिशु (सूर्य) बिना किसी विघ्न बाधा के अन्तरिक्ष में अकेले ही विचरण करता है। ये सभी कार्य मित्र और वरुण देवों के हैं। सभी देवताओं की महान् शक्ति संयुक्त ही है॥६॥

द्विमाता होता विदथेषु सम्राळन्वग्रं चरति क्षेति बुध्नः ।
प्र रण्यानि रण्यवाचो भरन्ते महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥७॥

दोनों लोकों के निर्माता, यज्ञ के होता तथा यज्ञों के स्वामी अग्निदेव आकाश में सूर्यरूप में सबसे आगे विचरण करते हैं। ये सभी कर्मों के मूलभूत कारण के रूप में भूमि पर निवास करते हैं। स्तोताओं की वाणियों ऐसे देव का गुणगान करती हैं। समस्त देवताओं का महान् पराक्रम एक ही हैं॥७॥

शूरस्येव युध्यतो अन्तमस्य प्रतीचीनं ददृशे विश्वमायत् ।
अन्तर्मतिश्चरति निष्षिधं गोर्महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥८॥

युद्ध में पराक्रम दिखाने वाले, शूरवीर के समान ही तेजस्वी निदेव के समक्ष आने वाले सभी प्राणी पराइमुख नतमस्तक होते हुए दिखाई देते हैं। सबके द्वारा जानने योग्य अग्निदेव जल को धारण करने वाले आकाश में विचरण करते हैं। सभी देवताओं का महान् पराक्रम एक ही है॥८॥

नि वेवेति पलितो दूत आस्वन्तर्महाँश्चरति रोचनेन ।

वपूंषि बिभ्रदभि नो वि चष्टे महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥९॥

सभी प्राणियों के पालक और देवों के दूत अग्निदेव वनस्पतियों के मध्य संव्याप्त हैं। अपनी तेजस्विता में ये महिमा युक्त अग्निदेव इनके अन्दर विचरण करते हैं। जब वे नानाविध रूपों को धारण करते हैं, तभी ये हमें दिखाई देते हैं। समस्त देवों की महान् शक्ति एक (संयुक्त) ही हैं॥९॥

विष्णुर्गोपाः परमं पाति पाथः प्रिया धामान्यमृता दधानः ।
अग्निष्टा विश्वा भुवनानि वेद महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१०॥

अविनाशी, प्रिय, लोकों के धारणकर्ता और सर्वरक्षक विरासुदेव अपने मार्ग से परम धाम की रक्षा करते हैं। अग्निदेव उन सम्पूर्ण लोकों के ज्ञाता हैं । देवताओं को महान् विलक्षण शक्ति का स्रोत एक ही हैं॥१०॥

नाना चक्राते यम्या वपूंषि तयोरन्यद्रोचते कृष्णमन्यत् ।
श्यावी च यदरुषी च स्वसारौ महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥११॥

दिन-रात्रि रूपी दो जुड़वाँ बहिने नाना रूपों को धारण करती हैं ।इनमें एक तेजस्विनी और दूसरी कृष्णवर्णा हैं ।जो कृष्णवर्णा और प्रकाशयुक्त स्त्रियाँ हैं, वे दोनों परस्पर बहिनें हैं समस्त देवकार्यों का बल संयुक्त ही हैं॥११॥

माता च यत्र दुहिता च धेनू सबर्दुघे धापयेते समीची ।
ऋतस्य ते सदसीळे अन्तर्महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१२॥

(पृथ्वी-द्युलोक) ये दोनों सम्पूर्ण विश्व के उत्पादक, पोषक, तृप्तिदायक, अमृतमय पदार्थों के दाता नाथा सम्पूर्ण विश्व को अपना रस प्रदान करने वाले हैं सर्व उत्पादक होने से माता रूप तथा एक दूसरे से पोषक इस ग्रहण करने के कारण पुत्र-पुत्र रूप (द्यावा-पृथिवीं) की हम स्तुति करते हैं सभी देवताओं का महान् पराक्रम एक ही हैं॥१२॥

अन्यस्या वत्सं रिहती मिमाय कया भुवा नि दधे धेनुरूधः ।
ऋतस्य सा पयसापिन्वतेळा महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१३॥

दुसरे के वत्स (बड़े या शिशु क (प्रेम से) चाटने वाली, (प्रसन्नता शब्द करने वाली, धेनु (गाय-धारण करने वाली पृथ्वीं) अपने घनों में कहाँ से दूध भरती है ?(सूर्य से उत्पन्न मेघों को प्यार करने वाली धरती में पोषण शक्ति कहाँ से आती हैं ?) यह इला(पृथिवी) ऋज़ (यज्ञ) के दूध से सिंचित होती है, सभी दैवों की शक्ति एक ही हैं॥१३॥

पद्या वस्ते पुरुरूपा वपूंष्यूर्ध्वा तस्थौ त्र्यविं रेरिहाणा ।
ऋतस्य सद्म वि चरामि विद्वान्महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१४॥

विराट् पुरुष के पैरों में उत्पन्न होने वाली (पृश्न) विभिन्न रूपों को धारण करती है। तीनों लोकों (घु अन्तरिक्ष और पृथिवी) में प्रकाशित करने वाले सूर्य की किरणों को चाटते हुए ऊर्ध्वं गति पाती हैं । सत्यरूप सूर्यदेव के स्थान को जानते हुए हम उनकों वन्दना करते हैं । समस्त देवों का महान् बल एक ही है॥१४॥

पदे इव निहिते दस्मे अन्तस्तयोरन्यद्गुह्यमाविरन्यत् ।
सध्रीचीना पथ्या सा विषूची महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१५॥

सुन्दर रूप वाले दिन और रात्रि दोनो अन्तरिक्ष में गमन करते हैं। उनमें एक रात्रि कृष्णवर्णा होने से छिपी हुई रहती है और दूसरा, 'दिन' प्रकाशयुक्त होने से सभी को दृष्टिगोचर होता हैं। इन दोनों (दिन और रात्रि) का मार्ग (अन्तरिक्ष) एक होते हुए भी अलग-अलग विभाजित है । समस्त देवों का महान् बल संयुक्त हो हैं॥१५॥

आ धेनवो धुनयन्तामशिश्वीः सबर्दुघाः शशया अप्रदुग्धाः ।
नव्यानव्या युवतयो भवन्तीर्महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१६॥

शिशुओं से रहित, अमृत का दोहन करने वालों, तेजस्विता मुक्त, दोहन न की गई तरुणीं गौएँ (किरणें या दिशाये) प्रतिदिन नवीनता को धारण करके अमृत रस प्रदान करती हैं। समस्त देवों का महान् पुरुषार्थ एक ही हैं॥१६॥

यदन्यासु वृषभो रोरवीति सो अन्यस्मिन्यूथे नि दधाति रेतः ।
स हि क्षपावान्त्स भगः स राजा महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१७॥

जो वीर (तेजस्वी मेघ) किसी दिशा में गर्जन करता है, वह अन्य समूह में जाकर (वर्षा जल रूपों) अपने वीर्य का सिंचन करता है । इस प्रकार जल बरसाकर पृथ्वी का पालन करने और ऐश्वर्य प्रदान करने में वह सबके स्वामी के रूप में प्रतिष्ठित होता है। देवों का महान् बल एक ही हैं॥१७॥

वीरस्य नु स्वश्व्यं जनासः प्र नु वोचाम विदुरस्य देवाः ।
षोळ्हा युक्ताः पञ्चपञ्चा वहन्ति महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१८॥

हे मनुष्यों ! (इस) वीर (इन्द्र या आत्मशक्ति) के उत्तम पराक्रम की हम प्रशंसा करें, इनके इस पराक्रम को देवगण भी जानते हैं । ये छ; (षट् शुओं-षट् सम्पत्ती से युक्त है; (किन्तु पाँच पंच प्राण, पंचतत्त्व या पंच इन्द्रियों द्वारा इसका वहन किया जाता हैं । देवों का महान् पराक्रम संयुक्त ही हैं॥१८॥

देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः पुपोष प्रजाः पुरुधा जजान ।
इमा च विश्वा भुवनान्यस्य महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥१९॥

सबके उत्पादक अनेक रूपों से युक्त त्वष्टादेव अनेक प्रकार की प्रजाओं को उत्पन्न करते हैं। वहीं इन्हें परंपुष्ट भी करते हैं। ये सम्पूर्ण भुवन इन्हीं त्वष्टादेव के द्वारा रचे गये हैं। समस्त देवों की महान् शक्ति एक ही हैं॥१९॥

मही समैरच्चम्वा समीची उभे ते अस्य वसुना न्यृष्टे ।
शृण्वे वीरो विन्दमानो वसूनि महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥२०॥

परस्पर मिल-जुल कर चलने वाले चुलोक और पृथ्वी लोक इन्द्रदेव की महिमा से ही प्रेरित होकर गतिमान् होते हैं। वे दोनों ही लोक इन्द्रदेव के तेज से संव्याप्त हैं। ऐसे शूरवर इन्द्रदेव (कृपण) शत्रुओं के अनों को असपूर्वक प्राप्त करते हैं। समस्त देवों का महान् पराक्रम एक ही है॥२०॥

इमां च नः पृथिवीं विश्वधाया उप क्षेति हितमित्रो न राजा ।
पुरःसदः शर्मसदो न वीरा महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥२१॥

अपनी प्रजाओं के मित्र के समान हितैषी एक राजा जिस प्रकार सदैव अपनी प्रजा के समीप रहता है, उसी प्रकार इन्द्रदेव भी हम सबको धारण करने वाली पृथ्वी के समीप रहते हैं । इन इन्द्रदेव के सहयोगी वीर मरुद्गण सदैव आगे बढ़ने वाले तथा कल्याण करने वाले हैं। समस्त देवताओं का महान् बस एक ही है॥२१॥

निष्षिध्वरीस्त ओषधीरुतापो रयिं त इन्द्र पृथिवी बिभर्ति ।
सखायस्ते वामभाजः स्याम महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥२२॥

हे इन्द्रदेव ! जल और ओषधियाँ आपके ऐश्वर्य से हो समृद्धिशाली हैं । पृथ्वीं भी आपके ही ऐश्वर्य को धारण करती हैं। अतएव आपके मित्रस्वरूप हम, श्रेष्ठ ऐश्वर्य-सम्पन्न हों । समस्त देवों का महान् पराक्रम एक ही है॥२२॥

सूक्त ५६

ऋषि – प्रजापतिवैश्वामित्र:, प्रजापतिर्वाच्यो वा
देवता – विश्वेदेवा: । छंद – त्रिष्टुप

न ता मिनन्ति मायिनो न धीरा व्रता देवानां प्रथमा ध्रुवाणि ।
न रोदसी अद्रुहा वेद्याभिर्न पर्वता निनमे तस्थिवांसः ॥१॥

देवों के नियम प्रथम (शाश्वत अथवा सर्वोपर) एवं अविचल हैं । मायावी (कर्म कुशल व्यक्ति एवं बुद्धिमान् उन (प्रकृति के अनुशासन) को लण्डन नहीं करते। द्रोह रहित, ज्ञान-सम्पन्न द्यावा-पृथिवीं भी उनका उल्लंघन नहीं करते। स्थिर बनाये गये पर्वत कभी झुकते नहीं॥१॥

षड्भाराँ एको अचरन्बिभर्त्यृतं वर्षिष्ठमुप गाव आगुः ।
तिस्रो महीरुपरास्तस्थुरत्या गुहा द्वे निहिते दर्श्येका ॥२॥

एक स्थायी संवत्सर, वसन्त मीष्मादि छः ऋतुओं को वहन करता है । क्रत (सत्य अनुशासन) पर चलने वाले तथा अति श्रेष्ठ आदित्यात्मक संवत्सर का प्रभाव सूर्य किरणों से प्राप्त होता हैं । सतत गतिशील एवं विस्तृत तीनों तक क्रमशः उच्चतर स्थानों पर अवस्थित हैं। उनमें

स्वर्ग और अन्तरिक्ष सूक्ष्म रूप में (अदृश्य) हैं तथा एक पृथ्यों तक प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होता हैं॥२॥

त्रिपाजस्यो वृषभो विश्वरूप उत त्र्युधा पुरुध प्रजावान् ।
त्र्यनीकः पत्यते माहिनावान्त्स रेतोधा वृषभः शश्वतीनाम् ॥३॥

तीन प्रकार के बलों (सृजन, पोषण, परिवर्तन की क्षमताओं से युक्त, वीर, अनेक रूपों से युक्त, तीन (चु, अन्तरिक्ष, पृथ्वी) से युक्त, अनेक रंगों से युक्त, प्रज्ञावान्, तीनों लोकों में स्थित, शक्तिरूपी तीनों सेनाओं से सम्पन्न सूर्यदेव का उदय होता है । वे अपनी किरणों द्वारा समस्त ओषधियों में रेत का (प्राण ऊर्जा का संचार करते हैं॥३॥

अभीक आसां पदवीरबोध्यादित्यानामह्वे चारु नाम ।
आपश्चिदस्मा अरमन्त देवीः पृथग्व्रजन्तीः परि षीमवृञ्जन् ॥४॥

दिव्य जल (रस धाराओं) से सुसम्पन्न सूर्यदेव की आभा हौं इन समस्त वनस्पतियों के वैभव रूप में बिखरी हुई हैं । उन आदित्यगणों के सुन्दर नाम को हम गुणगान करते हैं । सूर्यदेव से सम्बद्ध रस ही वर्षा(जल, प्राण-पर्जन्य) के रूप में पृथ्वी को तृप्त (परिपुष्ट करते हैं॥४॥

त्री षधस्था सिन्धवस्त्रिः कवीनामुत त्रिमाता विदथेषु सम्राट् ।
ऋतावरीर्योषणास्तिस्रो अप्यास्त्रिरा दिवो विदथे पत्यमानाः ॥५॥

हे नदियों ! आप तीनों लोकों में निवास करती हैं तथा तीन प्रकार के देवगण भी इन तीनों लोकों में विद्यमान हैं । इन तीनों लोकों के निर्माता सूर्यदेव समस्त यज्ञीय प्रवाहों के स्वामी हैं । (पोषक रसों से

युक्त) इला, सरस्वती और भारती तीनों अन्तरिक्षीय देवियाँ (दिव्य रस धाराएँ द्युलोक द्वारा तीनों सदनों से युक्त इस यज्ञ में पधारें॥५॥

त्रिरा दिवः सवितर्वार्याणि दिवेदिव आ सुव त्रिर्नो अह्नः ।
त्रिधातु राय आ सुवा वसूनि भग त्रातर्धिषणे सातये धाः ॥६॥

हे सर्वप्रेरक सूर्यदेव ! आप दिव्यलोक से आकर प्रतिदिन तीन बार हमें श्रेष्ठ धन प्रदान करें । ऐश्वर्यवान् सबके रक्षक हे सूर्यदेव ! आप हमें दिवस के तीनों सवनों में तीनों प्रकार के धन प्रदान करें । हे बुद्धिमान् ! आप हमें धन प्राप्ति के योग्य बनायें॥६॥

त्रिरा दिवः सविता सोषवीति राजाना मित्रावरुणा सुपाणी ।
आपश्चिदस्य रोदसी चिदुर्वी रत्नं भिक्षन्त सवितुः सवाय ॥७॥

सर्वप्रेरक सूर्यदेव हमें द्युलोक से तीन प्रकार के धनों को प्रदान करें । तेजस्वी कल्याणकारी हाथों से युक्त मित्र, वरुण, अन्तरिक्ष और विशाल द्यावा-पृथिवी भी सूर्यदेव से धन-वैभव के वृद्धि की याचना करते हैं॥७॥

त्रिरुत्तमा दूणशा रोचनानि त्रयो राजन्त्यसुरस्य वीराः ।
ऋतावान इषिरा दूळभासस्त्रिरा दिवो विदथे सन्तु देवाः ॥८॥

क्षयरहित, सर्वजित् और द्युतिमान् तीन लोक (श्रेष्ठ स्थान) हैं। इन तीनों स्थानों में कलात्मक संवत्सर के अग्नि, वायु और सूर्य नामक तीन पुत्र शोभायमान होते हैं। सत्यनिष्ठ उत्साहवर्धक कार्यों में तत्पर और कभी न झुकने वाले देवगणों का दिन में तीन बार (तीनों सदनों में हमारे यज्ञ में आगमन हो॥८॥

सूक्त ५७

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र:
देवता – विश्वेदेवा: । छंद – त्रिष्टुप

प्र मे विविक्वाँ अविदन्मनीषां धेनुं चरन्तीं प्रयुतामगोपाम् ।
सद्यश्चिद्या दुदुहे भूरि धासेरिन्द्रस्तदग्निः पनितारो अस्याः ॥१॥

हे ज्ञानवान् इन्द्रदेव ! श्रेष्ठ संरक्षण के अभाव में इधर-उधर भटकती हुई गौ की भाँति (अज्ञानता के अन्धकार में भटकते हुए हम लोगों को आप संरक्षण प्रदान करें। अभीप्सित फल उपलब्ध कराने वाली हमारी (गौओं) स्तुतियों को इन्द्रदेव (अग्निदेव स्वीकार करें॥१॥

इन्द्रः सु पूषा वृषणा सुहस्ता दिवो न प्रीताः शशयं दुदुह्रे ।
विश्वे यदस्यां रणयन्त देवाः प्र वोऽत्र वसवः सुम्नमश्याम् ॥२॥

अभीप्सित फल प्रदान करके सबका मंगल करने वाले मित्रावरुण, इन्द्रदेव, पूषादेव तथा अन्य देवगण प्रसन्न होकर अन्तरिक्षीय मेघ का दोहन करते हैं। सर्वदेवगण हमारी स्तुतियों से आनन्द प्राप्त करते हैं । अतएव है वसुदेवो ! आपकी कृपादृष्टि से आपके द्वारा प्रदत्त सुखों को हम प्राप्त करें॥२॥

या जामयो वृष्ण इच्छन्ति शक्तिं नमस्यन्तीर्जानते गर्भमस्मिन् ।
अच्छा पुत्रं धेनवो वावशाना महश्चरन्ति बिभ्रतं वपूंषि ॥३॥

जो वनस्पतियों जल के रूप में प्राण-पर्जन्य की वर्षा करने वाले इन्द्रदेव की शक्ति का अनुदान चाहती हैं, विनम्रतापूर्वक उनकी सृजन-सामर्थ्य से परिचित हैं । फल की अभिलाषिणी औषधियों (वीहि, यव, नाँवारादि) विभिन्न फसलों के रूप में पुत्रों (प्राणियों के पास पहुँचती हैं॥३॥

अच्छा विवक्मि रोदसी सुमेके ग्राव्णो युजानो अध्वरे मनीषा ।
इमा उ ते मनवे भूरिवारा ऊर्ध्वा भवन्ति दर्शता यजत्राः ॥४॥

यज्ञ में सोमाभिषवण करने वाले पाषाणों को धारण करते हुए हम अपनी मननशील बुद्धि से विशिष्ट रूप से शोभायमान द्यावा-पृथिवीं की स्तुति करते हैं। हे अग्निदेव ! अनेकों के द्वारा वरण करने योग्य, कमनीय और पूजनीय आपकी ज्वालाएँ, मनुष्यों का कल्याण करने के लिए ऊर्ध्वगामी हों॥४॥

या ते जिह्वा मधुमती सुमेधा अग्ने देवेषूच्यत उरूची ।
तयेह विश्वाँ अवसे यजत्राना सादय पायया चा मधूनि ॥५॥

हे अग्निदेव ! आपकी मधुर, तेजस्वी, प्रज्ञा-सम्पन्न एवं सर्वत्र संव्याप्त ज्वालाएं देवों का आवाहन करने के लिए प्रेरित होती हैं। इन ज्वालाओं के द्वारा समस्त पूजनीय देवों को इस यज्ञ में प्रतिष्ठित करें । देवों को मधुर सोमरस समर्पित करके दुष्टों में हमारी रक्षा करें॥५॥

या ते अग्ने पर्वतस्येव धारासश्चन्ती पीपयद्देव चित्रा ।

तामस्मभ्यं प्रमतिं जातवेदो वसो रास्व सुमतिं विश्वजन्याम् ॥६॥

हे दिव्यता से सम्पन्न अग्निदेव !आपकी कुमार्ग से बचाने वाली बुद्धि मेघों की धारा की भाँति सवये तृप्त करतीं हैं है सबके आश्रयभूत जातवेदाअग्निदेव !आप हमें सारे संसार का हित करने वाली बुद्धि प्रदान करे॥६॥

सूक्त ५८

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र:
देवता – आश्विनौ । छंद – त्रिष्टुप

धेनुः प्रत्नस्य काम्यं दुहानान्तः पुत्रश्चरति दक्षिणायाः ।
आ द्योतनिं वहति शुभ्रयामोषसः स्तोमो अश्विनावजीगः ॥१॥

उषा अग्निदेव के योग्य प्रकृति रस का दोहन करती हैं ।उषा पुत्र सूर्य उनके मध्य विचरते हैं। शुभ दीप्ति । से देदीप्यमान सूर्यदेवप्रकाश फैलाते हुए जाते हैं ।इसी उपाकाल में अश्विनीकुमारों के लिए स्तो-गान होता हैं॥१॥

सुयुग्वहन्ति प्रति वामृतेनोर्ध्वा भवन्ति पितरेव मेधाः ।
जरेथामस्मद्वि पणेर्मनीषां युवोरवश्चकृमा यातमर्वाक् ॥२॥

हे अश्विनीकुमारो ! श्रेष्ठ रथ में भली प्रकार से योजित अव आपको इस यज्ञ में लाने के लिए तैयार है। माता-पिता के पास पहुँचने वाले बच्चे की भाँति यज्ञ आपके पास पहुँचे । कुटिल बुद्धि वालों को हमसे दूर करें । हम आप दोनों के लिए हविष्यान्न तैयार करते हैं। आप हमारे पास आयें॥२॥

सुयुग्भिरश्वैः सुवृता रथेन दस्राविमं शृणुतं श्लोकमद्रेः ।
किमङ्ग वां प्रत्यवर्तिं गमिष्ठाहुर्विप्रासो अश्विना पुराजाः ॥३॥

हे शत्रु-नाशक अश्विनीकुमारे ! सुन्दर चक्रों से युक्त, उत्तम अवों द्वारा योजित रथ पर सवार होकर यज्ञशाला में पधारें । सोम अभिवण कर्ताओं के द्वारा गाये जाने वाले स्तोत्रों का श्रवण करें । पुरातन काल से ही मेधावगण आपकी पुष्टि के लिए सौम के साथ ऐसी स्तुतियाँ करते रहे हैं॥३॥

आ मन्येथामा गतं कच्चिदेवैर्विश्वे जनासो अश्विना हवन्ते ।
इमा हि वां गोऋजीका मधूनि प्र मित्रासो न ददुरुस्रो अग्रे ॥४॥

हे अश्विनीकुमारों आप हमारी इन स्तुतियों को स्वीकार करें, अश्वों से युक्त होकर आएँ । स्तोतागण आपका आवाहन करते हैं । सूर्योदय के पूर्व दुग्ध मधुर मिश्रित सोम को ये मित्ररूप यजमान आपको निवेदित करते हैं॥४॥

तिरः पुरू चिदश्विना रजांस्याङ्गूषो वां मघवाना जनेषु ।
एह यातं पथिभिर्देवयानैर्दस्राविमे वां निधयो मधूनाम् ॥५॥

हे ऐश्वर्यवान् अश्विनीकुमारो ! बहुत से लोकों को पार करके आप यहाँ पधारें । सम्पूर्ण स्तोताजनों के स्तोत्र आपके निमित्त उच्चारित होते हैं । हे शत्रुओं के संहारक अश्विनकुमारो ! जिन मार्गों से देवगण गमन करते हैं, उन मार्गों से आप यहाँ आगमन करें, क्योंकि यह आपके निमित्त मधुर सोम के पात्र तैयार किये गये हैं॥५॥

पुराणमोकः सख्यं शिवं वां युवोर्नरा द्रविणं जह्नाव्याम् ।

पुनः कृण्वानाः सख्या शिवानि मध्वा मदेम सह नू समानाः ॥६॥

हे नेतृत्वकर्ता अश्विनीकुमारों ! आप दोनों की पुरातन मिजता सबके लिए कल्याणकारी हैं। आपका धन सर्बदा हमारी ओर प्रवाहमान रहे । आप दोनों की हितकारी मित्रता से हुम बारम्बार लाभान्वित हों। मथुर सोम के द्वारा हम आपको तृप्त करते हुए प्रसन्न हो रहे हैं॥६॥

अश्विना वायुना युवं सुदक्षा नियुद्भिश्च सजोषसा युवाना ।
नासत्या तिरोअह्न्यं जुषाणा सोमं पिबतमस्रिधा सुदानू ॥७॥

हे अश्विनीकुमारों ! आप उत्तम, सामर्थ्यवान्, नित्य-तरुण, असत्य विहीन और उत्तम फलप्रदाता हैं। आप वायु के सदृश वेगवान् अश्यों से युक्त होकर अबाध गति से आगमन करें । यहाँ आकर दिवस के अन्त में अभिपुत सोम का प्रीतिपूर्वक पान करें॥७॥

अश्विना परि वामिषः पुरूचीरीयुर्गीर्भिर्यतमाना अमृध्राः ।
रथो ह वामृतजा अद्रिजूतः परि द्यावापृथिवी याति सद्यः ॥८॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपको सब ओर से प्रचुर मात्रा में हविष्यान्न प्राप्त होता है । कर्म-कुशल ऋत्विग्गण सब दोषों से रहित होकर अपनी स्तुतियों के साथ आपकी सेवा करते हैं। सोम यन्ती कूटने वाले पाषाण के शब्द सुनकर आपका रथ द्यावा-पृथिवी का परिभ्रमण करते हुए (सोमपान के लिए यज्ञस्थल पर प्रकट होता हैं॥८॥

अश्विना मधुषुत्तमो युवाकुः सोमस्तं पातमा गतं दुरोणे ।
रथो ह वां भूरि वर्पः करिक्रत्सुतावतो निष्कृतमागमिष्ठः ॥९॥

हे अश्विनीकुमारों ! यह वांछित सोमरस अत्यन्त मधुर रसों से परिपूर्ण है, यहाँ आकर इसका पान करें । विपुल तेजस्विता विकीर्ण करता हुआ आपका रथ सोमाभिषवकारौ यजमान के घर बार-बार आगमन करता हैं॥९॥

सूक्त ५९

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र:
देवता – मित्र । छंद – त्रिष्टुप, ६-९ गायत्री

मित्रो जनान्यातयति ब्रुवाणो मित्रो दाधार पृथिवीमुत द्याम् ।
मित्रः कृष्टीरनिमिषाभि चष्टे मित्राय हव्यं घृतवज्जुहोत ॥१॥

मित्रदेव सभी मनुष्यों को कर्म में प्रवृत्त रहने की प्रेरणा प्रदान करते हैं । रस आदि उपलब्ध कराने वाले अपने श्रेष्ठ कर्मों से पृथ्वी और द्युलोक को धारण करते हैं । वे सभी सफर्मरत मनुष्यों के ऊपर निरन्तर अपने अनुग्रह की वर्षा करते हैं। हे मनुष्यो ! ऐसे मित्रदेव के निमित्त घृत युक्त हविष्यात्र प्रदान करें॥१॥

प्र स मित्र मर्तो अस्तु प्रयस्वान्यस्त आदित्य शिक्षति व्रतेन ।
न हन्यते न जीयते त्वोतो नैनमंहो अश्नोत्यन्तितो न दूरात् ॥२॥

हे आदित्य और मित्रदेव ! जो मनुष्य यज्ञादि कर्म से युक्त होकर आपके लिए हविष्यात्र समर्पित करता है; वह अन्नवान् होता है। आपके संरक्षण में रहकर वह न तो विनष्ट होता है और न ही जीवन में दुःख पाता है। पाप उसके निकट नहीं पहुँचता हैं, न ही दूर से प्रभावित कर पाता है॥२॥

अनमीवास इळया मदन्तो मितज्ञवो वरिमन्ना पृथिव्याः ।
आदित्यस्य व्रतमुपक्षियन्तो वयं मित्रस्य सुमतौ स्याम ॥३॥

हे मित्रदेव ! हम रोगों से मुक्त होकर तथा पोषक अन्नों से परिपुष्ट होकर हर्षित हो । हम पृथ्वी के विस्तीर्ण क्षेत्र में नमन भाव में निवास करें । हम आदित्यदेव के व्रत (नियम) के अधीन रहकर जीवनयापन करें । हमें मित्रदेव का अनुमह सदैव मिलता रहे॥३॥

अयं मित्रो नमस्यः सुशेवो राजा सुक्षत्रो अजनिष्ट वेधाः ।
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम ॥४॥

नमन योग्य उत्तम, सुलकारी, स्वामी, उत्तम बल से युक्त, सबके मित्रस्वरूप ये सूर्यदेव उदित हुए हैं। हम यजमान न पूजनीय सूर्यदेव का कल्याणकारी अनुग्रह सदैव प्राप्त करते रहें॥४॥

महाँ आदित्यो नमसोपसद्यो यातयज्जनो गृणते सुशेवः ।
तस्मा एतत्पन्यतमाय जुष्टमग्नौ मित्राय हविरा जुहोत ॥५॥

हे अत्विज्ञों ! आदित्यदेव अत्यन्त महानु हैं। वे समस्त मनुष्यों को कर्मों में प्रवृत्त करने वाले हैं। सभी लोग नमन करते हुए इनकी उपासना करें । ये स्तुति करने वालों को उत्तम सुखों से समृद्ध करते हैं। इन स्तुतियोग्य मित्रदेव के निमित्त अत्यन्त प्रीतियुक्त हवियाँ समर्पित करें॥५॥

मित्रस्य चर्षणीधृतोऽवो देवस्य सानसि ।
द्युम्नं चित्रश्रवस्तमम् ॥६॥

जल (दिव्य रस) की वर्षा के रूप में प्राप्त होने वाला सूर्यदेव का अनुग्रह सभी प्राणियों के जीवन की रक्षा करने वाला है । थे सभी के लिए उपयोगी धन-धान्य प्रदान करते हैं॥६॥

अभि यो महिना दिवं मित्रो बभूव सप्रथाः ।
अभि श्रवोभिः पृथिवीम् ॥७॥

जिन सूर्यदेव ने अपनी महिमा से द्युलोक को संव्याप्त किया हैं, उन्हीं कीर्तिमान् सूर्यदेव ने अपनी किरणों से जल बरसाकर अन्नादि से पृथ्वी से लाभान्वित किया॥७॥

मित्राय पञ्च येमिरे जना अभिष्टिशवसे ।
स देवान्विश्वान्बिभर्ति ॥८॥

शत्रुओं को पराभूत करने में सक्षम, सामर्थ्यशालौ मित्रदेव के लिये पाँच वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निषाद) आहुति प्रदान करते हैं। वे मिजदेव अपनी सामर्थ्य से सभी देवताओं को धारण करते हैं॥८॥

मित्रो देवेष्वायुषु जनाय वृक्तबर्हिषे ।
इष इष्टव्रता अकः ॥९॥

देवो और मनुष्यों के बीच मकार भावना रखने वाले साधकों के लिए मित्रदेव कल्याणकारी अन्नादि प्रदान करते हैं । जो व्रतों एवं नियमादि का पालन करते हैं, उन्हें ही यह अनुदान प्राप्त होते हैं॥९॥

सूक्त ६०

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र:
देवता –ऋभव:, ५-६ इन्द्र ऋभवश्च । छंद – जगती

इहेह वो मनसा बन्धुता नर उशिजो जग्मुरभि तानि वेदसा ।
याभिर्मायाभिः प्रतिजूतिवर्पसः सौधन्वना यज्ञियं भागमानश ॥१॥

शत्रुओं पर आक्रमण करके तेजस्विता प्रकट करने वाले, उत्तम धनुर्धारी, बीर हे अभुगण ! कुशलतापूर्ण कार्यों के द्वारा आप पूजनीय पद को उपलब्ध करते हैं । जो मनुष्य आपकी भाँति श्रेष्ठ कार्यों को विचारपूर्वक सम्पादित करते हैं, उन्हीं के साथ मन से आपको बन्धुभाव रहता हैं॥१॥

याभिः शचीभिश्चमसाँ अपिंशत यया धिया गामरिणीत चर्मणः ।
येन हरी मनसा निरतक्षत तेन देवत्वमृभवः समानश ॥२॥

हे भुगण ! जिस सामर्थ्य से आपने चमसो (यज्ञ पात्र) का सुन्दर विभाजन किया, जिस बुद्धि से आपने गों (पृश्वी या इन्द्रियों को चर्म (संरक्षक पत) से युक्त किया, जिस मानस में आपने इन्द्र (संगठक सत्ता) के अश्वों (पुरुषार्थ) को समर्थ बनाया; उन्हीं के कारण आपने देवत्व प्राप्त किया॥२॥

इन्द्रस्य सख्यमृभवः समानशुर्मनोर्नपातो अपसो दधन्विरे ।
सौधन्वनासो अमृतत्वमेरिरे विष्वी शमीभिः सुकृतः सुकृत्यया ॥३॥

मनुष्यों की अवनति को रोकने वाले, उत्तम कर्मों को करने वाले ऋभुर्देवों ने इन्द्रदेव की मित्रता को प्राप्त किया । सत्कर्मों के निर्वाहक तथा श्रेष्ठ धनुर्धारी ऋभुगणों ने अपनी सामर्थ्यों और सत्कर्मों के कारण सर्वत्र संव्याप्त होकर अमृतपद को उपलब्ध किया॥३॥

इन्द्रेण याथ सरथं सुते सचाँ अथो वशानां भवथा सह श्रिया ।
न वः प्रतिमै सुकृतानि वाघतः सौधन्वना ऋभवो वीर्याणि च ॥४॥

मेधावीं और श्रेष्ठ धनुर्धर हे ऋभुदेवों ! आप सोमयाग में इन्द्रदेव के साथ एक ही रथ पर बैठकर पहुँचते हैं । जो साधक आपके प्रति मित्रभाव रखते हैं, उनके समीप आप धन एवं ऐश्वर्य माथन लेकर गमन करते हैं। आपके श्रेष्ठ, पराक्रमी कार्यों की कोई उपमा नहीं दी जा सकती॥४॥

इन्द्र ऋभुभिर्वाजवद्भिः समुक्षितं सुतं सोममा वृषस्वा गभस्त्योः ।
धियेषितो मघवन्दाशुषो गृहे सौधन्वनेभिः सह मत्स्वा नृभिः ॥५॥

इन्द्रय ! बल-सम्पन्न ओं के साथ इस यज्ञ में आकर भली प्रकार अभियुक्त सोम को ग्रहण करें। आप अपनों सद्भावपूर्ण बुद्धि से प्रेरित होकर सुधन्वा के पुत्रों के साथ, दानशॉलो के घर जाकर आनन्दित हों॥५॥

इन्द्र ऋभुमान्वाजवान्मत्स्वेह नोऽस्मिन्त्सवने शच्या पुरुष्टुत ।
इमानि तुभ्यं स्वसराणि येमिरे व्रता देवानां मनुषश्च धर्मभिः ॥६॥

अनेकों द्वारा प्रशंसनीय हैं इन्द्रदेव ! आप सामर्थ्यशालीं भुओं और इन्द्राणों से युक्त होकर हमारे यज्ञ में-आकर आनन्दित हों । समस्त मनुष्यों और देनों के चैन कर्म आपके ही कारण नियमानुकूल गतिमान होते हैं॥६॥

इन्द्र ऋभुभिर्वाजिभिर्वाजयन्निह स्तोमं जरितुरुप याहि यज्ञियम् ।
शतं केतेभिरिषिरेभिरायवे सहस्रणीथो अध्वरस्य होमनि ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! स्तोताओं को स्तुतियों से प्रसन्न होकर आप उनके लिए प्रचुर अन्न उत्पन्न करें तथा बलशाली ऋभुओं के साथ इस यज्ञ में आगमन करें । मरुद्गण भी सौ गतिशील अत्रों के साथ यजमानों के द्वारा सत्कर्मों की वृद्धि के लिए सम्पन्न किये जा रहे इस श्रेष्ठ यज्ञ में पधारें॥७॥

सूक्त ६१

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र:
देवता – उषा: । छंद – त्रिष्टुप

उषो वाजेन वाजिनि प्रचेताः स्तोमं जुषस्व गृणतो मघोनि ।
पुराणी देवि युवतिः पुरंधिरनु व्रतं चरसि विश्ववारे ॥१॥

अन्नवती और ऐश्वर्यशालिनी हे उषा! आप प्रखर ज्ञानवती होकर स्तोताओं के स्तोत्रों का श्रवण करें । सबके द्वारा धारण करने योग्य हे उषा देवि ! आप पुरातन होकर भी तरुणी की तरह शोभायमान हों। आप विशेष बुद्धिमती होकर इस यज्ञ की और आगमन करें॥१॥

उषो देव्यमर्त्या वि भाहि चन्द्ररथा सूनृता ईरयन्ती ।
आ त्वा वहन्तु सुयमासो अश्वा हिरण्यवर्णां पृथुपाजसो ये ॥२॥

स्वर्णिम आभा वाले रथ पर विराजमान हे अमर उषा देवि ! आप प्रीति युक्त, सत्यरूप वचनों को उच्चारित करने वाली हैं। आप सूर्य किरणों द्वारा प्रकाशित हैं। विशेष बलशाली तथा सुवर्ण के समान तेजस्वी जो अश्व भली प्रकार रथ के साथ जोड़े जा सकते हैं, वे आपको लेकर यज्ञ स्थल पर पधारें॥२॥

उषः प्रतीची भुवनानि विश्वोर्ध्वा तिष्ठस्यमृतस्य केतुः ।
समानमर्थं चरणीयमाना चक्रमिव नव्यस्या ववृत्स्व ॥३॥

हे उषा देवि ! आप सम्पूर्ण भुवनों में भ्रमण करने वालों अमृत स्वरूपा हैं। सूर्यदेव के ध्वज के समान आकाश में उन्नत स्थान पर रहती हैं। है नित्य नूतन इषा देवि ! आप एक ही मार्ग में गमन करती हुई, आकाश में विचरणशील सूर्यदेव के चक्राङ्गों के समान पुनः-पुनः उसी मार्ग पर चलती रहें॥३॥

अव स्यूमेव चिन्वती मघोन्युषा याति स्वसरस्य पत्नी ।
स्वर्जनन्ती सुभगा सुदंसा आन्ताद्दिवः पप्रथ आ पृथिव्याः ॥४॥

जो ऐश्वर्यशालिनी उषा वस्त्र के समान ढकने वाली (शोभा बढ़ाने वाली) हैं । वे विस्तृत अन्धकार को दूर करती हुई सूर्य की पत्नी रूप में गमन करती हैं। वहीं सौभाग्यशालिनी और सत्कर्मशीता उषा द्युलोक और पृथ्वी के अन्तिम भाग तक प्रकाशित होती हैं॥४॥

अच्छा वो देवीमुषसं विभातीं प्र वो भरध्वं नमसा सुवृक्तिम् ।
ऊर्ध्वं मधुधा दिवि पाजो अश्रेत्प्र रोचना रुरुचे रण्वसंदृक् ॥५॥

हे स्तोताओं ! आप सबके सम्मुख प्रकाशित होने वाली उषादेवीं की नमनपूर्वक स्तुति करें । मधुरता को धारण करने वाली उषा द्युलोक के ऊँचे भाग पर अपनी तेजस्विता को स्थिर रखती हैं। रमणीय शोभा को धारण करने वाली तेजस्विनी उषा अत्यन्त दीप्तिमान् हो रही हैं॥५॥

ऋतावरी दिवो अर्कैरबोध्या रेवती रोदसी चित्रमस्थात् ।

आयतीमग्न उषसं विभातीं वाममेषि द्रविणं भिक्षमाणः ॥६॥

सत्यवती उषा द्युलोक से परे आगमन करने वाली किरणों द्वारा प्रकट होती हैं । ऐश्वर्यशालिनी उषा विविध रूपों से युक्त होकर द्युलोक और पृथिवी को संव्याप्त करती हैं। हैं अग्निदेव ! सम्मुख प्रकट होने वाली प्रकाशित उषा से वंय की कामना करने वाले आप, श्रेष्ठधनों को उपलब्ध करते हैं॥६॥

ऋतस्य बुध्न उषसामिषण्यन्वृषा मही रोदसी आ विवेश ।
मही मित्रस्य वरुणस्य माया चन्द्रेव भानुं वि दधे पुरुत्रा ॥७॥

वृष्टि के प्रेरक सूर्यदेव दिन के प्रारम्भ में आ, को प्रेरित करते हुए द्यावा-पृथिवीं के मध्य प्रकट होते हैं तब । उषा, मित्र और वरुणदेवों की प्रभारूपा होकर सुवर्ण के सदृश ही अपने प्रकाश को चारों ओर प्रसारित करती हैं॥७॥

सूक्त ६२

ऋषि – गाथिनो विश्वामित्र:। १६-१८ जमदग्निर्वा
देवता – १-३ इन्द्रवरुणौ, ४-६ बृहस्पति, ७-९ पूषा, १०-१२ सविता,
१३-१८ मित्र वरुणौ । छंद – गायत्री, १-३ त्रिष्टुप

इमा उ वां भृमयो मन्यमाना युवावते न तुज्या अभूवन् ।
क्व त्यदिन्द्रावरुणा यशो वां येन स्मा सिनं भरथः सखिभ्यः ॥१॥

हे इन्द्रावरुणों ! शत्रुओं को वश में करने वाले आपके गतिशील शस्त्र, सज्जनों की रक्षा करने वाले हों, थे किसी के द्वारा नष्ट न हों। आप जिससे अपने मित्रबन्धुओं को अन्नादि प्रदान करते हैं; वह यश, कहाँ स्थित है?॥१॥

अयमु वां पुरुतमो रयीयञ्छश्वत्तममवसे जोहवीति ।
सजोषाविन्द्रावरुणा मरुद्भिर्दिवा पृथिव्या शृणुतं हवं मे ॥२॥

हे द्रावरुण धनेश्वर्य की कामना करने वाले थे महान् यजमान अपने क्षणार्थ (अन्न के लिए आप दोनों । का बार-बार आवाहन करते हैं । है मरुद्गण ! द्यावापृथिवी के साथ मिलकर आप हमारे निवेदन को सुनें॥२॥

अस्मे तदिन्द्रावरुणा वसु ष्यादस्मे रयिर्मरुतः सर्ववीरः ।
अस्मान्वरूत्रीः शरणैरवन्त्वस्मान्होत्रा भारती दक्षिणाभिः ॥३॥

हे इन्द्र और वरुणदेवों ! हमें वांछित धन की प्राप्ति हों । हे मरुद्गण ! आप हमें सर्व समर्थ वीर पुत्रों से युक्त ऐश्वर्य प्रदान करें। सबके द्वारा वरण किये जाने योग्य देवशक्तियों शरण देकर हम लोगों को संरक्षण प्रदान करें। होत्रा और भारती (अग्नि पत्नी और सूर्य पली) सद्भावपूर्ण वाणी द्वारा हमारा पालन-पोषण करें॥३॥

बृहस्पते जुषस्व नो हव्यानि विश्वदेव्य ।
रास्व रत्नानि दाशुषे ॥४॥

परिपूर्ण दिव्यगुण सम्पन्न हे बृहस्पतिदेव ! आप हमारे द्वारा प्रदत्त पुरोट्टाश (हव्यों का सेवन करें । आप हविष्यान्न देने वाले दान-दाता यज्ञमानों को श्रेष्-उपयोगी धन प्रदान करें॥४॥

शुचिमर्कैर्बृहस्पतिमध्वरेषु नमस्यत ।
अनाम्योज आ चके ॥५॥

हे विजों ! आप यज्ञों में अर्चन-योग्य, स्तोत्र वाणी द्वारा पवित्र बृहस्पतिदेव को नमन करें । हम उनसे शत्रुओं द्वारा अपराजेय बल-पराक्रम की कामना करते हैं॥५॥

वृषभं चर्षणीनां विश्वरूपमदाभ्यम् ।
बृहस्पतिं वरेण्यम् ॥६॥

मनुष्यों के मनोरथों को पूर्ण करने वाले, अनेक रूपों को धारण करने में समर्थ, किसी के भी दबाव में न आने वाले तथा वरण करने योग्य बृहस्पतिदेव की हम सब पूजा-अर्चना करते हैं॥६॥

इयं ते पूषन्नाघृणे सुष्टुतिर्देव नव्यसी ।
अस्माभिस्तुभ्यं शस्यते ॥७॥

हे पूषादेव ! ये नूतन और श्रेष्ठ स्तोत्र आपके लिए हैं। इन स्तुतियों का पाठ हम आपके निमित ही करते हैं॥७॥

तां जुषस्व गिरं मम वाजयन्तीमवा धियम् ।
वधूयुरिव योषणाम् ॥८॥

हे पूषादेव ! आप हमारी इस श्रेष्ठ वाणी का श्रवण करें और सामर्थ्य प्राप्ति की अभिलाषा करने वाली इस बुद्धि की उसी प्रकार रक्षा करें, जिस प्रकार कोई पुरुष अपनी वधू (स्त्री) की सुरक्षा करता हैं॥८॥

यो विश्वाभि विपश्यति भुवना सं च पश्यति ।
स नः पूषाविता भुवत् ॥९॥

जो पूषादेव विश्व-बह्माण्ड को विशिष्ट रीति से देखते हैं-निरीक्षण करते हैं, वे हम लोगों के संरक्षक हौं॥९॥

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥१०॥

जो हमारी बुद्धियों को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करते हैं, उन सविता देवता के वरण करने योग्य, विकारनाशक, दिव्यता प्रदान करने वाले तेज़ को हम धारण करते हैं॥१०॥

देवस्य सवितुर्वयं वाजयन्तः पुरंध्या ।
भगस्य रातिमीमहे ॥११॥

जगत् के उत्पादक प्रेरक, प्रकाशक सवितादेव के तेज़ को धारण करते हुए, उनसे वैभव की कामना करते हैं॥११॥

देवं नरः सवितारं विप्रा यज्ञैः सुवृक्तिभिः ।
नमस्यन्ति धियेषिताः ॥१२॥

सद्बुद्धि से प्रेरित होकर, सत्कर्मशील ज्ञानीजन श्रेष्ठ रीति से स्तोत्रों द्वारा सवितादेव की स्तुति करते हैं॥१२॥

सोमो जिगाति गातुवित्देवानामेति निष्कृतम् ।
ऋतस्य योनिमासदम् ॥१३॥

सन्मागों के ज्ञाता सोमदेव सर्वत्र गतिशील हैं और देवों के लिए उपयुक्त श्रेष्ठ यज्ञस्थल पर पहुँचते हैं॥१३॥

सोमो अस्मभ्यं द्विपदे चतुष्पदे च पशवे ।
अनमीवा इषस्करत् ॥१४॥

सोमदेव हम स्तोताओं तथा द्विपदों और चतुष्पद-पशुओं के निमित्त आरोग्यप्रद श्रेष्ठअन्न प्रदान करें॥१४॥

अस्माकमायुर्वर्धयन्नभिमातीः सहमानः ।
सोमः सधस्थमासदत् ॥१५॥

सोमदेव हमारे रोगों को दूर करके आयु को बढ़ाएँ, शत्रुओं को पराभूत करते हुए यज्ञस्थल पर प्रतिष्ठित हों॥१५॥

आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् ।
मध्वा रजांसि सुक्रतू ॥१६॥

हे मित्रावरुणदेव ! आप हमारी गौओं (इन्द्रियों) को घृत (स्नेह) से युक्त करें और हमारे आवासो-लोकों को मी श्रेष्ठ र (भाव) से सिंचित करें॥१६॥

उरुशंसा नमोवृधा मह्ना दक्षस्य राजथः ।
द्राघिष्ठाभिः शुचिव्रता ॥१७॥

है पवित्रकर्मी मित्रावरुणों ! आप हविष्यान्न एवं स्तुतियों द्वारा पुष्ट होकर गरिमामय यश को प्राप्त करते हैं॥१७॥

गृणाना जमदग्निना योनावृतस्य सीदतम् ।
पातं सोममृतावृधा ॥१८॥

जमदग्नि ऋषि द्वारा स्तुत हे मित्रावरुणों ! आप यज्ञ स्थल पर विराजे और प्रस्तुत सोमरस का पान करें॥१८॥

॥इति तृतीय मण्डलं ॥